साहित्य अमृत

मासिक

वर्ष-२४ अंक-६ ❖ पृष्ठ ८८ | पौष-माघ, संवत्-२०७५ | जनवरी २०१९

संस्थापक संपादक

स्व. पं. विद्यानिवास मिश्र

❖

पूर्व संपादक

स्व. डॉ. लक्ष्मीमल्ल सिंघवी

❖

संपादक

त्रिलोकी नाथ चतुर्वेदी

❖

प्रबंध संपादक

श्यामसुंदर

❖

संयुक्त संपादक

डॉ. हेमंत कुकरेती

❖

कार्यालय

४/१९, आसफ अली रोड,
नई दिल्ली-११०००२

फोन : २३२८९७७७ • फैक्स : २३२५३२३३

इ-मेल : sahityaamrit@gmail.com

❖

शुल्क

एक अंक —₹ ३०

वार्षिक (व्यक्तियों के लिए)—₹ ३००

वार्षिक (संस्थाओं/पुस्तकालयों के लिए)—₹ ४००

विदेश में

एक अंक—चार यू.एस. डॉलर (US$4)

वार्षिक—पैंतालीस यू.एस. डॉलर (US$45)

❖

प्रकाशक, मुद्रक तथा स्वत्वाधिकारी श्यामसुंदर द्वारा
४/१९, आसफ अली रोड, नई दिल्ली-२
से प्रकाशित एवं ग्राफिक वर्ल्ड, १६८६,
कूचा दखनीराय, दरियागंज, नई दिल्ली-२ द्वारा मुद्रित।

❖

साहित्य अमृत में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार एवं दृष्टिकोण संबंधित लेखक के हैं। संपादक अथवा प्रकाशक का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है।

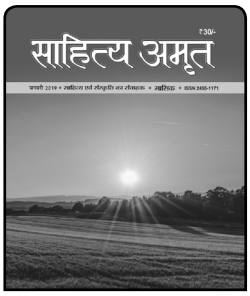

इस अंक में

संपादकीय

पाँच राज्यों के चुनाव और आगे? ४

प्रतिस्मृति

तुम्हारे शहर में/ *हिमांशु जोशी* ९

आलेख

इतिहास के अनन्यतम जीवन-शिल्पी/ *जानकीशरण वर्मा* ११

लोक के अप्रतिम गायक : राधावल्लभ चतुर्वेदी/ *नवनीत मिश्र* २०

प्रयागराज कुंभ-कथा/ *राजेंद्र त्रिपाठी 'रसराज'* २४

पं. विद्यानिवास मिश्र का संस्कृत काव्य विमर्श/ *अजयेंद्रनाथ त्रिवेदी* ३२

अनोखे देशभक्त-पितृभक्त नेताजी / *बद्रीनारायण तिवारी* ५१

छायावाद के सौ वर्ष/ *वेद प्रकाश* ६२

कहानी

मेरा मुझमें कुछ नहीं/ *रश्मि कुमार* १४

पहला खत/ *रवि शर्मा* २८

घिरती हुई साँझ/ *उषा यादव* ३६

नई जिंदगी/ *तारा मंगल* ५४

लघुकथा

ज्ञान का अहंकार/ पुष्पेश कुमार पुष्प २७

कविता

आम्रपालि परिणय/ *रमेश चंदर* २२

'Mee Too'/ उर्वशी अग्रवाल ३०

प्राणवायु के मंत्र/ *सुरेश उजाला* ३५

आया नया साल/ *अर्पणा शर्मा* ४२

मरु-हृदय पर एक दिन/ *चंद्रपाल मिश्र 'गगन'* ४९

नदी बहती रही/ *मालिनी गौतम* ५०

अब भोजन है, मनुहार नहीं/ *कुश चतुर्वेदी* ५३

जीवन को संगी बना लो/ *गौतम अरोड़ा 'सरस'* ६७

मूर्ख दौड़ते भ्रम में पड़कर/ बसंता ७९

स्मरण

हिमांशु जोशी : मेरे मित्र एवं मार्गदर्शक/ *प्रमोद कुमार अग्रवाल* २३

अंतर्बाह्य जगत् के कथाकार : हिमांशु जोशी/ *राहुल* ४१

राम झरोखे बैठ के

नए साल के इंतजार में/ *गोपाल चतुर्वेदी* ४७

संस्मरण

किसी से अब क्या कहना/ *कुमार अनिल* ६६

यात्रा-वृत्तांत

यात्रा श्रीनाथ धाम की/ *नरेंद्र 'मगन'* ७०

साहित्य का भारतीय परिपार्श्व

तलाश/ *नीलकंठ नादुरवर* ५६

साहित्य का विश्व परिपार्श्व

प्रथम प्रवृत्ति/ *एहसान मुसलिफ बजुर्ग* ६८

लोक-साहित्य

निराली है राजस्थान की संस्कृति/ *कृष्णचंद्र टवाणी* ७४

बाल-संसार

एक छोटा सा दीया/ *सुनीता* ७६

पाठकों की प्रतिक्रियाएँ ८०

वर्ग-पहेली ८२

साहित्यिक गतिविधियाँ ८३

संपादकीय

पाँच राज्यों के चुनाव और आगे ?

पाँच राज्यों मध्य प्रदेश, राजस्थान, छत्तीसगढ़, मिजोरम और तेलंगाना के विधानसभा चुनाव की ओर देश की आँखें लगी हुई थीं। राजस्थान और उत्तर प्रदेश के उपचुनावों में भाजपा की हार हुई थी, उससे कांग्रेस और अन्य विरोधी दलों का उत्साह बढ़ा। कर्नाटक में भी जेडी (सेकुलर) से मिलकर कांग्रेस ने सरकार बना ली। बड़ी पार्टी होते हुए भी राहुल गांधी ने कांग्रेस के मुख्यमंत्री सिद्धारमैया की बलि देकर पूर्व प्रधानमंत्री देवगौड़ा के पुत्र कुमारस्वामी को मुख्यमंत्री का पद सौंप दिया। मजे की बात यह है कि जेडी (सेकुलर) जन्म से ही कांग्रेस विरोधी पार्टी रही, किंतु पहले भी जब हम कर्नाटक में राज्यपाल थे, कांग्रेस ने जेडी (सेकुलर) के साथ उस समय सिद्धारमैया, जो जेडी (सेकुलर) में शुरू से ही थे उपमुख्यमंत्री बने, से रुष्ट होकर देवगौड़ा ने मुख्यमंत्री धर्मसिंह को सिद्धारमैया को मंत्रिमंडल से हटा देने को कहा और उन्हें पार्टी से निकाल दिया। पिछले चुनाव में भाजपा सबसे बड़ी पार्टी के रूप में उभरकर आई, पर भाजपा को सत्ता से दूर करने के लिए कर्नाटक में कांग्रेस ने कुमारस्वामी को मुख्यमंत्री बनाने की पहल की। उनकी ताजपोशी के समय विरोधी दलों के नेता एकत्र हुए और महागठबंधन बनाने की कोशिश शुरू हुई।

इसके पहले गुजरात के विधानसभा के चुनाव में भाजपा पिछड़ती दिख रही थी, परंतु कांग्रेस के मणिशंकर के नरेंद्र मोदी विषयक 'नीच हैं' वाले बयान ने गुजरात की जनता को आहत किया और चुनाव गुजरात की प्रतिष्ठा का सवाल बन गया। वास्तव में नरेंद्र मोदी और अमित शाह के अथक परिश्रम से भाजपा गुजरात में अपनी सरकार बना सकी। गुजरात के चुनाव के बाद कांग्रेस और विरोधी दलों का मनोबल बढ़ा। महागठबंधन की रणनीति से भाजपा और नरेंद्र मोदी को परास्त किया जा सकता है, यह विचार उनमें घर कर गया। हालाँकि विभिन्न विचारधारा तथा अपनी-अपनी महत्त्वाकांक्षाओं के कारण महागठबंधन का निर्माण अधर में रह गया। इस पृष्ठभूमि में हम देखें तो भाजपा निर्णय नहीं कर सकी कि बदलती हुई राजनैतिक परिस्थितियों में कैसी चुनावी रणनीति अपनाई जाए। आज भी कहा जाए तो प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी देश के सबसे बड़े और प्रभावी नेता हैं, ऐसी जनता की मान्यता है, किंतु २०१४ के आम चुनाव के बाद कि 'भाजपा और नरेंद्र मोदी अजेय हैं, इनका कोई विकल्प नहीं' इस सोच में परिवर्तन होने लगा।

करीब एक वर्ष पहले राहुल गांधी के अध्यक्ष बनने के बाद मृतप्राय: कांग्रेस संघटन अँगड़ाई लेने लगा। राहुल के देशव्यापी दौरों और भाषणों ने कांग्रेस में एक स्फूर्ति पैदा की। आंतरिक मतभेदों के होते हुए भी चुनाव होनेवाले राज्यों में कांग्रेस सक्रिय और सजग हुई तथा अपनी रणनीति बनाने लगी कि कैसे इन पाँच राज्यों में वह जीत हासिल कर सके, और हिंदी भाषा-भाषी तीन राज्यों में, जहाँ भाजपा काफी मजबूत रही है, भाजपा को सत्ता से दूर किया जा सके।

हम इस समय आँकड़ों के विश्लेषण में जाना आवश्यक नहीं समझते हैं। इस पर काफी विश्लेषण टी.वी. और समाचार-पत्रों में हुए हैं और हो भी रहे हैं। पूरा परिदृश्य धीरे-धीरे स्पष्ट होगा। यहाँ कुछ विशेष मुद्दों की चर्चा ही केवल करेंगे। २०१८ में पाँच राज्यों का चुनाव टी.वी. और मीडिया के कारण सचमुच २०१९ के आम चुनाव के सेमीफाइनल के रूप में प्रस्तुत किया गया। क्या नरेंद्र मोदी २०१४ की सफलता को दोहरा पाएँगे ? २०१४ में मोदी के नेतत्त्व में भाजपा अकेले पूर्ण बहुमत वाले दल के रूप में उभरकर आई और कांग्रेस को सताच्युत कर दिया। उत्तर प्रदेश की विधानसभा के चुनाव में भी कांग्रेस और समाजवादी दल के गठबंधन को धूल चाटनी पड़ी। नतीजे अच्छे आने लगे। नरेंद्र मोदी का जादू और करिश्मा भाजपा को विजय से विभूषित करेगा, क्योंकि टिना फैक्टर, यानी 'भाजपा और मोदी के अलावा कोई विकल्प नहीं' भाजपा जरूरत से ज्यादा आत्मविश्वास से ग्रस्त हो गई। उधर विपक्षी दल, जो नैराश्य में डूबे हुए थे, भाजपा के उत्तर प्रदेश और राजस्थान के उपचुनावों में हारने के कारण सोचने लगे कि मोदी को हराना संभव नहीं है और वे इसके रास्ते तथा राजनीति खोजने लगे, ताकि मोदी को परास्त किया जा सके। उनमें नया आत्मविश्वास पनपने लगा। उसके विपरीत भाजपा में आत्ममोह छाने लगा कि वह अपराजेय है।

यही नहीं, एक सोच उत्पन्न होने लगी कि भाजपा जो कर रही है, वह सही है। वह जमीनी हकीकत से दूर होने लगी। केंद्र में नहीं, किंतु राज्य सरकारों में भ्रष्टाचार और कदाचार के मामले सुर्खियों में आने लगे। वास्तव में २०१९ का चुनाव अमेरिका के प्रजीडेंशल चुनाव के नज़रिए से देखा जाने लगा है—मोदी बनाम राहुल। अगले चार-पाँच महीने यही चर्चा का विषय रहेगा। नरेंद्र मोदी की लोकप्रियता और विश्वसनीयता बरकरार है, यद्यपि हर प्रकार से उसे धूमिल करने की कोशिशें चल रही हैं। कांग्रेस बड़े स्तर पर इस दृष्टि से सोशल

मीडिया का उपयोग कर रही है। यदि भाजपा सत्ता में रहना चाहती है तो उसे सतर्क रहना पड़ेगा। लोकतंत्र की निर्भरता भी सर्वविदित है। देखा गया कि इन राज्यों में स्थानीय समस्याओं को राज्य सरकारों ने किस प्रकार सुलझाया है, कैसे जनता के अभाव और कष्ट दूर किए गए, इन पर जोर न देकर केंद्र और प्रधानमंत्री मोदी की क्या उपलब्धताएँ हैं, यह अधिक बखानते रहे। यह जनता को रास नहीं आया, क्योंकि वह आकलन कर रही थी कि राज्य सरकार और भाजपा के विधायकों ने उनकी रोजमर्रा की कठिनाइयों का क्या हल निकाला। जो भी कार्य सरकार द्वारा किए भी गए, उनका संप्रेषण ठीक से नहीं हो सका। जनता इससे संतुष्ट नहीं हुई।

पंद्रह वर्ष तक भाजपा इन राज्यों में सत्ता में रही, इसके कारण जनता ऊबी सी लगती थी। इसे एंटी इनकंबेंसी फैक्टर कहा जाता है, यानी जनता का उबाऊपन। वह नई नीतियाँ और नए चेहरे देखना चाहती थी, इस आशय में कि शायद परिवर्तन के बाद, नई राजव्यवस्था के बाद कुछ और अच्छा करके दिखाएगी। इस उबाऊपन की काट भाजपा नहीं कर सकी। वह मोदी के जादू पर ही केवल आश्रित रही। यह भी स्पष्ट हो गया कि इन राज्यों में किस प्रकार विधायकों और जनता के बीच का संपर्क टूट गया था। कार्यकर्ताओं को भी लगने लगा था कि सत्ता के गलियारों में उनका कोई महत्त्व नहीं है, उनकी अवहेलना हो रही है।

केंद्र सरकार ने प्रधानमंत्री मोदी के नेतृत्व में बहुत अच्छे कार्य किए, जिससे आम जनता को सुविधा प्राप्त हुई। मोदी की नीतियों ने स्थायी एसेटस जुटाए हैं, इसका लाभ धीरे-धीरे ही होगा। मोदी ने प्रयास किया है कि नागरिक सशक्त हों, आत्मनिर्भर हों और भविष्य में सम्मान के साथ जीवनयापन कर सकें। उन्होंने अन्य दलों की तरह जनता को लॉलीपाप और झुनझुना नहीं पकड़ाए, बिना सोचे कि कल क्या होगा। इस संदेश को प्रभावी तरीके से राज्य सरकारें जनता तक नहीं पहुँचा सकीं। जन-साधारण का सोचना स्वाभाविक है कि हमको अभी क्या लाभ हुआ, कितनी हमारी आमदनी बढ़ी है, इस परस्पर विरोधी दृष्टिकोण में सामंजस्य बैठाना और जनता को आश्वस्त करने में राज्य सरकारें नाकामयाब रहीं। केवल चुनाव के समय जाकर प्रचार और रथ-यात्राओं से जनता का विश्वास प्राप्त नहीं किया जा सकता है।

यह ध्यान देने की बात है कि इन तीनों राज्यों में चाहे गाँव हो अथवा छोटे कस्बे, हर क्षेत्र में भाजपा की हार हुई है। शहरों और कस्बों में भाजपा के वर्चस्व में ह्रास क्यों हुआ, यह गंभीरता से सोचने की बात है। यही नहीं, अलग-अलग वर्ग जो भाजपा से जुड़े थे, जैसे राजस्थान में राजपूत, जाट, गुर्जर, मीणा और अनुसूचित जातियाँ, जो इनकी समर्थक रही हैं, भाजपा को छोड़ दूसरे खेमे में चले गए। भाजपा को सदैव गौरव था कि अनुसूचित जातियों और जनजातियों के सबसे अधिक प्रतिनिधि उसके रहे हैं। इस परिदृश्य में बदलाव आया। इसका एक बड़ा कारण खेती और कृषकों की स्थिति रही है। उन्हें ऐसा लगा कि उनके प्रति भाजपा उदासीन है। जमीनी हकीकत और भावनाएँ क्यों बदल रही हैं, भाजपा इनको समझने में असफल रही। मुसलिम वोटों की संभावना तो पहले से ही नहीं थी। भाजपा के जो परंपरागत समर्थक रहे हैं, वे भी बहुत कुछ उदासीन हो गए।

जनजातियों और अनुसूचित जातियों के संरक्षण में जो कानून बना था, उसकी एक धारा को सर्वोच्च न्यायालय ने निरस्त कर दिया, और आदेश दिया कि गिरफ्तारी के पहले शिकायत की सरसरी जाँच की जाए। संविधान के अंतर्गत शिकायती और जिसके विरुद्ध शिकायत की गई है, दोनों के मानव अधिकार हैं। गिरफ्तारी के प्रावधान को हटाने की बात नहीं थी, केवल तुरंत गिरफ्तारी में सावधानी बरतने का सवाल था। अतएव त्वरित गिरफ्तारी के प्रावधान को एक वर्ग के दवाब में बहाल कर देने से तथाकथित उच्च जातिवालों में नैराश्य फैल गया। वे कहने लगे कि हमारी तो कोई गिनती ही नहीं है भाजपा की नजरों में। मध्य प्रदेश, राजस्थान में इसका काफी विरोध हुआ, भाजपा को सबक सिखाने के लिए तथा वोट काटने के लिए प्रत्याशी खड़े किए गए, नतीजा यह हुआ कि यद्यपि इस वर्ग के अधिक मतदाताओं ने भाजपा को फिर भी समर्थन दिया, किंतु बहुत से वोट डालने गए ही नहीं। और जो कुछ गए, उन्होंने नोटा, 'यानी किसी को नहीं' वाला रास्ता अपनाया। मध्य प्रदेश में नोटा की संख्या इस बात की गवाह है।

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के मुखिया सरसंघसंचालक श्री मोहनराव भागवत को इस बात का संभवत: आभास हो गया था कि नोटावाले मतदाताओं की संख्या बढ़ने का डर है। उन्होंने अपील की थी कि मतदाता स्पष्ट मत दें, नोटा का सहारा न लें। पर तब तक बहुत देर हो चुकी थी। यही नहीं, मुख्यमंत्री शिवराज सिंह चौहान के चुनौती भरे बयान कि 'कौन माई का लाल है जो' ने वातावरण और खराब कर दिया। नतीजा यह हुआ कि मध्य प्रदेश में यद्यपि भाजपा ने कांग्रेस को अच्छी टक्कर दी, फिर भी जीत कांग्रेस की ही हुई। कुछ विधायकों की यदि कमी भी रही तो भाजपा को सत्ता से दूर करने के लिए मायावती और अखिलेश ने स्वयं समर्थन देने की घोषणा कर दी। जहाँ तक राजस्थान का सवाल है, अधिकतर पूर्वानुमान यही था कि भाजपा वसुंधरा राजे के नेतृत्व में नहीं जीत सकेगी। हुआ भी यही। अमित शाह के अथक प्रयास के बावजूद भाजपा अपनी सरकार न बचा सकी। मुख्यमंत्री बसुंधरा राजे के अहं, विधायकों में आपसी फूट और कार्यकर्ताओं तथा विधायकों के बीच गहरी खाई भी पैदा हो गई थी। इस प्रकार त्रियाहठ और सत्तामद प्राय: एक जहरीला मिश्रण पैदा कर देता है। राजस्थान में भाजपा के अध्यक्ष की नियुक्ति के बारे में मुख्यमंत्री भाजपा का आलाकमान से टकराव सर्वविदित है। भाजपा कितना भी इसे नकारे, जनता को विश्वास नहीं होता।

यदि भाजपा का अध्यक्ष हाँ में हाँ मिलानेवाले की जगह राठौर जैसा नया चेहरा सामने आता तो भाजपा का पराभव रुक सकता था। वैसे भी राजस्थान में जनता ने पुरानी परिपाटी, एक बार भाजपा तो दूसरी बार कांग्रेस को निभाया है। आशा थी कि शायद राजस्थान में जीत न हो, पर मध्य प्रदेश और छत्तीसगढ़ में किसी प्रकार, कम मतों से ही सही, भाजपा चौथी बार सरकार बना सकेगी। भाजपा एक छोटे राज्य छत्तीसगढ़ में भी जनता की नब्ज न पहचान सकी। भ्रष्टाचार के आरोपों

का भी उचित जवाब सरकार न दे सकी। अनुमान है कि भाजपा अगले आम चुनाव में ६५ सीटों पर, जिन पर भाजपा का कब्जा है, उनमें से ४४ सीटें भाजपा के हाथ से जा सकती हैं। कुछ पर्यवेक्षकों का मत है कि भाजपा की आक्रामक रणनीति प्रभावी है, किंतु वह जहाँ सत्ता में है, उसमें बचाव की रणनीति का अभाव है। गुजरात और कर्नाटक दोनों के संदर्भ में यह चर्चा होती है। भाजपा को इस पर भी शायद गंभीरता से विचार करना होगा। लोकतंत्र में जहाँ सरकारें बदलती हैं, वहाँ किस भाँति जनता जनार्दन से समुचित तादात्म्य स्थापित किया जा सकता है, ताकि भाजपा अपनी विचारसरणी के आधार पर सत्ता जनहित, केवल दल या व्यक्ति के हित में नहीं, में अपनी नीतियों का कार्यान्वयन कर सके।

अपने पहले बजट में मोदी की सरकार ने मिनिमम गवर्नमेंट और मैक्सिमम गवर्नेंस, 'छोटी सरकार, किंतु प्रभावी सुशासन' का नारा दिया था। नरेंद्र मोदी ने यह बार-बार दोहराया था। पर लोगों का कहना है कि यह वादा पूरा नहीं हुआ। यहाँ तात्पर्य छोटी मिनिस्टरी का नहीं है, बल्कि सरकारी कार्यप्रणाली कहाँ तक अधिक सरल, सुबोध और सुलभ जनता के लिए होगी। यहाँ आशंका है, जो प्रधानमंत्री ने कहा और जो जमीनी वास्तविकता है, उसमें बड़ा अंतर रहा। जनता की नाराजी सरकार के इरादों से अथवा मंतव्य से नहीं। गुस्सा है कि क्या कहा गया और क्या हुआ, और जो हुआ भी, वह कितना हुआ, उसकी गुणवत्ता क्या है। नीति परिवर्तन और कार्यक्रम के अनुपालन में 'मैक्सिमम गवर्नमेंट' या बृहत् सरकार एक अवरोधक बन जाती है। निष्पक्ष तटस्थ लोगों का कहना है कि इंस्पेक्टर राज में बढ़ोतरी हो रही है, कमी नहीं, जैसी कि अपेक्षा थी। कार्यप्रणाली अब अधिक पेचीदा हो गई है। यहाँ इसके ज्यादा विवेचन में जाना संभव नहीं है।

एक टिप्पणीकार ने तीन हिंदी भाषी प्रदेशों में भाजपा की हार को हिंदुइज्म की जीत और हिंदुत्व की हार की संज्ञा दी है। इससे सहमत नहीं हुआ जा सकता है, यह सोच ही भ्रमपूर्ण है। ये दोनों यदि पर्यायवाची नहीं तो एक-दूसरे के पूरक हैं। हिंदुइज्म से मुख्यतः मंतव्य आस्थाओं से है और उसके अंतर्गत सर्वोच्च शक्ति की आराधना शैलियों से है। हिंदुत्व के सरोकार प्रधानतया सामाजिक और सांस्कृतिक हैं। यह भ्रांतिपूर्ण कथन है कि हिंदीभाषी तीन राज्यों में, जहाँ ८० से लेकर ९० प्रतिशत हिंदू हैं, हिंदुत्व को नकार दिया है। हिंदू बहुमत के कारण ही भारत पाकिस्तान की तरह एक थियोलॉजिकल या धार्मिक राज्य नहीं है। हालाँकि दुर्भाग्य से देश का बँटवारा अंतत धार्मिक आधार पर हुआ। सर्वधर्म की भावना हिंदुइज्म और हिंदुत्व दोनों की भित्ति है, उसकी परंपरा है। उनमें उदारता, सौहार्द और भ्रातृ भावना निहित है। इसलिए आवश्यक है कि पार्टी के स्तर पर और शासन के स्तर पर अतिवादियों, अनुचित नारे लगानेवालों तथा किसी-न-किसी बहाने कानून को अपने हाथ में लेनेवालों को अनुशासित किया जाए। यह माँग प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी की 'सबका विकास, सबका साथ' का अभिन्न अंग है।

गुजरात, कर्नाटक तथा गुजरात के चुनाव के बाद कांग्रेस की राजनीति का एक हिस्सा रहा है कि राहुल गांधी की छवि को हिंदू के तौर पर प्रचारित किया जाए। २०१४ में कांग्रेस की हार के बाद ए.के. एंटोनी ने अपनी रिपोर्ट में कहा था कि जनसाधारण को लगता है कि कांग्रेस अल्पसंख्यकों, खासकर मुसलमानों की ओर अधिक झुकी हुई है, इसलिए राहुल गांधी को जनेऊधारी शिवभक्त हिंदू के रूप में प्रस्तुत किया जा रहा है। राहुल का कौल दत्तात्रेय गोत्र है, यह बताया गया। मंदिर-मंदिर जाने का नाटक भी वोटबैंक की राजनीति का भाग हो गया है, किंतु वास्तविकता जनता से छिपी हुई नहीं है।

यह भी प्रयास है कि किसी प्रकार यदि गठबंधन हो तो राहुल २०१९ में इस गठबंधन का मुख्य चेहरा दिखें, उन्हीं का नेतृत्व रहे और अगर ऐसे गठबंधन को कहीं सफलता मिल जाए तो वे प्रधानमंत्री बनें। परंतु इसमें बहुत रुकावटें हैं, पता नहीं गठबंधन बन सकेगा या नहीं। तेलुगू देशम के मुख्यमंत्री और ममता एक फेडरल गठबंधन के पक्ष में हैं, जिसमें न भाजपा हो और न कांग्रेस। अभी जब करुणानिधि की मूर्ति के अनावरण के बाद डी.एम.के. अध्यक्ष एम.के. स्टालिन ने राहुल गांधी का नाम महागठबंधन के नेता के लिए उपयुक्त बताया और प्रस्तावित किया तो तुरंत तृणामूल कांग्रेस, आर.जे.डी., नेशनल कांग्रेस पार्टी, अखिलेश की समाजवादी पार्टी आदि कई दलों ने इस सुझाव का विरोध किया। जिनसे उम्मीद रही महागठबंधन में शामिल होने की, उनका कहना है कि यह निश्चय चुनाव के बाद हो सकता है। विभिन्न विचारधारा के महत्त्वाकांक्षी दलों को एकजुट रखना और बनाए रखना आसान नहीं। कई दलों ने स्पष्ट कहा भी है कि वे राहुल गांधी की राजनैतिक परिपक्वता के प्रति आश्वस्त नहीं हैं। दूसरी ओर सोनिया गांधी ने एक और चाल चली है। कहा गया कि अनुभव और नए खून दोनों का लाभ कांग्रेस चाहती है, अतएव राजस्थान में गहलौत और मध्य प्रदेश में कमलनाथ को मुख्यमंत्री बनाया जा रहा है। सचिन पायलट के उपमुख्यमंत्री और मध्य प्रदेश में सिंधिया को उचित उत्तरदायित्व सौंपा गया है। सच्चाई यह है कि कोई अन्य युवा नेता प्रधानीमंत्री के पद का दावेदार न बन सके। यह जरूरी है कि राहुल गांधी की पूरी पकड़ कांग्रेस ऑर्गनाइजेशन पर हो और जब तक यह स्थिति संगठन में न आए, कोई दूसरा प्रतिद्वंद्वी पैदा न हो सके। यदि सत्ता मिले तो वह रहे गांधी परिवार में ही रहे। इस पूरी प्रक्रिया पर लोकतांत्रिक मुलम्मा चढ़ाने का प्रयत्न किया गया कि विधायकों ने मुख्यमंत्री चुनने का दायित्व कांग्रेस अध्यक्ष को दिया। पर दिल्ली अभी तो दूर ही मालूम होती है।

मिजोरम में कांग्रेस बुरी तरह हारी है। उसके मुख्यमंत्री ने दो सीटों से चुनाव लड़ा, पर दोनों जगह हार गया। इस तरह उत्तर-पूर्व में कांग्रेस कहीं भी सत्ता में नहीं है। एक सीट भाजपा ने जीती। पाँचवें राज्य तेलंगाना में तेलुगू देशम के मुख्यमंत्री चंद्रशेखर राव बहुमत से जीते। कांग्रेस और चंद्रबाबू नायडू का गठबंधन असफल रहा।

सर्वोच्च न्यायालय और मानहानि

१२ जनवरी, २०१८ में जो अप्रत्याशित प्रेस कॉन्फ्रेंस सर्वोच्च

न्यायालय के न्यायाधीश (अब निवर्तमान) जस्टिस चेलमेश्वर के बँगले में हुई थी, उसमें जस्टिस चेलमेश्वर के अतिरित जस्टिस जोसेफ कुरियन, जस्टिस लेन्कूर तथा जस्टिस रंजन गोगोई थे, जो अब सर्वोच्च न्यायालय के प्रधान न्यायाधीश हैं। उन्होंने उस समय के चीफ जस्टिस दीपक मिश्रा के महत्त्वपूर्ण मुकदमे को सुनने के लिए ऐसी पीठ बनाने की प्रक्रिया की आलोचना की, जहाँ महत्त्वपूर्ण मुकदमे कनिष्ठ-वरिष्ठ न्यायाधीशों की अवहेलना कर न्यायाधीशों की बेंचों को दिए जाएँ और उन्होंने माना कि मास्टर ऑफ रोल्स का अधिकार यद्यपि प्रधान न्यायाधीश का है, मुकदमों का वितरण आपसी विचार-विमर्श के द्वारा होना चाहिए। उन्होंने अपने अजूबा कदम की पुष्टि में यहाँ तक कहा कि यह प्रजातंत्र के लिए खतरा है। उन्होंने प्रधान न्यायाधीश जस्टिस दीपक मिश्रा से बातचीत की, किंतु कोई संतोषजनक हल नहीं निकला, वैसे हमारी मान्यता तो है कि सभी इन उच्च पदों पर जो नियुक्त हुए हैं, वे अपनी योग्यता और निष्पक्षता के आधार पर हुए हैं।

सर्वोच्च न्यायालय के जज बनने के बाद वरिष्ठ और कनिष्ठ जजों का भेद बेमानी है। जनता की अपेक्षा यही है कि सर्वोच्च न्यायालय से निष्पक्ष निर्णय कानून के अनुसार मिलें। इस विषय पर काफी विवाद रहा। इस स्तंभ में इस विषय पर भी काफी चर्चा रही है, अतएव उस पुरानी पृष्ठभूमि में जाने की आवश्यकता नहीं है। जस्टिस चेलमेश्वर एवं ज. जोसेफ कुरियन सेवा से निवृत्त हो गए हैं। जस्टिस लेन्कूर का शीघ्र ही कार्यकाल समाप्त होनेवाला है और अब प्रधान न्यायाधीश रंजन गोगोई हैं, अतएव यह मामला सुलझ जाना चाहिए। जनता सर्वोच्च न्यायालय की निष्पक्षता और विश्वसनीयता सदैव बनाए रखना चाहती है।

जस्टिस जोसेफ कुरियन, जो अभी हाल में ही अपने पद से मुक्त हुए थे, उन्होंने दिल्ली के एक अंग्रेजी समाचार-पत्र में साक्षात्कार देते हुए कहा कि प्रेस कॉन्फ्रेंस का सुझाव जस्टिस चेलमेश्वर का था और अन्य तीनों सहयोगी उससे सहमत हो गए थे। आगे उन्होंने कहा कि उन लोगों को ऐसा महसूस हो रहा था कि कोई बाहरी शक्ति तत्कालीन चीफ जस्टिस दीपक मिश्रा को प्रभावित कर रही है। यही नहीं, उन्होंने यह भी कहा कि वे महत्त्वपूर्ण मामले ऐसी बेंच को दे देते थे, जिनके न्यायाधीश एक प्रकार के पूर्वग्रह से ग्रस्त मालूम पड़ते थे। यह एक गंभीर आरोप था, एक प्रकार से इसे सर्वोच्च न्यायालय की अवमानना भी कहा जा सकता है, क्योंकि इसमें पक्षपात का आरोप है, तथाकथित कनिष्ठ जजों के विरुद्ध। उन्होंने इसके पक्ष में कोई उदाहरण या सबूत नहीं दिया। इसे केवल एक कयास या शंका कहा जा सकता है।

पूर्व चीफ जस्टिस दीपक मिश्रा ने जस्टिस कुरियन के आरोप पर चुप रहना ही ठीक समझा। यह एक पूर्व प्रधान न्यायाधीश की गरिमा के अनुकूल था। वर्तमान न्यायाधीशों ने भी संभवत: यही माना कि वक्तव्य को महत्त्व नहीं देना चाहिए, क्योंकि इससे विवाद फिर उभरता, जो सर्वोच्च न्यायालय की प्रतिष्ठा और विश्वसनीयता के प्रतिकूल होता। खैर यही रही कि मीडिया ने भी जस्टिस कुरियन के बयान को अधिक नहीं उछाला। मामला ठंडा पड़ गया। लेकिन प्रश्न उठता है कि क्या यह उचित है कि जब सर्वोच्च न्यायालय से निवृत्त होने में अभी अधिक समय नहीं हुआ है, इस प्रकार का बयान उन्होंने दिया? इसमें वैयक्तिक कुंठा की बू भी आती है। जस्टिस कुरियन ने अल्पसंख्यक समुदाय के विषय में भी चिंता प्रकट की, जो उचित नहीं मालूम होती है। सर्वोच्च न्यायालय की स्थापना के बाद से अल्पसंख्यक समुदाय का समुचित प्रतिनिधित्व रहा है। भविष्य के बारे में यह चिंता निरर्थक है। उनका दूसरा प्रश्न यह है कि यदि इस प्रकार बयान साधारण नागरिक देता तो सर्वोच्च न्यायालय की किस प्रकार का प्रतिक्रिया होती। संस्थागत विश्वसनीयता को इस सबसे धक्का लगता है, यह बात तो निवर्तमान न्यायाधीश के ध्यान के परे नहीं रहनी चाहिए थी। ऐसा नहीं कि भ्रांति और मतभेद उच्च न्यायालय में पहले नहीं हुए, पर वे इस प्रकार खुलकर जनता में नहीं आए।

पिछले दिनों एक पुस्तक इस विषय में निकली है, जहाँ बहुत स्पष्टता और कभी-कभी कटुता के साथ न्यायाधीशों ने अपने सहयोगियों के विषय में कहा है, किंतु यह सब पर्याप्त समय बीतने के बाद। एक अमेरिकन शोधकर्ता जॉर्ज एच डुवॉइस ने जजों से साक्षात्कार कर बहुत सी बातों का खुलासा किया। पुस्तकाकार रूप देने के पहले उनका निधन हो गया। उस सामग्री का प्रस्तुतीकरण मुंबई के एक युवा विज्ञ एडवोकेट श्री अभिनव चंद्रचूड़ ने किया है। पुस्तक का नाम है—'Supreme Whispers : Conversations with Judges of Supreme Court of India, १९८६-१९८९'। अच्छा होता, यदि अपने विचार जस्टिस कुरियन अपने संस्मरण लिखकर कुछ समय उपरांत प्रकाशित करते। जल्दबाजी में एक अति महत्त्वपूर्ण संस्थान, सर्वोच्च न्यायालय के लिए यह बात हितकर नहीं कही जा सकती। कोई भी व्यक्ति कितने भी बड़े पद पर हो, परफेक्शन की प्रतिमूर्ति नहीं होता है। जैसा हम पहले कह चुके हैं कि हम सब हमाम में नंगे हैं, घर-घर मिट्टी के चूल्हे हैं। उच्च पद प्राप्त करने के उपरांत संस्था के गौरव और गरिमा के भागीदार होते हैं, जिसको नागरिक के अधिकारों की सुरक्षा और लोकतंत्र की प्रतिबद्धता का दायित्व संविधान ने सौंपा है, वह है सर्वोच्च न्यायालय; अतएव आत्मनियंत्रण और संतुलन की आवश्यकता होती है।

उत्तर प्रदेश के पश्चिमी जिलों में दलित उत्पीड़न की खबरें आती रही हैं। बरात गाजे-बाजे के साथ या वर घोड़े पर चढ़कर नहीं जा सकता, इस प्रकार की वाहियात बातें होती रही हैं। यह सामंतवादी युग नहीं है। संविधान सबको बिना जाति-पाँति, धर्म, रंग या नस्ल भेद के समान अधिकार देता है। यह समता का युग है। समाज के एक बड़े वर्ग को अपनी मानसिकता बदलनी होगी। राजधर्म नागरिक नागरिक में भेद नहीं करता। भेदभाव के कारण दलितों में अतिवादी संगठन खड़े होते हैं, जैसे पश्चिमी उत्तर प्रदेश में चंद्रशेखर की भीम सेना। अतएव तथाकथित उच्च वर्गों के मुखियों का पहल करना अनिवार्य है, अन्यथा सामाजिक विघटन बढ़ता जाएगा, जबकि आवश्यकता सौहार्द की है। उसी प्रकार हिंदू और मुसलमानों के बीच भी इस क्षेत्र में मतभेद की खाई बढ़ती जा रही है।

हाल ही में बुलंदशहर में दंगा हुआ, जिसमें पुलिस अधिकारी सुबोध कुमार सिंह की हत्या हुई। एक और युवक मारा गया। वीडियो में उसको पत्थर फेंकते दिखाया गया है। सुबोध कुमार सिंह दो वर्गों के झगड़े को रोकने तथा तनाव कम करने की कोशिश कर रहा था। वह अपने दायित्व का पालन कर रहा था। उसकी गिनती कुशल और चुस्त अधिकारियों में थी। अतएव उसकी इस प्रकार मृत्यु एक भयानक दृश्य पैदा करती है। कहा जाता है कि विवाद पीछे गौहत्या के कारण हुआ था। हमारी पूरी आस्था गौमाता में है। गौरक्षण होना चाहिए, किंतु कानून की परिधि में। कानून को कोई अपने हाथ में नहीं ले सकता। सामूहिक लिचिंग अफवाहों के आधार पर ही, कभी बच्चों के अपहरण का डर, कभी डायन कहकर और कभी गौरक्षा के नाम पर जो होता है, यह असहनीय है। यदि सुबोध कुमार सिंह ने कोई कोताही की है, तो वह जाँच में सामने आएगी। कर्तव्यपालन करते हुए एक पुलिस इंस्पेक्टर की हत्या अत्यंत ही जघन्य प्रकरण है, जिसे एक सभ्य संवैधानिक देश बरदाश्त नहीं कर सकता। शासन द्वारा सख्त-से-सख्त काररवाई होनी चाहिए।

मुख्यमंत्री ने सुबोध सिंह के परिवार को पूर्ण न्याय का आश्वासन दिया है। संयोग है कि न्याय की चक्की बड़ी मंद गति से चलती है। स्मरण रखना चाहिए कि पुलिस एक संगठित सुरक्षा बल है। उसके दायित्व आसान नहीं हैं। पूरे सुरक्षा बल के मनोबल का प्रश्न है, इसकी संवेदनशीलता का एहसास शासन को होना चाहिए। अच्छा होता कि मुख्यमंत्री इस दु:खद घटना के बाद स्वयं सुबोध सिंह के परिवार को फोन पर अथवा पाँच मिनट के लिए जाकर सांत्वना देते। यदि यह उनकी व्यस्तता के कारण संभव नहीं था तो एक अन्य वरिष्ठ मंत्री को भेजने की व्यवस्था की जा सकती थी। उसका पुलिस सुरक्षा दल पर बहुत अच्छा प्रभाव पड़ता। उसका मनोबल, मोरल और ऊँचा होता। पुलिस जैसे संगठित और अनुशासित वर्ग में किसी प्रकार की बेचैनी या यह भावना कि उसके प्रति शासन उदासीन है, समाज के लिए घातक हो सकती है।

स्टैच्यू ऑफ यूनिटी

प्रधानमंत्री ने सरदार पटेल की प्रतिमा या स्टैच्यू, जो विश्व में सब प्रतिमाओं से ऊँची है, बनवाकर एक अति प्रशंसनीय कार्य किया है। सरदार पटेल एक महान् व्यक्ति और बड़े राजनेता ही नहीं थे, वे प्रतीक हैं एक सुशासित, मजबूत और संगठित राष्ट्र के। प्रतिमा को सही नाम दिया गया है, स्टैच्यू ऑफ यूनिटी, यानी राष्ट्रीय एकता की मूर्ति। वे आगे आने वाली पीढ़ियों को भी उनके दायित्वों का स्मरण कराती रहेगी। प्रधानमंत्री का एक और प्रयास सराहनीय है, जो उन्होंने आई.एन.ए. के अधिकारियों और जवानों को, जो सौभाग्य से आज भी हमारे बीच हैं, उनका सम्मान समारोह लालकिले में किया। उनकी स्वतंत्रता संग्राम के सेनानियों की एक अपनी श्रेणी है। जो वातावरण देश में नेताजी सुभाषचंद्र और आई.एन.ए. की रोमांचित कहानी ने किया, वह ब्रिटिश राज के ताबूत में अंतिम कील थी, जब ब्रिटिश सरकार को आभास हो गया कि अब विदेशी शासन भारत में असंभव है। ब्रिटिश राज के ताबूत में पहली कील जालियाँवाला कांड था और जिसका शती वर्ष चल रहा है। ब्रिगेडियर डायर के आदेश पर अमृतसर में शांतिपूर्वक सभा में उपस्थित निहत्थे, निरपराध सैकड़ों आदमियों, औरतों और बच्चों की गोलियों से भून दिया गया था। इस विषय में आगे कुछ लिखने का प्रयास होगा।

उस समय के भारत के कमांडर-इन-चीफ जनरल अधिकारी ने स्पष्ट शब्दों में यह लिखा है, बहुत से अन्य उच्च अधिकारियों ने भी यही मत अपनी उस समय की टिप्पणियों अथवा संस्मरणों में व्यक्त किया है। आई.एन.ए. से संबंधित स्वतंत्रता सेनानी सिंगापुर, मलेशिया (पूर्व मलाया), इंडोनेशिया (पूर्व डच इंडीज), हांगकांग एवं फिलीपींस, थाईलैंड (पूर्व स्याम) आदि में फैल गए थे। इनमें बहुत से स्वतंत्रता सेनानी गदर आंदोलन में भाग लेने वाले भी थे, जो आज जीवित भी हैं, वे सब प्राय: आयु में ९० वर्ष के आसपास के हैं। एक समाचार-पत्र में एक चित्र रंगून में अपने माननीय राष्ट्रपति द्वारा स्वतंत्रता संगठन परेड करते हुए देखकर हृदय गद्‌गद हो गया। यह बहुत पहले होना चाहिए था। अब भी जो भारतीय मूल के स्वतंत्रता सेनानी जीवित हैं, उनको खोजकर उनका आदर इन देशों में हमारे राजदूतों/हाई कमिश्नरों को करना चाहिए। जो जीवित नहीं, उनके परिवारों को ताम्रपत्र दिया जाना चाहिए, जैसाकि प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी ने आजादी की रजत जयंती के समय किया था। भावनात्मक रूप में ये परिवार भारत से जुड़े रहेंगे। एक महिला पत्रकार ने करीब दो वर्ष पहले एक पुस्तक दक्षिण-पूर्व एशिया में रहने वाले भारतीय मूल के स्वतंत्रता सेनानियों को खोजकर कुछ साक्षात्कार करके उनके बारे में लिखा था। वह पुस्तक भी इस यज्ञ में सहायक हो सकती है।

उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्री योगी आदित्यनाथ ने जन सुविधा की दृष्टि से कुंभ के लिए अनेक व्यवस्थाएँ की हैं। बाद में भी उनसे सर्वसाधारण को बहुत सुविधाएँ प्राप्त हो सकेंगी। यह प्रयास स्तुत्य है। यहाँ के एयरपोर्ट का भी कायाकल्प हो गया, ऐसा समाचार-पत्रों के विज्ञापनों में देखने को मिला। निवेदन यह है कि हवाई अड्डे का नाम महामना मदन मोहन मालवीय के नाम पर करें तो अति उत्तम होगा। प्रयाग और वाराणसी विशेषतया उनकी कर्मभूमि रही हैं। वैसे मालवीयजी पूरे देश के थे। गांधीजी उनका ज्येष्ठ श्रोता के रूप में समादर करते थे। 'महामना' उनके नाम से जुड़ा, क्योंकि उदारता और विनम्रता उनके विशेष गुण थे। उनमें न किसी प्रकार मद था, न मोह। वे अपनी महानता, विशाल हृदय, करुणा, बिना किसी भेदभाव के सेवाभाव के कारण अवश्य सबका मन मोह अवश्य लेते थे। ऐसे थे पूज्य मदन मोहन मालवीय, जिनका जन्म भी २५ दिसंबर को हुआ था। ऐसे प्रात: स्मरणीय महान् पुरुष का इस प्रकार का समादार सर्वस्वीकार होगा। इस वंदनीय कार्य के लिए योगीजी और उनकी सरकार को जनता सदैव याद रखेगी।

त्रिलोकी नाथ त्रिपाठी

(त्रिलोकीनाथ त्रिपाठी)

तुम्हारे शहर में

• हिमांशु जोशी

तुम्हारे इस शहर में सदियों से तंद्रा में डूब यानी जादुई शहर में जब-जब आता हूँ, आँखें कुछ खोजने सी क्यों लगती हैं? खोई-खोई सी उन आँखों में गहरी जिज्ञासा का सा भाव क्यों उभरता है? क्यों यहाँ की बयार में एक प्रकार की चाँदनी, सुगंध का सा अहसास होता है? यह कुएँ की तरह बसा बेढील शहर मुझे सबसे सुंदर शहर क्यों लगता है?

यहाँ की रूखी मिट्टी में एकता का स्पंदन क्यों? पेड़ों की पत्तियों को छूता हूँ तो उनमें सिहरन सी की अनुभूति होती है? खिले हुए फूलों का खिला हुआ स्वरूप एक प्रकार की जीवंतता का सा अहसास क्यों जगाता है! मैंने इस तरह से हँसाते, मुसकराते, खिलखिलाते फूलों को अन्यत्र कहीं नहीं देखा।

तुम्हें सच नहीं लगेगा, पर सच कह रहा हूँ, जब कभी नैनीताल आता हूँ। अकेला ही ऊँची-नीची पगडंडियों में निकल पड़ता हूँ अपने को खोजने के लिए। अपने आप से पता नहीं कितनी बातें करता रहता हूँ। अपने से रूठता हूँ, स्वयं अपने को मनाता हूँ। चलते-चलते थक जाता हूँ तो बाँज या देवदार के हरे वृक्ष के नीचे विश्राम करने के लिए आँखें मूँदे लेट जाता हूँ।

चुपचाप कभी वृक्ष को परस्पर बातें करते सुनता हूँ। कभी मैं भी उनकी बातों में शामिल हो जाता हूँ।

बाँज के एक बूढ़े वृक्ष ने उस दिन मेरी ओर देखते हुए कहा, 'तुम यहाँ क्यों आते हो? यहाँ क्या है ऐसा, जो तुम्हें दुनिया के किसी कोने से भी यहाँ खींचकर ले आता हूँ?'

मैं उनकी बातों का क्या उत्तर दूँ, मुझे सूझता नहीं। वह फिर मेरी प्रश्नसूचक दृष्टि से मेरी ओर देखता है तो विवश भाव से कहता हूँ, 'यहाँ कुछ खो गया है, उसे खोजने आता हूँ। बचपन में खो गया था कभी, तब से अपने को खोज रहा हूँ।'

तुम्हें सच नहीं लगेगा, ये सारे वृक्ष जो अब मेरी तरह बुढ़ा गए हैं, इनकी ओर गौर से देखोगे तो तुम्हें कई सजीव चित्र दिखेंगे। इनकी पत्तियों में कई अक्स। जब कभी भटकता-भटकता यहाँ आता हूँ, ये वृक्ष झूमने लगते हैं खुशी से। अपनी टहनियों की बाँहें हिलाकर ये अपने मन का अह्लाद प्रकट करते हैं। इनके पत्तों की हवा मेरे तन में ही नहीं, मन के किसी कोने में अव्यक्त सिहरन भी पैदा करती है।

वृक्षों से संवाद करना मुझे बहुत अच्छा लगता है। ये बच्चों की तरह निश्चल होते हैं, सहिष्णु और स्नेहशील भी। ये मुक्त भाव से सहज हँसी में हँस सकते हैं। तुम्हारे मन की बातें सुन-समझ सकते हैं। कटुता/कुटिलता ये नहीं जानते। ये दोनों हाथों से नेह लुटाना जानते हैं, नेह बाँटना और बदले में कुछ नहीं चाहते!

कल मैं शाम को पाषाण देवी की तरफ घूमने निकल गया था अकेला। वहाँ चट्टान पर बैठा नीचे जल में खेलती मछलियों को देख रहा था। मैंने सुना—एक मछली दूसरी से कह रही थी, 'तुम्हें इस आदमी को देखकर डर तो नहीं लग रहा?'

'आदमियों को देखकर मुझे हमेशा डर लगता है, वे जंगली जानवरों से भी अधिक खूँखार होते हैं, पर इसे देखकर नहीं। यह बहुत सरल-सहज है। हाँ, प्राणी के माथे पर लिखा रहता है कि वह क्या है? उस भाषा को जो समझ लेता है, वह सबकुछ जान लेता है।

'इसके माथे पर क्या लिखा है?'

'यही कि यह बुरा आदमी नहीं है!' वह हँस पड़ती है। माथे पर लिखी भाषा से भी अधिक सजीव होती है मन की भाषा। उसे पढ़ने की भी आवश्यकता नहीं होती! हर प्राणी को स्वत: ही अहसास हो जाता है कि सामनेवाला क्या कह रहा है।

जितना महत्त्व लिखित भाषाओं का होता है, उससे कई गुना अधिक महत्त्व होता है उन भाषाओं का, जो लिखी ही नहीं जातीं! मौन से अच्छा संभाषण भी कुछ हो सकता है? इसलिए चुप्पी की भाषा बोलने/लिखने की भाषा से अधिक महत्त्वपूर्ण होती है!

मछलियों की बातें बहुत रुचिकर लगती हैं, पर मैं अधिक वहाँ रुक नहीं सकता। आगे निकल जाता हूँ।

ठंडी रोड पर, फाँसी गंधेर के पास बाँज का एक बहुत बड़ा वृक्ष पहले की तरह अब भी खड़ा है, पर मुझे यह देखकर दु:ख होता है कि उसी बाँहें कटी हुई हैं। किसी क्रूर कसाई की करतूत होगी, मैं उसके तन को अपनी हथेली से सहलाता हूँ, तो वह मुसकराता हुआ कृतज्ञता से मेरी ओर देखता है।

माल रोड पर चिनार के पौधे सहमे हुए से चुपचाप खड़े दिखे। पता चला कि पास के बँगले में अभी किसी वृद्ध की मृत्यु हो गई है। ये पौधे बचपन में कभी उसी ने लगाए थे। वृक्ष शोक मना रहे थे। उस पर

बैठे पक्षी भी चहचहा नहीं पा रहे थे।

शाम को बच्चों के साथ अयार पाटा की तरफ निकल जाता हूँ। तनु कहता है, 'हम सड़क के किनारे तितलियों से खेलते हुए आएँगे। यहाँ फूल भी कितने खिले हैं ? दादाजी, आप जाइए ऊपर ! हम तितलियाँ देखते हुए आएँगे।'

ऊपर जाकर मैं हरी घास पर आँखें मूँदे लेट जाता हूँ, बड़ा सुकून मिलता है। घास भी घास जैसी रूखी नहीं, मखमली है। हौले-हौले उसे सहलाता हूँ।

तनु और राया कब ऊपर आ गए, मुझे पता ही नहीं चला। राया अपने फ्रॉक में समेटे ढेर सारे रंग-बिरंगे फूल ले आई है, 'देखिए दादाजी, आपके लिए कितने फूल लाई हूँ।'

मैं देखते ही चौंकता हूँ, 'अरी पगली ! तू इतने फूल तोड़ लाई बेरहमी से। कभी सोचा तुमने इन्हें डाली से टूटते समय कितना कष्ट हुआ होगा ? इनकी मम्मी-पापा कितना रोए होंगे, अपने बच्चों की हत्या होते देख। पगली, फूल तोड़ने के लिए नहीं, देखने के लिए होते हैं। देख-देखकर मुसकराने के लिए। कितनी ढेर सारी सुगंध ये अपने साथ लाए हैं···। तुम्हें इनके साथ ऐसा व्यवहार नहीं करना चाहिए था। तुम्हारे बारे में ये क्या सोचेंगे कि कितने जंगली बच्चे हैं।'

मैंने देखा, राया की बड़ी-बड़ी आँखें नम हैं, 'आई एम सॉरी दादाजी।'

मैं चुप हो जाता हूँ।

लौटते समय वे सारे फूल बच्चों से वहीं रखवा देता हूँ। बच्चे उन पौधों को प्यार करते हुए क्षमा याचना करते हैं।

यह शहर तुम्हारा है न। नहीं-नहीं तुम्हारा भी नहीं, हमारा हम सबका। मैं उन सड़कों, गलियों में कुछ खोजता, खोया-खोया भटकता रहता हूँ, कभी जिन पर तुम चली थीं। तुम्हारे पाँवों के निशान अभी भी यहाँ की धरती पर अंकित हैं। यहाँ की फूल-पत्तियों पर, वृक्षों पर तुम्हारी देहगंध बिखरी हुई है।

अधिकांश लोग जो समय के साक्षी थे, अब कहीं नहीं दिख रहे हैं। इतने वर्षों में इतिहास के कितने पन्ने पलट गए हैं ! कि पन्ने धूमिल हो गए हैं, पीले। किस पर क्या लिखा था, इतना धुँधला गया है कि पढ़ पाना भी कठिन है। मेरी ही आँखें धुँधला गई हैं।

जो नन्हे-नन्हे बच्चे तब गली के नुक्कड़ पर गुल्ली-डंडा खेलते थे, अब वे मोटे ऊनी कपड़ों में लदे कमर झुकाकर चल रहे हैं। आँखों पर मोटे चश्मे हैं, पाँवों में सहज रूप से खड़े होने की शक्ति नहीं, इसलिए लाठी का सहारा लिये खड़े हैं।

तिराहे पर जो बालू में सिंकी गरम-गरम मूँगफलियाँ बेचता था, वह चलता-चलता टकरा गया था ! जाते-जाते मैंने रोका, 'पहचान नहीं रहे हो ?'

वह अचरज से मेरा मुँह ताकने लगता है।

'कभी नहीं देखा !'

वह असमंजस में विवश भाव से सिर हिलाता है।

'इस तिराहे पर आपकी छोटी सी दुकान थी न मूँगफली की ! बालू में सिंकी आपकी गरम-गरम मूँगफलियों का जायका अब तक मुँह में है। बादाम भी उसके सामने कुछ नहीं लगते थे···। लोग यहाँ मूँगफली खाने कितनी दूर से आते थे, चिनियाँ बादाम कहते थे।'

जैसे-जैसे मैं बोलता जा रहा था, वह पीछे और पीछे चलता, अतीत में कहीं खो गया था।

'अरे, आप···आप उस खोखे की बात कर रहे हैं, जो इस नई इमारत के साथ ही ठह गया था। उसमें मेरे दादाजी बैठते थे—राधे शाह !'

दादाजी को गए भी अब युग बीत गया। उनके बाद कुछ दिन पिताजी ने उसके पास ही खोखा लगाया, पर बरसात में घर की दीवार ढह जाने से वे दबकर मर गए थे। आप जानते ही हैं, नैनीताल में कितनी बारिश होती है।

जहाँ खोखा था, अब वहाँ सीमेंट का पक्का फर्श है। उस पर मुझे एक अँगीठी की छाया जैसी दिखती है। पास ही बिखरी हुई गरम रेत और नीचे डामर की टूटी हुई पतली सी सड़क पर मूँगफली के छिलकों के प्रतिबिंब।

थोड़ा आगे बढ़कर झील के किनारे की जमीन पर घूरकर देखने पर मुझे घोड़ों की टापों की छाप दिखती ! उनकी टापों से उड़ती धूल सी। मैं मुँह पर रुमाल रख लेता हूँ। तभी सहसा एक झटका लगता है, अरे हाँ, यह तो पुरानी बात थी। अब घोड़े नैनीताल की सड़कों पर नहीं चलते दिखते। हाँ, हाँफते हुए, दौडते हुए घोड़ों की टापों की आवाज अवश्य मेरी तंद्रा भंग कर रही है। फिर यह आवाज कहाँ से आ रही है ! और यह धूल··· !

सिनेमा हॉल के बाहरी द्वार पर एक लंबा सा शीशा लगा है। मैं उसके आगे खड़ा हो जाता हूँ। देखता हूँ मेरे स्थान पर वहाँ कोई और खड़ा है। बार-बार आँखें मलकर देखता हूँ। अचरज से शीशे में देखता हुआ पूछ रहा है, आपको कहीं देखा लगता है। इन्हीं सड़कों पर अपने को ढूँढ़ने के लिए इस उम्र में आपको इतनी दूर आना पड़ा, अफसोस है !

किसी मेले में जैसे बच्चे का हाथ छूट जाए, और वह बिछुड़ जाए, इतनी शताब्दियों के बाद उसके अविभावक प्रतिवर्ष लगनेवाले इस मेले में उसे ढूँढ़ने आएँ, उसी स्थान पर, क्या वह कभी वहीं खड़ा मिल सकता है ?

हाँ, मिल क्यों नहीं सकता ? मैं भी उसी चौराहे पर तो खड़ा हूँ, जहाँ से खोया था कभी ! आप मुझे नहीं पहचानते। मुझे नहीं जानते, पर मैं भी क्या अपने को भूल सकता हूँ। स्वयं को भी नहीं पहचानता ?

इतिहास के अनन्यतम जीवन-शिल्पी

● **जानकीशरण वर्मा**

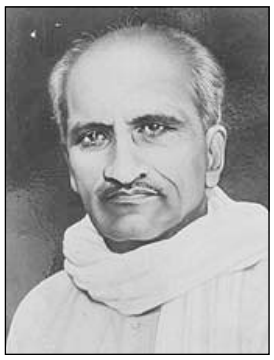

अप्रतिम व्यक्तित्व के धनी, महान् विचारक, साहित्य मनीषी डॉ. वृंदावनलाल वर्मा हिंदी-जगत् के अनूठे ऐतिहासिक उपन्यासकार व जीवनगाथा के अनमोल रत्न थे। उनमें कला का लालित्य, जीवन का पराक्रम, संस्कृति का मान और साहित्य का महान् गौरव था। वे अत्यंत संवेदनशील और जागरूक साहित्यकार थे। ऊपर से अत्यंत शांत दिखनेवाले वर्माजी के हृदय में सदैव ज्वालामुखी धधकता था। वे संपूर्ण समाज की पीड़ा को अपने में सँजोए हुए जन-जीवन से अत्यंत घुले-मिले थे। परशोषण और उत्पीड़न उन्हें असह्य था। समाज में अत्याचार और अन्याय देखकर मौन व तटस्थ नहीं रह सकते थे। जैसा कि उन्होंने लिखा है—''जब किसी पर अत्याचार देखता हूँ, चाहे पीड़ित बड़ा हो या छोटा, तब कलम उठाता हूँ।'' और उनकी लेखनी बिना किसी भय के अत्याचारों और अन्यायों के विरुद्ध चल पड़ती। वर्माजी एक आस्थावान कलाकार थे। जनसाधारण में उनका अटूट विश्वास और आस्था थी। उन्हीं के अनुसार—''जनता को ज्ञान-मार्ग पर लाते-लाते हमारा शरीर भी क्षय हो जाए तो हमारी सुगति हो जाएगी।'' ऐसी उच्च और पुनीत भाव को लेकर ही वर्माजी साहित्य-जगत् में प्रविष्ट हुए।

वर्माजी ने अपने साहित्य के माध्यम से चेतना व नव-जागृति उत्पन्न कर समाज को स्वतंत्रता संग्राम के लिए प्रेरित किया। उनका विश्वास था कि स्वतंत्रता अहिंसा मार्ग से नहीं, वरन् सशस्त्र क्रांति द्वारा ही प्राप्त की जा सकती है। इसी से प्रेरित होकर उन्होंने सन् १९०८ में 'सेनापति ऊदल' नाटक का सृजन किया, जिसमें अंग्रेजों के विरुद्ध भारतीयों को सशस्त्र क्रांति के लिए आह्वान किया गया था। इस नाटक के प्रकाशित होते ही तत्कालीन अंग्रेजी हुकूमत ने इसे जप्त कर लिया और वर्माजी पर भी कड़ी निगरानी रखी जाने लगी। किंतु वर्माजी इससे लेशमात्र भी विचलित नहीं हुए और निरंतर देशभक्ति की भावना से प्रेरित होकर स्वाधीनता प्राप्ति के लिए प्रेरणादायक साहित्य का सृजन करते रहे। हाँ, अब वर्माजी छद्म नाम 'गड़बड़ानंद' के नाम से लिखने लगे। साथ ही राष्ट्रकवि दादा माखनलाल चतुर्वेदी, श्री बद्रीनाथ भट्ट और श्री श्रीमन्नन द्विवेदी गजपुरी के साथ 'गोलमालकारिणी सभा' के सदस्य बन गए, जिसका कार्य क्रांतिकारियों को आर्थिक सहायता पहुँचाना तथा उनके पास हथियार पहुँचाना था। इस प्रकार वर्माजी देशप्रेम, देशभक्ति से ओतप्रोत साहित्य का सृजन करते हुए विज्ञापन से दूर रहकर सक्रिय रूप से देश स्वातंत्र्य के लिए कार्य करते रहे।

वर्माजी बड़े-से-बड़े संकटों में भी चाहे वे आर्थिक हों अथवा सरकार की ओर से ढाए गए हों, कभी भी अपने धैर्य से डिगे नहीं, न विचलित हुए। वे जीवन में यह आस्था और विश्वास लेकर ही आगे बढ़े हैं—''जीवन निरंतर संघर्ष का ही दूसरा नाम है, धैर्य इसकी साधना का प्रधान अंग है, सहिष्णुता इसकी नाड़ी है, प्रयत्न इसका हृदय तथा प्रसन्नता इसकी देन है। चपेट खा जाने पर भी मन और प्रयत्न को छीजने न दे, वही आगे चलेगा, वही आगे बढ़ेगा।'' इसी विश्वास के साथ वर्माजी ने अपने साहित्य का सृजन किया है। वे मानवतावादी थे। बुंदेलखंड में उत्पन्न होने के कारण उन्हें इससे असीम प्रेम, लगाव व ममत्व था। यहाँ का जन-जीवन संस्कृति और वीर गाथाएँ, यहाँ की मिट्टी, नदी, झरने, पठार, पर्वतमाला एवं प्रकृति उन्हें प्रेरणा देतीं, इसी से इनके उपन्यासों में सजीव चित्रण अंकित हुआ है। वर्माजी की प्रकृति आशा, संघर्ष और मानवता का संदेश देती हुई प्रतीत होती है। उन्होंने अपने अधिकांश उपन्यासों के लिए बुंदेलखंड से ही कथानकों का चयन किया है। इसे देश कुछ समीक्षक वर्माजी को एक आंचलिक उपन्यासकार मात्र मानकर उन्हें हिंदी का सर वाल्टर स्कॉट मानते हैं। किंतु वर्माजी को आंचलिकता की लघु सीमा और संकीर्णताओं में नहीं बाँधा जा सकता है। बुंदेली पात्र होते हुए भी उनके उपन्यासों में कहीं भी संकीर्णता व संकुचितता दृष्टिगोचर नहीं होती। उनके संपूर्ण साहित्य में समाज का जन-जीवन झाँकता है, उनमें व्याप्त समस्याएँ संपूर्ण समाज की समस्याएँ हैं, जिन्हें उनमें दरशाया गया है और उनका समाधान अवधूत कर देश को आगे बढ़ने का मार्ग

प्रशस्त किया है। वर्माजी ने अतीत से सामग्री लेकर उसमें वर्तमान को ही प्रस्तुत किया है। सच यह है कि उनके उपन्यास भले ही सामंत कथानक के रूप में प्रस्तुत किए गए हैं, किंतु उनका साहित्य प्राचीन सामंतों का गुणगान करनेवाला साहित्य नहीं, वरन् जीवन का साहित्य है, संघर्ष का साहित्य है तथा आगे बढ़ने की शक्ति एवं सत्प्रेरणा देनेवाला साहित्य है। वर्माजी ने भारत के भूले-बिसरे और बिखरे हुए इतिहास तथा भारतीय संस्कृति को अपने साहित्य में समेटकर उसे नए रूप एवं नए ढंग में प्रस्तुत किया है, जो इनके उच्च चातुर्य व कला का परिचायक है।

वर्माजी श्रेष्ठ उपन्यासकार के साथ ही महान् चिंतक और साहित्य-मनीषी थे। वे साहित्य व कला को केवल मनोरंजन का साधनमात्र नहीं मानते थे। वे साहित्य में 'सत्यं-शिवं-सुंदरम्' के उपासक हैं। कला के संबंध में उनके विचार अत्यंत महत्त्वपूर्ण हैं। 'हंस-मयूर' में वे लिखते हैं—''कला पाशविकता को गलानेवाली, संस्कृति की नाड़ी, विकारों की मुखमर्दिनी अध्यात्म की सहयोगिनी, जीवन का रस, सभ्यता का प्राण और नीति की सहचरी है।''

उन्होंने इतिहास के चौखटे पर वर्तमान की सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक और सांस्कृतिक समस्याओं को सुलझाने का प्रयत्न किया है। समाज में फैली हुई संकीर्ण जातिगत भावना, धार्मिक अंधविश्वास और रूढ़िगत रीति-रिवाजों पर कड़ी चोट की है। उन्होंने 'झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई' में नारायण शास्त्री और छोटी मेहतरानी की प्रेम कहानी, गुलाम गौस खाँ तोपची द्वारा अंग्रेजों के छक्के छुड़ा देना, 'विराटा की पद्मिनी' में कुंजर सिंह तथा कुमुद का प्रेम वर्णन, 'मृगनयनी' में मान सिंह व निन्नी तथा अटल व लाखी का प्रेम वर्णन कर सांप्रदायिक भावना तथा ऊँच-नीच पर प्रहार कर देशप्रेम एवं समता की ज्योति जाग्रत् की है।

देश के नव-निर्माण के लिए भी वर्माजी सदैव जागरूक व सक्रिय रहे। उनके विचार से जब समाज में श्रम का महत्त्व कम हो जाता है और उससे आस्था डिग जाती है तो उसका पतन होने लगता है। भारतीय समाज की गिरी हुई स्थिति का मूल कारण श्रम के प्रति अनास्था की भावना ही है। 'भुवन विक्रम' में वर्माजी कहते हैं, ''श्रम जीवन का गौरव, शौर्य का जनक, संपत्ति का दाता, स्वाभिमान का बीज, चमत्कार का पुरोहित और समाज का प्राण होता है।'' संपत्ति समाज का अस्थि-पंजर है और श्रम उसका रक्त, मांस, प्राण, धर्म और संस्कृति। वर्माजी समाज में बढ़ती हुई विश्वशृंखला, दरिद्रता, क्षेत्रीय और अलगाव की भावना को वर्तमान सामाजिक व्यवस्था एवं शासकों के अनुत्तरदायी कार्यों को ही मानते थे। 'भुवन विक्रम' में वे लिखते हैं—''समाज में जब विभ्रम और भय का घुन लग जाता है, आस्था निर्बल हो जाती है, संकल्प चंचल हो उठता है, पर शोषण बढ़ जाता है; अहंकार, दंभ और अनृत के हठ की बाढ़ आ जाती है, तब विकास-क्रम की कड़ी गलत दिखाई पड़ने लगती है।''

देश में भावनात्मक एकता के लिए देश की भाषा का ही राष्ट्रभाषा होना नितांत आवश्यक है। वर्माजी की स्पष्ट मान्यता थी कि देश की कोई राष्ट्रभाषा हो सकती है, तो वह हिंदी है। इसी को प्रतिष्ठित किया जाना चाहिए। राष्ट्र की स्वतंत्रता, इसकी सुरक्षा, अखंडता एवं समृद्धि राष्ट्रीय एकता पर ही निर्भर है, और देश को राष्ट्रीय एकता में बद्ध करने की क्षमता राष्ट्रभाषा हिंदी में ही निहित है। इन्होंने ऐतिहासिक व सामाजिक उपन्यास, नाटक और कहानी-संग्रह मिलाकर लगभग ८२ अनमोल ग्रंथ, जिनमें 'झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई', 'अहिल्याबाई', 'दुर्गावती', 'गढ़कुडार', 'भुवन विक्रम', 'मृगनयनी', 'अचल मेरा कोई', 'देवगढ़ की मुसकान', 'कचनार', 'विराटा की पद्मिनी', नाटकों में 'राखी की लाज', 'हंस मयूर', 'जहादारशाह', 'पीले हाथ' तथा कहानियों में 'शरणागत' आदि लिखकर हिंदी साहित्य की श्रीवृद्धि की है, जिस पर हिंदी साहित्य को गौरव है और जिनका स्थान अंग्रेजी के उपन्यासकार सर वाल्टर स्कॉट से कहीं अधिक ऊँचा है।

वर्माजी का साहित्य अमर साहित्य है, जिसमें वर्तमान समाज के संव्यूहन को बदलने, देश को उन्नत करने और मानवीयता की प्रेरणा देने की अद्‌भुत क्षमता है।

स्वतंत्रता प्राप्ति के पूर्व भारतीय समाज में जो समस्याएँ व्याप्त थीं, वे आज भी किसी-न-किसी रूप में विद्यमान हैं, जिनका समाधान डॉ. वृंदावनलाल वर्मा के साहित्य में उपलब्ध होने से उसकी आधुनिकता और उपयोगिता निरंतर बनी हुई है। वर्माजी ने अपने जीवनकाल में लगभग ८०-८२ ऐतिहासिक, सामाजिक उपन्यास, नाटक और कहानी-संग्रहों का सृजन कर हिंदी साहित्य को अमूल्य रत्न भेंट किए। उनका सामाजिक उपन्यास 'अमरबेल' अपने ढंग का अनूठा, प्रेरणात्मक और विचारोत्तेजक है। इसमें विद्वान् उपन्यासकार ने न केवल ग्रामीण समस्याओं और कठिनाइयों को ही उभारा है, बल्कि उनका निराकरण एवं समाधान प्रस्तुत कर समाज को नई दिशा, नई जागृति तथा नए आयाम भी प्रदान किए हैं।

देश की स्वतंत्रता और उसके नव निर्माण के लिए वर्माजी सदैव जागरूक एवं सक्रिय रहे हैं। देशानुराग और देशभक्ति उनके रोम-रोम में समाई हुई थी। देश को पराधीनता और अंग्रेजों द्वारा भारतीयों का शोषण उन्हें असह्य था; यही कारण है कि उन्होंने अपने साहित्य के माध्यम से देशवासियों को देशभक्ति, राष्ट्रीय भावना और स्वातंत्र्य संग्राम के लिए प्रेरित किया। 'अमरबेल' में उन्होंने लिखा है—''गुलामी की बेड़ियाँ काटने के लिए राष्ट्रीयता अनिवार्य है, परंतु बेड़ियाँ हट जाने के बाद वह भावना मानव प्रेम में बदल दी जानी

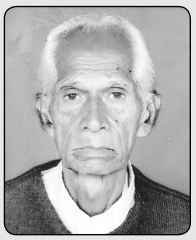

सुपरिचित साहित्यकार। एम.ए., साहित्य रत्न। उ.मा. विद्यालय के प्रबंधक तथा श्री गांधी भवन, झाँसी के सदस्य एवं रानी लक्ष्मीबाई क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक के पूर्व निदेशक। संप्रति स्वतंत्र पत्रकार।

चाहिए, अन्यथा वह प्रचंड वासना बनकर दूसरों को गुलाम बनाने के लिए बेड़ियाँ तैयार करेगी।''

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् देश में जो स्वस्थ वातावरण होना चाहिए था, वह आज देखने को नहीं मिलता। कठिन समस्याओं के धुंध से आच्छादित होने से उसकी प्रगति और विकास में अनेक अवरोध उपस्थित हैं। इस ओर संकेत करते हुए 'अमरबेल' में वर्माजी कहते हैं कि ''समाज-वृक्ष को तरह-तरह की अमरबेलें डसे जा रही हैं। वृक्षों की अमरबेलें दिखलाई पड़ती हैं। उनको काट फेंकना सहज है, पर समाज और व्यक्ति की अमरबेलें दिखाई ही नहीं पड़तीं।

''वृक्ष अपने नए जीवन के लिए इन अमरबेलों के मारे कानून बना कहाँ पाता है! अमरबेल तो शोषण के अपने मतलब का कानून बनाती है। अमरबेलों को नष्ट करने के साथ ही कहीं ऐसा न हो कि व्यक्ति और समाज भी काटकर गिरा दिए जाएँ। ये अमरबेलें समाज में फैली हुई कुप्रथाएँ, कागजी स्कीमें, रिश्वत, अनीति, दुराचार और शोषण हैं, जो समाज-वृक्ष को ग्रसित कर उसका रस चूस रही हैं। यदि समय रहते समाज में व्याप्त इन अमरबेलों का सफाया नहीं किया गया तो ये सारे समाज को नष्ट कर डालेंगी।''

जमींदारी उन्मूलन के पश्चात् भी ग्रामवासी कुंठाग्रस्त हैं। ग्रामीण समस्याएँ भी पूर्ववत् मुहँ फैलाए हुए ग्रामवासियों को निगले जा रही हैं। इस कुप्रथा के समाप्त हो जाने पर भी ग्रामों में जमींदारों का डंडा पुजता है, सेठ और साहूकारों के चंगुल से अब भी निर्धन किसानों को मुक्ति नहीं मिल सकी, खेती के बीज पाने के लिए अब भी उन्हें कथित जमींदारों का मुँह जोहना पड़ता है। पुराने रीति-रिवाज, अधिकारी और लेखपालों की मनमानी के शिकार होना पड़ता है। 'अमरबेल' में वर्माजी ने देशराज जमींदार, बाघराज, काली सिंह डाकू अज्जना, डॉ. सनेही राजदुलारी, धरनीधर साहूकार, विक्रम किसान, टहलराम साम्यवादी आदि पात्रों के चरित्र-चित्रण द्वारा उक्त समस्याओं को उभारकर उनका समाधान बताया है।

'अमरबेल' के पात्रों के चरित्रों से स्पष्ट है कि वर्तमान पूँजीवादी सड़ी-गली व्यवस्था में जहाँ केवल अर्थ का ही वर्चस्व है, जनता के सच्चे रहनुमाओं का चुना जाना संभव नहीं, जो उसके लिए ऐसे कानूनों की रचना करें, जो शोषण से मुक्ति दिलाकर सच्चे समाजवादी समाज स्थापना में सहायक सिद्ध हों। वर्माजी के मतानुसार, ''जिस प्रकार मात्र अहिंसा से अंग्रेज यहाँ से नहीं हटाए गए। खूनी क्रांति का लाल हाथ जरूर राष्ट्रीय आंदोलन के पीछे था। राष्ट्रीयता उसी के चेताने पर जागकर खड़ी हुई। उसी ने विदेशी शासन को निकाला और उसी की आज जरूरत है।'' जब तक कानून निर्माता उन्हें क्रियान्वित करनेवाले अधिकारी, कर्मचारियों तथा जनता में सशक्त राष्ट्रीयता की भावना न होगी, तब तक समाज में सुधार की गुंजाइश कैसे हो सकती है?

इतिहास का निर्माण भौतिक तत्त्वों से होता है, व्यक्ति इतिहास नहीं बनाते। यदि समाज का नए सिरे से इतिहास बनाना चाहते हैं तो देश में भौतिक तत्त्वों का निर्माण होगा। केवल भगवान् अथवा भाग्य के भरोसे रहकर हम समाज के विकास को आगे नहीं बढ़ा सकते। इसके लिए हमें कड़ा श्रम करना होगा। 'पूर्व की ओर' में वर्माजी के शब्दों में श्रम से पूर्व जन्म के पापों का क्षय होता है और इस जन्म के पुण्य का उदय होता है। श्रम जीवन का गौरव, शौर्य का जनक, संपत्ति का दाता, स्वाभिमान का बीज, चमत्कार का पुरोहित और समाज का बल होता है। संपत्ति समाज का अस्थि-पंजर है और श्रम उसका रक्त-मांस, प्राण-धर्म एवं संस्कृति।

आज प्राय: देखा जाता है कि समाज में आलोचना करना एक फैशन और प्रगतिशीलता का द्योतक बन गया है। डॉ. वर्मा का ऐसा विश्वास है कि कार्य ही मनुष्य को ऊँचा उठाता है और जिस समाज में जितने अधिक इस प्रकार के व्यक्ति होंगे, उतना ही समाज समुन्नत होगा। उन्होंने 'अमर बेल' में स्पष्ट कहा है कि काम करनेवाले सिद्धांतों की बहस नहीं करते और सिद्धांतों की बहस करनेवाले काम नहीं करते।

'अमरबेल' के डॉ. सनेही के शब्दों में समाज की आर्थिक प्रगति का शासन वैज्ञानिक योजनाएँ करें और दोनों को प्राणशक्ति अध्यात्म दे तो समाज का निरंतर कल्याण होता रहेगा। स्वतंत्रता और अनुशासन का साथ तभी बन सकता है। समाज में सुगंध और दुर्गंध सभी तत्त्व मिश्रित होकर चलते हैं। यदि सुगंधित प्रबलतर हो तो दुर्गंध छिप जाती है। यदि जागृति व्यक्ति में वह प्रार्थना बनी रहे, मन की खोई हुई शक्ति, शुचिता, उसकी तेजस्विता और प्रेरणा हमारे पास फिर लौटे तो वह सुगंध सदा व्यक्ति एवं समाज में प्रबलता के साथ बसी रहेगी।

वर्माजी का सहकारिता में अमिट विश्वास था। वे समाज की सुगंध व देश के चौमुखी विकास के लिए सहकारी प्रयत्न को अचूक साधन मानते थे। उनका 'अमरबेल' सहकारिता पर आधारित उत्कृष्ट उपन्यास है, जिसमें वर्तमान समस्याएँ और उनके समाधान पूर्ण रूप से लक्षित होते हैं। सहकारिता के संबंध में वर्माजी का कथन है—''अध्यात्म और भौतिकवाद को जोड़नेवाली एक मजबूत कड़ी सहकारिता ही है—यथार्थ के सिंहासन पर आदर्श की मूर्ति का स्थापन। समाज के वृक्ष को तरह-तरह की अमरबेलें उसे डसे जा रही हैं, उनके काटने का एकमात्र हथियार है—सहकारिता।''

वर्माजी का चाहे 'अमरबेल' उपन्यास हो या 'भुवन-विक्रम', चाहे 'पूर्व की ओर' नाटक हो या 'हंस-मयूर', सभी में आधुनिकता के दर्शन होते हैं और मिलता हैं—वर्तमान समस्याओं से जूझने के लिए मार्गदर्शन। सचमुच उनका जीवंत साहित्य सत्यप्रेरणा और नए समाज-निर्माण के लिए सदैव संबल एवं स्फूर्ति प्रदान करता रहेगा।

साअ
३७२/९८ ए, सिविल लाइंस
ग्वालियर रोड,
झाँसी-२८४००१ (उ.प्र.)
दूरभाष : ०८४१५०३११०२

कहानी

मेरा मुझमें कुछ नहीं

● रश्मि कुमार

सुपरिचित कथाकार। पाँच कहानी संग्रह, दो उपन्यास प्रकाशित। एक पुस्तक संपादित। भाऊराव देवरस संस्थान का 'युवा साहित्यकार सम्मान', उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान का 'सर्जना पुरस्कार' एवं 'शिंगलू पुरस्कार' प्राप्त। दूरदर्शन एवं आकाशवाणी से रचनाओं का प्रसारण।

ट्रेन जब स्टेशन पर पहुँची तो सुबह होने ही वाली थी। उजाला पूरी तरह हुआ नहीं था। प्रभा चार बजे ही उठकर बैठ गई थी। इस साठ वर्ष की उम्र में भी मायके आने का उतावलापन उसे कहीं-न-कहीं पुलकित कर देता है। वैसे देखा जाए तो मायके में न माँ है न भाभी, जो उसके आने पर उसका नेह-छोह करतीं, घर पूरी तरह से स्त्री विहीन है। पिता माँ और भाभी से पहले गुजर गए थे। प्रभा के बड़े भाई साहब को कभी परिवार से मतलब नहीं रहा, ले-देकर प्रभा के दूसरे भाई हैं, जो उम्र में प्रभा से करीब पाँच वर्ष बड़े हैं। पुत्री का विवाह कर चुके हैं और पुत्र दीपक मुंबई की किसी मल्टीनेशनल कंपनी में नौकरी करता है। अपने साथ काम करनेवाली किसी दक्षिण भारतीय लड़की से विवाह कर चुका है। दीपक के विवाह के बाद करीब दो साल होने को आए, प्रभा का अपने भाई यानी कि दादा से मिलना नहीं हो पाया है। प्रभा जब भी आती है तो दादा उसे स्टेशन पर खड़े मिलते। इस बार उसने कह-सुनकर उन्हें स्टेशन आने से मना किया था। अपनी सौगंध तक देने से नहीं चूकी। अपना ट्रॉली बैग लेकर जब प्लेटफार्म पर उतरी तो सामने अखबार वाला दिख गया, उसे आवाज देने ही वाली थी कि वह स्वयं अखबार और चाय का गिलास लेकर सामने आ खड़ा हुआ। इससे पहले कि वह पर्स से पैसे निकालकर उसे देती, उसने चाय पकड़ाई और सिर झुकाकर मुसकराता हुआ जाने लगा, वह बोल पड़ी—''अरे तुम्हारे पैसे कितने हुए?''

हाथ के इशारे से उसने मना कर दिया और अपना अखबार उठाकर चलता बना। प्रभा ने ध्यान से देखा तो पहचान गई, दादा के घर काम करनेवाली कमली का बेटा नन्हकू था, जो स्टेशन पर अखबार बेचता था। यद्यपि पाँच रुपए की चाय थी, पर नन्हकू के पैसे लिये बिना चले जाने से मायके आने की एक पुलक चाय की गरमाहट के साथ उसके गले से कलेजे तक उतर गई। नानी-दादी गलत नहीं कहा करती थीं कि 'औरत को तो मायके का कौआ भी प्यारा होता है।' यह नन्हकू तो जीता-जागता इनसान है। बाहर निकली तो ड्राइवर दादा की गाड़ी लेकर खड़ा था। जाने-पहचाने रास्ते से होकर गाड़ी दादा की सोसाइटी के अंदर दाखिल हुई तो प्रभा को लगा कि वॉचमैन से लेकर लिफ्टमैन तक को उसके आने की खबर है। डोरबेल पर उँगली रखने से पहले दादा की आवाज आई, ''अंदर आ जाओ प्रभा, दरवाजा खुला है।''

''गजब, इतनी सुबह आप उठकर दरवाजा खोलकर मेरा इंतजार कर रहे हैं।'' पाँव छूने से पहले प्रभा बोल पड़ी।

''और नहीं तो क्या, तू कौन सा रोज आती है।''

वही धीर-गंभीर वात्सल्य से भरा हुआ स्वर। अचानक प्रभा को लगा कि इस सजे-सजाए दो कमरे के फ्लैट में दादा बिल्कुल अकेले हैं। इसके पहले वह जब भी आई तो किसी-न-किसी आयोजन में ही आई। घर रिश्तेदारों से भरा रहा करता था, नहीं तो दोनों बच्चों में से ही कोई-न-कोई होता। पहली बार दादा को अकेले देखा उसने। ड्राईंगरूम में सोफा कम-बेड पर अधलेटे से दादा जाने क्यों उसे बहुत कमजोर लगे। पिछले दो सालों में ही इतना परिवर्तन कैसे हो गया। दीपक की शादी में तो स्वस्थ और खुश देखा था उन्हें। पूछ ही लिया उसने—

''दादा, आप बीमार हैं क्या?''

''अरे नहीं प्रभा, अच्छा भला तो हूँ।''

''पर मुझे तो आप वीक लग रहे हैं।''

''उम्र का असर है रे, कुछ खास नहीं।''

''आप अपना ध्यान नहीं रखते।''

''रखता हूँ प्रभा।''

''कमली काम नहीं करती क्या?''

''करती है न, आती ही होगी।''

तब तक कमली आ खड़ी हुई, प्रभा को देखते ही बोली—

''आ गई दीदी, अकेले आई क्या, मेहमान नहीं आए?''

''नहीं, इस बार मैं अकेली ही आई हूँ, उन्हें छुट्टी नहीं मिली।''

''हाँ, सो तो है ही, इतने बड़े हाकिम हैं।''

कमली घर में सबके मुँह लगी थी। प्रभा की माँ उसे अपने गाँव से लेकर आई थी उसके पति और बेटे के साथ। दादा का ड्राइवर उसी का पति है। माँ और भाभी के समय से ही वह इस घर में काम करती थी। दोनों के जाने के बाद इस घर को, बच्चों को सँभालने में उसकी बहुत बड़ी भूमिका रही। अब उसकी उम्र हो चली थी, पर घर की सार-सँभाल कर लेती थी।

नाश्ते की टेबल पर अपनी पसंद के सत्तू के पराँठे देखकर उसे अच्छा लगा। उसकी प्लेट परोसती हुई बोली कमली, ''खाओ दीदी, बताओ कैसा बना है, हफ्ते भर से साहेब तुम्हारे आने की तैयारी में लगे हैं।''

''हफ्ते भर से!''

''अउर क्या परभा दीदी, तुमको जो-जो पसंद है, सब बनाने का समान मँगाए हैं। अरे इतना किसिम-किसिम का समान तो महीने भर में

नहीं मँगाते साहेब।''

प्रभा कह नहीं पाई कि दो दिन बाद वापसी का टिकट उसके पर्स में धरा है। कमली का बोलना अनवरत जारी था—''आज तुम हो तो घर घर लगता है, चौका में काम पसरा है, नहीं तो साहेब का खाना बस वही रोटी अउर लौकी। कभी-कभी तो उहो नहीं।''

''क्यों बच्चे आते होंगे, दादा की ससुराल भी तो दूर नहीं है।''

''बच्चे, अरे कहाँ दीदी, बिटिया तो ससुराल की होकर रह गई, यही ठीक है, अब उही न उसका घर है, पर फउन रोज करती है, नित दिन साहेब का हाल-चाल लेती है।''

''और दीपू?''

''अरे उसका क्या पूछती हो परभा दीदी। न कौनो फउन, न खबर, उसका त कौनो थाहे-पता नहीं मिलता।''

''मतलब, आता नहीं है।''

''अरे आया रहा एक बार आपन बहुरिया साथे, चार दिन रहा, जउन-जउन समान उसका मतलब का था, ले गया बटोरि कै।''

''ठीक तो है, वहाँ इस्तेमाल हो जाएगा, यहाँ फालतू ही पड़ा रहता।''

''अरे फालतू काहे दीदी, इहो तो उसका घर है। एक ही तो बिटवा है, घर-दुआर किसका है, उसी का न। सो उस घर-दुआर की कौनो चिंता है उसको।''

''बच्चे भी क्या करें कमली। काम ही इतना रहता है प्राइवेट फर्म में कि पूछो मत।''

''आरे त अकेले बूढ़े बाप की देख-भाल करना क्या उसका काम नहीं।'' कमली आदतन बिना लाग-लपेट के दो टूक बोली।

प्रभा को जवाब नहीं सूझा, फिर भी बोली, ''धीरे-धीरे समझ जाएगा, अभी-अभी ब्याह हुआ है उसका, जिम्मेदारी पड़ेगी तो मैच्योर भी हो जाएगा।''

''आरे यही तो दुःख है न दीदी, कईसा बिहाव हुआ है दीपू का, हम तो कह दिए साहेब से, कैसी बहू लाए हो, इसको कुछौ काम-काज नहीं आता।''

इतना सुनकर प्रभा आसमान से नहीं गिरी, कमली की जीभ की धार से वह परिचित थी, वरना आजकल ऐसी तीखी बात तो सगी सास भी बहू के लिए नहीं कह सकती, घर में कामवाली की क्या मजाल। पर कमली की बात और है, तीखी जुबान के बावजूद वह भरोसेमंद और जिम्मेदार महिला है। प्रभा की माँ के समय से इस घर में काम करती है, पूरी बीमारी भाभी की सेवा की, उनकी मृत्यु के बाद दोनों बच्चों को सँभाला, क्योंकि दादी-ताई को तो दुःख के मारे अपना ही होश नहीं था, उसका स्थान अपने आप घर के सदस्य की तरह हो गया था, प्रभा जानती थी, इसलिए उसकी बातों को बुरा माने बगैर बोली, ''वह भी सीख जाएगी कमली, आज-कल पढ़ाई-लिखाई, फिर नौकरी, फुरसत ही कहाँ मिलती है उन्हें।''

''लो और सुनो, तुम क्या अँगूठा-छाप हो, प्रोफेसर हो कि नाहीं, इत्ता मोटा-मोटा पोथी पढ़ती हो, पर कउन काम नहीं आता तुमको बोलो भला, सिलाई-फराई से लेकर पकवान बनाने तक।''

''चलो छोड़ो न कमली, अच्छा यह बताओ, दीपू के ननिहाल वाले, वे नहीं आते कभी।''

कमली चावल की थाली लेकर वहीं जमीन पर बैठ गई। आज खुश थी, दोपहर में पूरा भोजन बनना था, कढ़ी-चावल, सूखे आलू, पापड़ आदि। चावल बीनते हुए तुनककर बोली, ''आ जाते हैं तीज-त्योहार, कउन रोज आते हैं।''

''अरे, यहीं पास में ही तो रहते हैं।''

''उससे क्या हुआ, दूरी तो मन का होता है दीदी। अब उनके लिए यहाँ क्या धरा है, वे क्यों आएँगे, ऊपर से साहेब रिटैर भी हो गए।''

''नहीं-नहीं, ऐसा नहीं है, भाभी के जाने के बाद उन्होंने ही बच्चों को सँभाला है। हमें यह नहीं भूलना चाहिए।''

''जनती हैं हम, बच्चन के सँभाला, साहेब ने कुछौ नहीं किया क्या अपने बच्चन वास्ते। आरे जब बहूजी मरी रही, उमिर का रहा साहेब का, उ चाहते तो तुरत दूसर बियाह कयी लेते। पर नाहीं, दूनों बच्चन के अलावा उनका लिए जिंदगी में अउर कुछो नाहीं बचा रहा।''

एक लंबी साँस लेकर रह गई प्रभा। बात सच थी, जब पत्नी का देहांत हुआ तब दादा की उम्र चालीस के आस-पास रही होगी। परिवार ने दूसरी शादी के लिए मनाने की बहुत कोशिश की, पर वे तैयार नहीं हुए। प्रभा ने जब कहा तो बोले, 'देखो प्रभा, इन बच्चों की माँ तो रही नहीं। जैसी भी थी, इनकी माँ थी। ये बच्चे बिन माँ के तो हो ही गए, दूसरी शादी करके मैं इनसे इनका बाप भी कैसे छीन लूँ।'

सिहर उठी प्रभा, बोली, 'आप ऐसा क्यों सोचते हैं दादा, आपके बच्चे कभी आपसे दूर नहीं होंगे, हर सौतेली माँ नेगेटिव ही हो, जरूरी तो नहीं।'

'जरूरी तो बहुत कुछ नहीं होता है रे प्रभा! फिर भी इनसान सबकुछ कहाँ मैनेज कर पाता है। इनसान के हाथ में है ही क्या, कुछ भी तो नहीं।'

'ऐसा क्यों कह रहे हैं दादा, आपने तो हमेशा सबकुछ सँभाला, पर होनी को कौन टाल सकता है।'

कहने को प्रभा कह गई, पर जानती थी, उसके दादा की जिंदगी में होनी नहीं, अनहोनी हो गई थी। ऊपर से दादा की बात ने उसका कलेजा चीर दिया, 'जैसी भी थी, इनकी माँ थी।'

दादा की पत्नी यानी अपनी भाभी से वह कभी अभिन्नता से जुड़ नहीं पाई। दादा के विवाह के साल भर के अंदर स्वयं उसका विवाह हो गया। दादा के दहेज की मोटी रकम उसके विवाह में खर्च हो गई थी, वह जानती थी। भाभी संपन्न घर की इकलौती पुत्री थीं। लड़के का पद देखकर उनके पिता ने उनका कन्यादान किया था। प्रभा के परिवार के साथ उनका ताल-मेल कभी नहीं बैठ पाया। निम्नमध्यमवर्गीय बेहद महत्त्वाकांक्षी परिवार की अपेक्षाओं को पूरा करने में तन-मन-धन से लगे हुए पति के साथ शायद वह चाहकर भी चल नहीं पाईं। आज प्रभा महसूस करती है कि दादा अपनी पत्नी के लिए परिवार में स्पेस बनाने में चूक गए, या शायद उन्होंने इस बात पर गौर करने की अलग से जरूरत नहीं समझी, मोहलत ही नहीं मिली। आज प्रभा यह भी महसूस करती

है कि अपेक्षाओं और महत्त्वाकांक्षाओं को सीमित किया जा सकता था, पूर्वग्रह को परे करके उस संपन्न घर की कन्या को बिना किसी मीन-मेख के अपनाया भी जा सकता था। आखिर 'जहाँ राग हो, वहाँ दोष दिखाई नहीं देता, पर जहाँ द्वेष हो वहाँ गुण भी कहाँ दिखता है।' अविवाहित बहन, अचानक ही तथाकथित बेहद निरीह और जरूरतमंद बन गए बड़े भाई साहब, अनायास ही बेवजह अपनी नई चाची की प्रतिद्वंद्वी बन बैठीं उनकी दोनों बेटियाँ, हर वक्त बीमार रहनेवाली उनकी पत्नी, अपने त्याग और अधिकार के साथ अनवरत मुखर और सतर्क माँ-बाप, दादा की पत्नी के लिए कोई भी रिश्ता नॉर्मल नहीं रह पाया। एक अव्यक्त तनाव हर वक्त परिवार में पसरा रहता, पति-पत्नी के बीच एक अदृश्य दीवार नामालूम ढंग से खिंच गई।

जब भाभी के कैंसर का पता चला, बीमारी अपने आखिरी स्टेज में पहुँच चुकी थी। पत्नी का इलाज कराने के लिए मुंबई जाने के लिए निकले दादा को बीच रास्ते लौटना पड़ा, क्योंकि दीपू डेंगू की चपेट में आ गया। दीपू के स्वस्थ होने के बाद जब तक वे मुंबई पहुँचे, तब तक देर हो गई थी। भाभी के गुजर जाने के बाद बिखरी हुई गृहस्थी समेटते हुए उन्होंने अपने सारे फर्ज पूरे किए। दोनों बच्चों की परवरिश उन्होंने अकेले की। आज प्रभा मानती है कि बच्चों की बुआ होने के बावजूद दोनों बच्चों की जिम्मेदारी लेने की उसने कोई पहल नहीं की। उसकी अपनी गृहस्थी की उलझनें कम नहीं थीं। माता-पिता की उम्र हो चली थी, उन्हें स्वयं देखभाल की जरूरत थी, जो केवल दादा ही कर सकते थे। ऐसे में दादा के ससुराल वाले बच्चों की देखभाल के लिए आगे आए। उन्हें हॉस्टल पढ़ने भेजा, छुट्टियों में भी बच्चे अधिकतर ननिहाल में ही रहते। दादा को थोड़ी राहत तो मिली, पर बच्चों के कच्चे दिमाग में यह बात घर कर गई कि उनकी माँ की मृत्यु परिवार की लापरवाही की वजह से हुई। पिता पारिवारिक जिम्मेदारियों में ऐसे उलझे रहे कि पत्नी की देखभाल के लिए उनके पास समय ही नहीं था। प्रभा उनका दुःख समझती थी, उनकी बेटी असमय चली गई, उनका आक्रोश स्वाभाविक ही था। यही सब सोचते हुए वह दादा के पास आ बैठी, बोली, ''यहाँ अकेले आपका मन कहाँ लगता होगा, बच्चों के पास हो आया कीजिए।''

''जाता हूँ, बिटिया के पास गया था पिछले महीने।''

''हफ्ते भर रहकर आया, वह आने कहाँ दे रही थी, बड़ी कठिनाई से आने दिया उसने। समय निकालकर वह भी आ जाती है।''

''और दीपू?''

''उसको छुट्टी कहाँ मिलती है, बहू भी काम पर जाती है।''

''आप ही हो आया कीजिए।''

''गया था मैं।'' धीमी आवाज में बोले दादा।

''कब?''

''साल भर हो गया होगा।'' जैसे बुदबुदा उठे दादा।

''वह आया?''

''अरे कहाँ दीदी, फउन तक तो करता नहीं।''

कमली चाय की ट्रे लिये सामने थी।

''अरे ऐसे कैसे? आप फोन कीजिए।''

''रहने दे, अभी व्यस्त होगा।''

''आज संडे है, आप लगाइए फोन।''

''ले, तू ही लगा ले।'' उन्होंने अपना फोन दे दिया।

प्रभा ने नंबर लगाया, घंटी बजती रही। दुबारा लगाया, घंटी फिर बजती रही, फोन नहीं उठा।

''वह मेरा फोन नहीं उठाता, प्रभा।''

''अरे, हो सकता है सो रहा हो, आज संडे है न।''

अनायास ही प्रभा दीपू की तरफ से सफाई दे उठी।

''अब तू अपने फोन से फोन लगा।''

''हाँ, अभी लो।'' अपना आत्मविश्वास बनाए रखा प्रभा ने।

दूसरी घंटी पर फोन उठा। दीपू की आवाज आई—

''हाय बुआ। हाऊ आर यू?'' तो भाई सही थे, प्रभा का मन बुझ गया, पर आवाज पर कोई असर नहीं पड़ने दिया उसने, बोली, ''अच्छी हूँ बेटा, तुम कैसे हो?''

''फाईन।''

''तो बुआ से मिलने कब आ रहे हो?''

''आय विल ट्राय, दिल्ली का टूर लगाता हूँ।

प्रभा ने दादा की तरफ देखा, उन्होंने इशारे से मना कर दिया।

प्रभा ने स्वयं के पटना में होने की बात नहीं बताई। फोन रखने के बाद बोली, ''यह दीपू आपका फोन नहीं उठाता?''

भाई कुछ नहीं बोले, छत ताकते रहे।

''आप कुछ कहते क्यों नहीं?''

''क्या कहूँ, दोनों सुबह काम पर निकल जाते हैं, देर रात घर लौटते हैं, वहाँ रहते हुए भी कई-कई दिन बात नहीं हो पाती।''

''पर बात-व्यवहार भी कोई चीज होती है।''

''दीपू ने कभी सीखा नहीं, इसकी जरूरत नहीं समझी कभी, मैं ही नहीं सिखा पाया।''

''पटना कब से नहीं आया?''

''करीब डेढ़ साल हो गए, पर आएगा ही, कितने दिन टालेगा, आखिर उसी का घर है।''

''नाराजगी किस बात की है?''

''नाराजगी तो कुछ नहीं है प्रभा। थोड़ा निर्लिप्त और लापरवाह है, अकल आएगी तो खुद ही दौड़ा आएगा। कितने दिन बाप से दूर रहेगा।''

बहुत पहले प्रभा को अपनी ही कही बात याद आ गई। 'आपके बच्चे आपसे कभी दूर नहीं होंगे।' भारी मन को हल्का करने के लिए बोली, ''तो आप उसका इंतजार करते रहते हैं।''

''करूँगा ही, और काम ही क्या है, इसलिए तो रात में दरवाजा भी बंद···।''

दादा अचानक चुप हो गए।

''रात में दरवाजा क्या?''

''कुछ नहीं रे, यों ही।''

प्रभा जानती थी, यह दीपू भाई के कलेजे का टुकड़ा है, पत्नी की मौत के बाद उन्होंने दोनों बच्चों को गले का हार बना लिया। धीरे-धीरे कब दूरी आ गई, पता ही नहीं चला।

रात का खाना खिलाकर कमली जाते वक्त बोल गई ''दरवज्जा ठीक से बंद कर लेना दीदी, आज तो तुम हो घर में।''

''मैं हूँ मतलब, मैं नहीं रहती तो क्या दादा दरवाजा बंद नहीं करते हैं रोज।''

''अब ई तो तुम अपने दादा से ही पूछौ।''

''क्या बात है दादा, यह कमली क्या कह रही है?''

''अरे कमली की बात, उसका तो दिमाग ही खराब है, दिनभर उसके साथ बक-बक करके तुम्हारा भी दिमाग फिर गया है। कमली की बात का भी कोई मतलब होता है कभी।'' दादा के बोलने का जाना-पहचाना पुराना लहजा कौंध उठा एक पल के लिए। डाँट सुनकर जी जुड़ा गया। सुबह से उनके इसी स्वर को सुनने के लिए कान तरस गए थे। भाई के सुर में सुर मिलाकर बोल उठी प्रभा, ''दिमाग क्यों खराब होगा, आप पूरी बात बताते भी हैं कभी।''

''अब इसमें बतानेवाली बात क्या है, सुबह से बोल-बोलकर मेरा सर खा गई है, अब सो जा-जाकर, आधी रात होने को आई।'' प्रभा समझ गई, भाई बात टालने के मूड में हैं, कल दिन में इतमिनान से पूछेगी।

दूसरे दिन दोपहर में खाने के बाद कमली के लिए लाई साड़ी उसे देते हुए बोली, ''मैं कल चली जाऊँगी, कमली।''

''क्या दीदी, कल ही जाओगी, अभी रहो न कुछ दिन।''

''फिर आऊँगी कमली, अभी तो जाना पड़ेगा।''

''पता नहीं फिर कब आओगी दीदी।'' साड़ी गोद में लेकर वह वहीं जमीन पर बैठ गई, फिर अचानक बोली, ''अपने दादा को अपने साथ ही ले जाओ दीदी, साहेब ठीक नहीं हैं।''

अकेले, बूढ़े और विधुर दादा को अपने साथ ले जाने का खयाल प्रभा के मन में नहीं आया हो, ऐसा नहीं है। कल से वह भी यही सोच रही है, लेकिन निर्णय नहीं ले पा रही है। वह आत्मनिर्भर है, नौकरी करती है, अपना घर है, अपना परिवार है, पति है, बेटा है, बहू है। फिर भी अपने बड़े भाई को अपने साथ रखने का निर्णय अकेले लेना कठिन लग रहा है। दो-चार दिन की बात और है, पर स्थायी रूप से साथ रहने पर क्या वह उनका मान रख पाएगी। उस पर दादा का स्वाभिमानी व्यक्तित्व, उनकी भावनाओं को ठेस पहुँचाने के बारे में वह सोच भी नहीं सकती। आज एक बार फिर प्रभा ने अपने आपको वहीं खड़े पाया, जहाँ वह वर्षों पहले भाभी की मृत्यु के समय खड़ी थी। बच्चों से अपार स्नेह रखने के बावजूद वह उन्हें अपने पास रखने की हिम्मत नहीं जुटा पाई थी। अपने दोनों बच्चों के साथ-साथ वह क्या दादा के बच्चों के साथ भी पूरा न्याय कर पाएगी। धर्मसंकट आज भी वही था। कमली की बात सुनकर वह सोच में पड़ गई। बोली, ''क्या बात है कमली, साफ-साफ बोलो?''

''क्या बोलें, तुम तो देख ही रही हो, तुमको नहीं लगता कि साहेब बहुत बदल गए हैं, सच पूछौ तो सठिया गए हैं समझो।''

''क्या मतलब?'' न चाहते हुए भी प्रभा का स्वर थोड़ा रूखा हो गया।

''न कहूँ आते हैं न जाते हैं, दिनभर घर बैठकर कोई भी बीमार हो जाएगा।''

''सो तो है।''

''दिन में तो फिर भी ठीक है, अखबार बाँच लेते हैं, कबहूँ टी.भी. देख लेत हैं।''

''और रात में?''

''अब क्या बताईं तुमका, तुम देखे नहीं रातभर दरबज्जा खोलकर सोते हैं, दिन में भी दरबज्जा खुल्ले रहता है।''

प्रभा को याद आ गया, जब वह कल सुबह आई थी तो दरवाजा खुला मिला था। कमली के मुँह से सुनकर चौंक उठी, बोली, ''दिन-रात दरवाजा खुला रहता है।''

''अउर क्या, कौनो चोर-उचक्का घुस आय तो।''

बात गंभीर थी, प्रभा ने भाई से बात की, बोली, ''यह क्या कह रही है दादा, आप रात में द्वार बंद नहीं करते।''

''अरे, ऐसा कुछ नहीं है, कमली की बात का क्या?''

''पर कल सुबह मैंने भी देखा था।''

''वो तो तू आनेवाली थी न इसलिए।''

''अरे नाहीं दीदी, हम तो रोज आती हैं भोर में, रोज तो इहे हाल रहता है।''

''अच्छा जा तू अपना काम कर, कल चली जाएगी प्रभा, जो-जो बना के खिला सकती है, खिला दे। फिर जाने कब आएगी।''

''हाँ, जैसे मैं खाने ही तो आई हूँ।'' प्रभा के भीतर की छोटी बहन जाग उठी।

''अरे नहीं रे, ऐसा थोड़े कहा मैंने।''

''पर आप द्वार बंद क्यों नहीं करते, रात-बिरात कोई घुस आया तो?''

''अरे कौन आता है प्रभा?''

''चोर-उचक्के आपका अपॉइंटमेंट लेकर तो नहीं आएँगे।''

''लो वे आकर क्या करेंगे, घर में है ही क्या उठा ले जाने को।''

''जानती हूँ, भाभी के जो दो-चार गहने थे, वो भी दे डाले उठा के आपने दीपू की शादी में।''

''अब जिसका था, उसको सौंप दिया।''

''फिर भी इनसान का सतर्क रहना चाहिए कि नहीं।''

''यहाँ सोसाइटी में कोई डर नहीं है प्रभा, गार्ड हैं, चारों तरफ कैमरे लगे हैं।''

प्रभा उठकर रसोई में चली गई, कमली से बोली, ''दादा भी हद करते हैं, सोसाइटी में सिक्योरिटी न हुई, राम-राज्य हो गया।''

''अरे, काहे का राम-राज्य दीदी, साहेब को मन में वहम हो गया

है।''

इतने सुलझे विचारवाले दादा के मन में वहम, प्रभा दु:खी हो गई, बोली, ''किस बात का वहम?''

''मर जाने का और क्या?'' दो टूक बोली कमली।

इस बार प्रभा आसमान से गिरी, बोली, ''क्या कह रही हो कमली?''

चूल्हा बंद कर कमली फर्श पर बैठ गई, गाल पर हाथ रखकर बोली, ''सही कह रहे हैं दीदी, हम अपना कान से सुने हैं।''

''क्या सुना?''

''अरे पिछले दिनों बड़े भाई साहब आए थे, पता नहीं किसके मर जाने की खबर लेकर। अच्छी खबर तो कोई लाता नहीं, हाँ बुरी खबर देने के लिए उन्हें सबसे पहले साहेब ही मिलते हैं।'' प्रभा जानती थी अपने बड़े भाई साहेब को, अपना हर काम, अपनी हर जिम्मेदारी दादा पर थोप देने के बावजूद अगर वे दो दिन खुश रह लेते तो बीमार पड़ जाते।

''फिर।''

''फिर क्या, सुनकर साहेब दु:खी हो गए, बोले, ''अरे, वो तो मुझसे भी छोटा था, मुझसे पहले चला गया।'' इस पर भाई साहेब अपना ज्ञान बघारते हुए बोले, ''अब जीवन का क्या ठिकाना, संसार है, आना-जाना तो लगा ही रहता है, हम सब पके फल हैं।'' बस उस दिन के बाद से साहेब ने दरबज्जा बंद करना छोड़ दिया।

प्रभा एक लंबी साँस लेकर रह गई। कमली आगे बोली, ''सिरिफ इहे बात नहीं न है दीदी, तुम तो जानती हो इस घर में जो भी आता है, अपना ही रोना रोता है, साहेब का हाल भी कोई पूछता है कभी।''

प्रभा ने चुपचाप सिर हिला दिया, बात गलत नहीं थी। वह जानती थी कि दादा की पीठ पीछे सभी खाते हैं, पीते हैं, हँसी-मजाक करते हैं, दादा को देखते ही अस्सी मन पानी पड़ जाता है उन पर। गृहणी विहीन इस घर के कई तथाकथित शुभचिंतक थे। यह शिकायत दादा के बच्चों को भी थी, एक बार तो बेटी उसके सामने ही बिफर उठी, बोली, ''ओ माई गॉड बुआ, डैडी के पास जो आता है, निगेटिव बातें ही करता है, पॉजिटिव एनर्जी आए कहाँ से। पता नहीं डैडी इतना सुनने का पेशेंस कहाँ से लाते हैं।''

पर दादा सबकी सुनते थे, हर संभव मदद भी करते थे, किसी के ऊपर शक नहीं करते थे। दादा के इस निश्छल मन और धीर-गंभीर स्वभाव की वह कायल थी। वही दादा आज वहम के शिकार हो गए हैं, अवसादग्रस्त और साईको हो गए हैं। प्रभा स्वीकार नहीं कर पा रही थी, बोल उठी, ''नहीं-नहीं, कमली दादा ऐसे नहीं हैं।''

''अरे, तुम बिटिया रानी से पूछ लो दीदी, अभी पिछले महीने आई थी, वह भी कह रही थी।'' कमली की सूचना का सूत्र प्रभा के हाथ आ गया, बोली, ''क्या कह रही थी?''

''अरे अपने दूल्हे से कह रही थी कि मुझे डैडी के लिए डर लग रहा है, वे धीरे-धीरे डिपरेस, वो क्या हो जाता है तुम लोगन की, डिप, डिपरेस...।''

''डिप्रेशन।'' न चाहते हुए भी प्रभा के मुँह से निकल गया।

'हाँ-हाँ वही, डिपरेसन हो गया है साहेब को, बिटिया कह रही थी किसी के भी बीमार होने की खबर डैडी सुनते हैं तो लगता है उन्हें भी वही बीमारी हो गई है, मरने की बात सुनते हैं तो लगता है, उन्हें ही कुछ हो जाएगा।''

''वह जानती है।''

''अउर क्या, बहुत परेसान थी, कह रही थी, 'आप ये सब फालतू बातें मत सोचा कीजिए। मेरे साथ चलिए, वहीं चलकर रहिए।' पर तुम तो जानबे करती हौ न साहेब को, नहीं गए तो बस नहीं गए। जाते समय रो पड़ी बिटिया, बोली तुम और नन्हकू ध्यान रखना, अपने ड्राइवर चाचा से भी कह गई।''

''क्या?'' अनमनी सी बोली प्रभा।

''इहे कि उसके डैडी को घुमाया-फिराया करे। घर में बैठे-बैठे निरास हो जाते हैं। उन्हें लगता है कि कहीं उन्हें कुछ हो गया या अकेले घर के अंदर गिर-गिरा गए, बेहोस हो गए तो कोई दरबज्जा खोल के कैसे आएगा, किसी को मदद के लिए कैसे बुलाएगा, इसलिए दरबज्जा बंद नहीं करते। कहते हैं दरबज्जा तोड़ने में तो बहुत समय न लग जाएगा।''

प्रभा और नहीं सुन पाई, अपने कद्दावर भाई के इस अंजाम की कल्पना नहीं कर पाई वह, कमली को टोक उठी—''नहीं-नहीं, ऐसा क्यों होगा, कभी नहीं होगा, मैं समझाऊँगी दादा को।''

''जरूर कहना दीदी, बिटिया की तो सुने नहीं। लोग गलत नहीं कहते कि बच्चे की माँ न मरे, न बूढ़े की बीबी, दोनों ही अनाथ हो जाते हैं। बीबी तो बुढ़ापा आने से पहले गुजर गई, उ समय जंजाल एतना रहा कि साहेब को अपने बारे में सोचने का होष ही नहीं था। पर अब क्या करें, हमको तो लगता है दीदी कि जीने के लिए जंजालों का होना जरूरिए है।''

प्रभा हैरान रह गई सुनकर, कभी-कभी ये अँगूठा छाप औरतें कितनी गहरी बात कह जाती हैं। जिंदगी की इतनी समझ प्रभा जैसी बुद्धिजीवी वर्ग की संभ्रांत महिलाओं में नहीं होती, जो कमली जैसी महिलाओं पर तरस खाकर, उन्हें गाहे-बगाहे साड़ी, पैसा देकर स्वयं को प्रोग्रेसिव समझ लेती हैं।

कमली से पूछ बैठी, ''दीपू को मालूम है यह?''

''लो, मालूम काहे नहीं होगा, कौनो दूध-पीता बच्चा है। साहेब तो मुँह खोलकर कहे भी थे साथ जाने को।''

''क्या कहा?''

''कहे कि मैं यहाँ अकेला क्या करूँगा, मैं तुम लोगों के साथ चलूँ। मेरा पेंशन तुम ही ले लेना, मैं क्या करूँगा पैसे लेकर?''

''फिर?''

''फिर क्या, यह सुनते ही दीपू की बहुरिया तो तुरंत उठकर चली

गई कमरे में, पीछे-पीछे दीपू भी। बात नहीं खतम हो गया।''

''बात खत्म हो गई, दीपू ने कुछ भी नहीं कहा, पर मना भी तो नहीं किया न।'' प्रभा ने जैसे अपने आपको दिलासा देने की कोशिश की।

''आरे दीदी, ई तो मुँह खोलकर मना कर देने से ज्यादे खराब है। बातें नहीं सुनना, बहिर बन जाना। सामनेवाला करे भी क्या, जब कौने बात का जवाबे नहीं मिले। आरे इससे भली तो मेरे नन्हकुआ की बहू है, लड़ती है, झगड़ती है, पर मेरा रास्ता देखती है। मुँह फुलाती है, पर फिर थरिया भी परस के देती है। कल जो तुम सरिया दी न दीदी, हम ले जा के उसको दे दिए, अब दो-चार दिन खुस रहेगी बहुरिया।''

प्रभा समझ गई, कमली जैसे लोगों को क्यों डिप्रेशन की बला नहीं होती। उसने ठीक ही कहा था, 'वो जो तुम लोगन की होता है न डिपरेसन।' उसकी बात से सहमत होती हुई बोली, ''ठीक कहती हो, दीपू भी लड़ता-झगड़ता, पर कम-से-कम साथ तो रहता।''

प्रभा नई पीढ़ी के इस व्यवहार को जानती थी। सिर्फ बात का ही नहीं, जीते-जागते इनसान का भी नोटिस नहीं लेना। उदासीनता की ऐसी चरम सीमा कि बोलनेवाला व्यक्ति अपना अधिकार, आत्मविश्वास सब खोने लगे। ऐसे व्यक्ति के अंदर अवसाद तो प्रवेश करेगा ही।

''फिर भी साहेब उस दीपुआ का रस्ता देखते हैं। दरबज्जा खोल के रखते हैं। असल बात इहे है, समझी परभा दीदी?''

खिला-पिलाकर, समझा-बुझाकर रात होते-होते कमली चली गई। दादा को समझाने की कोशिश की उसने, ''आप मेरे साथ चलिए दादा, यों अकेले मत रहिए।''

''धत, ऐसा भी कहीं होता है, अब इस उम्र में मैं छोटी बहन के घर जाकर रहूँगा?''

''वह भी तो आप ही का घर है।''

''सो तो है ही, आऊँगा मैं, बच्चों को देखने आऊँगा।''

''आपको ऐसे छोड़कर जाने का मन नहीं है।''

''लो, अच्छा भला तो हूँ, बल्कि मुझे तो तू ही कमजोर लग रही है, अपना ध्यान रखा कर, अभी उम्र ही क्या है तेरी।''

प्रभा का मन भीग उठा, आज भी कुछ बातें सिर्फ दादा ही कह सकते हैं। साठ वर्षीया प्रभा को कानों में दादा की बात मिसरी घोल गई, 'अपना ध्यान रखा कर, अभी उम्र ही क्या है तेरी।'

इस भाई के लिए वह कुछ नहीं कर पा रही है, जोर देकर, जिद करके उन्हें अपने साथ नहीं ले जा पा रही है, स्वयं भी रुकने की गुंजाइश कहाँ है। गृहस्थी की तमाम उलझनें उसका इंतजार कर रही होंगी। पति की सेहत, उनका रिटायरमेंट, पुत्र का उतावलापन, पुत्रवधु की महत्त्वाकांक्षाएँ, अपनी नौकरी, सबको सँभालते हुए अपने उस घर में दादा को कितना स्पेस दे पाएगी। कहीं वहाँ जाकर वे खुद को सहज महसूस न कर सकें तो? आत्मीय संबंध का यह कैसा रूप है, एक-दूसरे से अभिन्न होने के बावजूद न प्रभा उन्हें अपने साथ ले जा पा रही है, न ही वे उसे अधिकार सहित रोक सकते हैं। बेटियाँ क्या सचमुच विवाह के बाद परायी हो जाती हैं, फिर वह चाहे प्रभा हो या दादा की बेटी दिया। कुछ चीजें क्या कभी नहीं बदलती, प्रभा नए सिरे से यह सोचने को मजबूर हो गई।

सांसारिक नजर से समर्थ होने के बावजूद क्या हर कार्य अपने मन-मुताबिक करना संभव होता है, शायद नहीं। दादा ठीक ही कहते हैं, 'जरूरी तो बहुत-कुछ नहीं होता, फिर भी इनसान सबकुछ कहाँ मैनेज कर पाता है। इनसान के हाथ में है ही क्या, कुछ भी तो नहीं।' प्रभा को लगा, इनसान के हाथ में नहीं, सज्जन इनसान के हाथ में कुछ भी नहीं होता। सबका मन रखने में ही जिंदगी बीत जाती है। अपने मन की वह सुन ही कहाँ पाता है!

सुबह उसे अपने जाने की तैयारी करनी पड़ी। उसे विदा करने कमली भी आ पहुँची, बोली, ''दो दिन से साहेब खुश थे। अब फिर अकेला हुई गए।''

न चाहते हुए भी एक अपराध-बोध पसर गया मन के भीतर। कमली उसे चुप देखकर फिर बोली, ''पहुँचते ही फउन कर देना दीदी, फिर जल्दी आना।''

भरे मन से प्रभा ने सिर झुका लिया। दादा से विदा लेते हुए बोली, ''अपना ध्यान रखिएगा दादा।''

''हाँ-हाँ, मैं रख लूँगा ध्यान, तू पहुँच के खबर कर देना।''

प्रभा नहीं कह पाई कि अपने मन में वहम मत पालिए। दरवाजा बंद करके सोया कीजिए। दादा के मन का वहम कहीं नामालूम ढंग से उसे भी तो नहीं छूता जा रहा है। मन-ही-मन थोड़ा हिल गई प्रभा। पर तुरंत सतर्क हो गई, अपने मन में प्रवेश करने से पहले उसने जैसे उस वहम को जी-जान से परे ढकेलने की कोशिश की। अधिकार भरे स्वर में बोली, ''इस बार जब आऊँ तो आप मुझे स्टेशन पर खड़े मिलिएगा, कहे दे रही हूँ।''

''लो, मैं तो आता ही हूँ, तुमने ही तो मना कर दिया।''

''हाँ, मैंने मना कर दिया और आप मान भी गए। जैसे मेरे ही कहे उठते-बैठते हैं।''

''अच्छा बाबा, गलती हो गई, तू झगड़ा मत कर, खुशी-खुशी जा।''

दादा ने हमेशा की तरह बिना किसी कसूर के अपनी गलती मान ली। दादा की कार सोसाइटी से निकलकर मेन रोड पर आ गई। अकेले बालकनी में खड़े दादा को एक बार मुड़कर देखा उसने, मन-ही-मन ईश्वर से माँग बैठी—'अगली बार जब आऊँ तो दादा मुझे अपने ड्राईंगरूम में नहीं, स्टेशन पर खड़े मिलें।'

अपने मन को समझाने लगी प्रभा—'दादा के मन के वहम को दूर करने से पहले उसे अपने मन के अंदर उस बेकार के वहम को घुसने नहीं देना है, जो बार-बार स्वयं उसके मन के बंद द्वार पर दस्तक देने लगा है।'

कार ने गति पकड़ी और अपने गंतव्य की ओर चल पड़ी।

उत्कर्षिणी
२/४३, विपुल खंड, गोमती नगर
लखनऊ-२२६०१० (उ.प्र.)
दूरभाष : ०९४१५४०८४७६

लोक के अप्रतिम गायक : राधावल्लभ चतुर्वेदी

● **नवनीत मिश्र**

लोक अर्थात् एक ऐसा संसार, जिसमें जड़ और चेतन दोनों शामिल होते हैं। लोक, यानी सामान्य जन, जिनके बिना संसार की कल्पना भी नहीं की जा सकती। लोक माने हमारे अंतर्मन को समझने और वाणी देने में हमारे साथ-साथ चलनेवाला अनुभूतियों से भरा एक ऐसा अपनापन, जो बगैर किसी शोर या दावे के हमारे लिए प्राणवायु का काम करता रहता है।

ऐसे ही अनिर्वचनीय लोक को अपने सुरों से मुखर करनेवाले कीर्ति पुरुष थे—पंडित राधावल्लभ चतुर्वेदी। एक ऐसा व्यक्तित्व, जिसकी श्वास की आवन-जावन में संगीत बजता था, शिराओं में संगीत प्रवहमान रहता था और जिसकी संपूर्ण चेतना में संगीत रचा-बसा था। राधा के प्रिय के नाम पर जिनका नाम हो, उसे बाँसुरी से प्रेम होना सहज संभाव्य था। यही कारण रहा होगा कि राधावल्लभजी को चक्रधारी की जगह वंशीवाले की छवि ने मोहित कर लिया। यही मोह पंडित राधावल्लभ चतुर्वेदी की सांगीतिक यात्रा का प्रस्थान बिंदु बना। संगीत का एक शिखर उनकी प्रतीक्षा कर रहा था, लेकिन यह बहुत बाद की बात है।

राधावल्लभजी का संपूर्ण जीवन न तो संगीत की तरह ललित रहा और न लोकगीतों की तरह मनभावन व स्वाभाविक। उनके पिता पंडित टीकाराम चतुर्वेदी अंग्रेजों के जमाने में नाजिर थे। फरमाबरदारी के लिए वे जितने ही विनम्र थे, घर के सदस्यों पर अपनी सत्ता और अधिकार जताने के लिए उतने ही खूँखार भी। १२ जनवरी, १९१७ को मुरादाबाद में जनमे राधावल्लभजी अपने पिता की छठी संतान थे। अपनी जीवन-यात्रा में वे संगीत के अतिरिक्त और कुछ जानना ही नहीं चाहते थे। पिता के लिए यह असहनीय था, क्योंकि वे अपने बेटे को पढ़ा-लिखाकर दारोगा बनाना चाहते थे। स्कूल की उम्र से ही उनकी पीठ पर पिता के कोड़े इस तरह पड़ने लगे, मानो किसी घोड़े को मैदान में उतरने की ट्रेनिंग दी जा रही हो। छात्र राधावल्लभ को किताबों और अपने पिता से समान भय लगता था। पिता को संगीत के प्रति राधावल्लभ का रुझान फूटी आँखों नहीं सुहाता था। संगीत को 'औरताना' चीज मानते थे, जिसकी ओर राधावल्लभ हर समय लालायित दीख पड़ते थे। पढ़ाई-लिखाई को सजा माननेवाले राधावल्लभ चतुर्वेदी के लिए किताबों से भरा बस्ता उसी सजा में पीठ पर लादे गए बोझ जैसा मालूम होता। अपनी रुचि की इधर-उधर की किताबें पढ़ने से उनका स्वाध्याय तो प्रबल हुआ, लेकिन वे कोई बड़ी डिग्री नहीं ले सके। जब घर में साँस लेना तक दूभर जान पड़ने लगा तो अठारह वर्ष की उम्र में वे घर छोड़कर लखनऊ भाग आए। घर से भागने के पीछे पिता की निर्मम मारपीट और संगीत के प्रति अनुराग कारण बनकर उन्हें जोखिम उठाने की ताकत दे रहे थे।

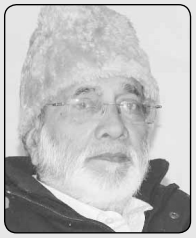

सुपरिचित लेखक। 'मणियाँ और जख्म', 'मैंने कुछ नहीं देखा', 'किया जाता है सबको बाइज्जत बरी', 'जो नहीं कहा गया', 'प्रेम संबंधों की कहानियाँ' (कथा-संग्रह); 'येही-वेही' वाचन कला पर पुस्तक 'वाणी आकाशवाणी' और 'लखनऊ का आकाशवाणी' प्रकाशित। उ.प्र. हिंदी संस्थान से पुरस्कृत एवं पुस्तक 'वाणी आकाशवाणी' को सूचना प्रसारण मंत्रालय की भारतेंदु हरिश्चंद्र पुरस्कार योजना' में प्रथम पुरस्कार।

राधावल्लभजी ने संगीत की अपनी यात्रा शास्त्रीय गायकी से शुरू की थी। लखनऊ में आज जिसे 'भातखंडे संगीत महाविद्यालय' कहा जाता है, उन दिनों उसे 'मैरिस कॉलेज ऑफ म्यूजिक' के नाम से जाना जाता था। सन् १९४० में उसी कॉलेज से फिल्मों में संगीत देकर प्रसिद्ध हुए संगीतकार रोशन ने 'इसराज' में और राधावल्लभजी ने शास्त्रीय गायन में 'संगीत विशारद' की परीक्षा उत्तीर्ण की थी। १९४२ में राधावल्लभजी आकाशवाणी लखनऊ में लोक संगीतकार के पद पर नियुक्त हो गए। वे बेहद कठिन दिन थे।

पिता की मृत्यु के बाद भाइयों की भी एक के बाद एक अकाल मृत्यु होती गई। भाइयों की विधवाओं, उनकी बच्चियों, अपनी विधवा और अविवाहित बहनों को अपनी सीमित आय में असीमित सुख पहुँचाने के प्रयास में पत्नी और एकमात्र पुत्री नीलम हाशिये पर पहुँच गए। विशाल परिवार के लिए राधावल्लभजी के संगीत का अर्थ रोटी, कपड़ा, जूते, स्कूल की फीस, सिनेमा और खाने-पीने की चटपटी चीजों के अलावा कुछ नहीं था, जबकि वे संगीत को सामाजिक सार्थकता देने के लिए स्वयं को जिंदा रखने की पहली शर्त मानते थे। वे दूसरों की चिंता में इतना खोए रहते थे कि अपने बारे में सोचने का उनको वक्त ही नहीं मिलता था। उन्होंने संगीत की ट्यूशन की, लेकिन उसका उद्देश्य धन कमाकर अपना घर भरना नहीं था। उसका उद्देश्य था निर्धन छात्रों की सहायता करना। उनकी इस सदाशयता का पता परिवार को तब लगा, जब उनकी मृत्यु पर वे अज्ञात और अपरिचित विद्यार्थी संवेदना प्रकट करने उनके घर आए।

राधावल्लभजी के जीवनकाल में ही उनकी प्रतिभा को गाँवों की जनता और शहरों के संस्कारित श्रोताओं की प्रियता प्राप्त हो गई थी। यह मरतबा उन्होंने कठिन साधना से पाया था। मुश्किलों का धैर्यपूर्वक सामना करना उनका स्वभाव बनता गया। एक ओर आर्थिक भार की मजबूरियाँ कला को

अपने उच्च स्थान से गिराकर बाजारू बना देने का चौतरफा दबाव तो दूसरी ओर संगीत की महान् परंपरा को निर्भीकतापूर्वक ऊँचा, और ऊँचा ले जाने की तमन्ना; उनकी आँखों में उनकी बेचैनी लपट बनकर जलती रहती।

डॉक्टर राजेंद्र प्रसाद से लेकर फकीरों तक ने राधावल्लभजी के संगीत को सुना था और मुग्ध हुए थे, लेकिन राजा से रंक तक से मिली प्रशंसा भौतिक आवश्यकताओं की पूर्ति नहीं कर सकती थी। वे लखनऊ शहर के लालकुआँ मोहल्ले की एक गंदी और बदबूदार गली में दो कमरों में इतने सारे लोगों के साथ जीवनयापन करने के लिए विवश थे। कभी कोई उस गली में उनके घर जाता तो उत्तर भारत का वह श्रेष्ठ लोक संगीतज्ञ क्षमा माँगते हुए कहता, ''भाई, माफ कीजिएगा, मेरे यहाँ बैठने को यह टूटा तख्त है, जरा पीछे होकर आराम से बैठ जाइए।'' क्षणभर के लिए उस जगह की कल्पना कीजिए, जहाँ लड़कों का हुड़दंग हो, नाली साफ करनेवालों की काँय-काँय और मोटरों की पों-पों का मन में उलझन पैदा करनेवाला शोर हो, वहाँ राधावल्लभजी किस तरह रियाज करते रहे होंगे?

अपने साजिंदों के साथ स्व. राधावल्लभ चतुर्वेदी

आकाशवाणी की नौकरी से राधावल्लभजी को जहाँ आर्थिक मदद मिली हुई थी, वहीं उनको एक सशक्त मंच उपलब्ध हो गया था, जहाँ से वे लोकसंगीत का प्रसार कर सकते थे, जिसमें उनके प्राण बसते थे। वे सुदूर क्षेत्रों में जाते और वहाँ के लोकगीतों को सुनते एवं कंठस्थ कर लेते। बाद में उन्हीं लोकगीतों की धुन बनाकर जब उन्हें आकाशवाणी से प्रसारित करते तो संपूर्ण व्यक्तित्व समेटे हुए उनकी काया परिचितों के मध्य साकार हो उठती। सुगम संगीत तथा लोकसंगीत में तो वे प्रवीण थे ही, शास्त्रीय संगीत में भी पारंगत थे। परिमार्जित कंठ और शास्त्रीय संगीत के अगाध ज्ञान के कारण भी उनकी कला में चार चाँद लग गए थे। शब्दों के भावानुसार शस्त्रीय स्वर देने में उन्हें महारत हासिल थी।

राधावल्लभजी ने विविध लोकगीतों को संगृहीत कर एक पुस्तक की रचना की, जिसका नाम है, 'ऊँची अटरिया रंग भरी'। इस पुस्तक में उन्होंने सरिया, सोहर, मुंडन, जनेऊ, विवाह, टोना, जेवनार, विदाई, चकिया, पनघट, कजरी, झूला, चौमासा, चैती, सोहनी, झूमर, रसिया, देवीगीत और धमार जैसे अनेक प्रकार के लोकगीतों को स्वर लिपिबद्ध किया है तथा उनका पूरा परिचय प्रस्तुत किया है। इस पुस्तक के नए संस्करण को वर्ष २०१८ में दिल्ली की संगीत नाटक एकेडमी ने राधावल्लभजी की जन्म शताब्दी के अवसर पर प्रकाशित किया है। संगीत के सिद्धांत-पक्ष पर एक सर्वजन सुलभ, किंतु सूक्ष्मग्राही एवं प्रामाणिक ग्रंथ 'सा रे ग म' लिखकर विषय प्रतिपादन की दृष्टि से राधावल्लभजी ने एक ऐसा स्तुत्य प्रयास किया है, जिसकी सराहना सभी समीक्षकों ने मुक्तकंठ से की है। राधावल्लभजी ने अवध के लोकगीतों पर विशेष रूप से चिंतन-मनन किया और उन्हें स्वरबद्ध करके आगामी पीढ़ियों के लिए सुरक्षित भी कर दिया।

किसी शास्त्रीय गायक के लिए पहली और अनिवार्य शर्त होती है तानपूरे का मिलाना। राधावल्लभजी को तानपूरा मिलाने में ऐसी महारत थी कि उनके द्वारा मिलाए गए तानपूरे को दोबारा देखने या जाँचने की कोई आवश्यकता नहीं होती थी। बड़े-बड़े उस्ताद यह सुनकर आश्वस्त हो जाते थे कि तानपूरा राधावल्लभजी ने मिलाया है। ऐसी महारत सिर्फ उनके शनासा होने का नतीजा नहीं थी, उनके भीतर जो एक परिपूर्णतावादी कलाकार बैठा था, यह उसकी सजगता की देन थी। यह इसलिए भी था, क्योंकि राधावल्लभजी जितने बड़े गायक थे, उतने ही बड़े संगीतकार भी।

तमाम लोग आकाशवाणी में उनसे मिलने और उनको देखने आते थे कि देखें, वह व्यक्ति कैसा है, जिसके गाए लोकगीत रेडियो पर आते हैं तो सुननेवाला भावविभोर हो उठता है। ऐसे लोग जब उन्हें देखते तो पाते कि राधावल्लभजी के पान से रचित लाल होंठ एक मंद मुसकान के कारण उनको और भी चित्रलिखित-सा बना रहे हैं।

राधावल्लभ कोई यों ही नहीं बन जाता, बल्कि निरभिमानी बनकर अपनी सारी कलाकारी भगवती के चरणों में रखनी पड़ती है, सबकुछ भगवती पर ही छोड़ देने की निष्कंप आस्था रखनी होती है और अपने को सुनाने से ज्यादा घूम-घूमकर लोगों को सुनने की विनम्रता चाहिए होती है। ये सारे गुण यदि किसी में दैवयोग से मिल पाते हैं, तब किसी एक राधावल्लभ चतुर्वेदी का आविर्भाव होता है।

जिसके मन को चैत्र मास में प्रकृति का अनूठा शृंगार मोह लेता हो, जो झूमती वल्लरियों के साथ झूम उठता हो, खिलते पुष्पों के साथ खिल उठता हो, कोयल की कूक सुनकर जिसका मन बावरा-सा हो उठता हो और आम्रमंजरियों की मादक सुगंध में जो मदहोश हो जाता हो, चैती के बोल तो ऐसे ही किसी राधावल्लभ के कंठ से सुनाई दे सकते हैं।

बीसवीं सदी के छठे और सातवें दशक में आकाशवाणी का लखनऊ केंद्र संगीत, साहित्य और नाटक के लिए देश में सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण केंद्र के रूप में स्थापित था। वैसे तो लखनऊ केंद्र पर अनेक प्रतिष्ठित कलाकार थे, लेकिन राधावल्लभजी इन सबके बीच किसी ज्वाजल्यमान नक्षत्र की तरह अलग ही चमकते दीख पड़ते थे। उन्होंने अपनी कला साधना के बल पर आकाशवाणी लखनऊ को संगीत के क्षेत्र में अभूतपूर्व ऊँचाइयों तक पहुँचा दिया था।

आकाशवाणी की 'विविध भारती सेवा' और 'रेडियो सीलोन', जहाँ से होनेवाली फिल्मी गीतों की अनवरत वर्षा ने पूरी संस्कृति को फिल्ममय कर दिया था, उस समय राधावल्लभजी के भगीरथ प्रयासों से हमारे पारंपरिक लोकसंगीत की रक्षा हो सकी थी।

संगीत के विशेषज्ञों का कहना है कि शास्त्रीय संगीत की ध्रुपद-शैली का गायन अन्य शैलियों की तुलना में कठिन होता है। राधावल्लभजी इसी कठिन समझी जानेवाली गायकी के अप्रतिम कलाकार थे। उनकी साधना का क्षेत्र मुख्य रूप से शास्त्रीय गायन था, लेकिन लोक-गायन भी उसके

साथ-साथ चलता था। कहना कठिन है कि वे शास्त्रीय गायक थे या लोक-गायक।

लोग ऐसा बताते हैं कि राधावल्लभजी की शास्त्रीय गायकी की लाइन के ऊपर अपनी प्रतिभा के दम पर बड़ी लाइन खींच पाने में असफल रह जाने वाले किसी ईर्ष्यालु गायक ने सिंदूर खिलाकर संगीत की दुनिया से उन्हें बाहर कर देने का कुचक्र रचा था। आवाज खो चुके राधावल्लभजी ने योग-साधना, अनवरत रियाज और प्रबल इच्छाशक्ति से इस संकट का सामना किया। जिन लोगों में अदम्य जुझारूपन होता है, वे हर हाल में किसी-न-किसी तरह अपना मार्ग बना ही लेते हैं।

शरीर का तो धर्म ही है एक दिन चले जाना। राधावल्लभजी का भौतिक शरीर भी १० जून, १९७४ को चला गया अपने पीछे संगीत के यादगार स्मारक छोड़कर। राधावल्लभजी जैसे लोग सिर्फ रास्ता ही नहीं बनाते, बल्कि उस पर अपने मजबूत कदमों से चलते हुए सुदीर्घ यात्रा पूरी करते हैं। उनके जैसे लोग अपने कदमों के ऐसे निशान छोड़ जाते हैं, जिन्हें समय की आँधियाँ भी मिटा नहीं पातीं। लेकिन एक कटु सत्य है, जिसे कहा ही जाएगा कि राधावल्लभजी को रुचि के आत्मिक सुख के अलावा जीवन में और कुछ प्राप्त नहीं हुआ, जबकि स्वयं लोकगीतों को उनसे बहुत कुछ प्राप्त हुआ है।

पंडित राधावल्लभ चतुर्वेदीजी को याद करने पर लगता है कि हम लोक के कपोल पर ठहरी हुई आँसू की एक बूँद को याद कर रहे हैं। लेकिन फिर लगता है कि सावन के लोक-उल्लास को गानेवाले राधावल्लभजी को हम आँसुओं की उदासी के साथ क्यों याद करें? उनकी याद तो ऐसी है, जैसे डोली पर विदा होकर गाँव में अपनी ससुराल पहुँची किसी नववधू की नथ में पिरोया हुआ कोई नग हो, जिसपर स्मृतियों के दमकते सूरज की एक किरन पड़ जाती है तो उसके लश्कारे से सबकुछ जगर-मगर हो उठता है।

साअ
ई-४, सौभाग्य अपार्टमेंट्स
८, गोपाल नगर
लखनऊ-२२६०२३
दूरभाष : ९४५०००००९४

कविता

आम्रपालि परिणय

● **रमेश चंदर**

चक्रमण करते महन्मान ऋषि को शिशु रुद्रन ने चौंकाया,
नवजात बाला को देख ऋषि का हृदय द्रवित हो आया।

पूजा-पाठ-सुधि छोड़ उठा सीने से लगाया,
ईश-कृपा मान संतान रूप में अपनाया।

आम्रवन में उसके मिले होने के नाते,
'आम्रपालि-आम्रपालि' कह उसे बुलाते।

ऋषि वात्सल्य में आम्रपालि पलने लगी,
चमत्कृत करता यौवन ले वह खिलने लगी।

समय पूर्व ही आम्रपालि तो युवा हो आई थी,
परिणय की चिंता ऋषि को अब घिर आई थी।

नगर-गाँव आम्रपालि के परिणय की कामना करने लगे,
परिणय के अपने प्रस्ताव ले ऋषि को मिलने लगे।

हर पुरुष की आम्रपालि बन गई थी अभिलाषा,
कैसे मिले आम्रपालि, सोच-सोच रह जाता।

आम्रपालि के इतने चितेरे, ऋषिवर तो घबराए,
परिणय कैसे होगा इसका, सोच-सोच सकुचाए।

असमंजस में ऋषि तो वैशाली संसद् जा पहुँचे थे,
संसद् ही वर चुने अब प्रश्न बारंबार दुहराते थे।

प्रस्ताव ले राजे-महाराजे भी संसद् जा पहुँचे थे,
आम्रपालि मेरी ही परिणीता होगी सारे दुहराते थे।

ढेरों परिणय-प्रस्ताव देख वैशाली संसद् तक घबराई,
किसे स्वीकारे, किसे नकारे परिणाम सोच सकुचाई।

एक चयन से निश्चित ही दंगल और युद्ध होगा,
मंगल अमंगल बन रक्तपात व विध्वंस होगा।

परिणय-प्रश्न पर संसद् ने गंभीर चिंतन किया,
तर्क-वितर्क, विचार कर निरापद निर्णय दिया।

हे आम्रपालि! अति सुंदर व रूपमती,
देश के हित में होगा मात्र यही सही।

अरी, तू पूरे वैशाली नगर की वधू होगी,
जो सम्मान दे चाहेगा, उसकी तू भोग्या होगी।

आम्रपालि! वज्जी गणराज्य सत्ता से आज तू मुक्त होगी,
उसी जीवनदाता आम्रवन की तू अधिष्ठाता होगी।

चारों ऋतु अनुकूल प्रसाद ऐश्वर्य से तू लिप्त होगी,
नृप समान ही आम्रवन की तू संप्रभु-सम्राज्ञी होगी। साअ

डी-७२, सेक्टर-१२
नोएडा-२०१३०१ (उ.प्र.)
दूरभाष : ९८१८३८८००९

हिमांशु जोशी : मेरे मित्र एवं मार्गदर्शक

• प्रमोद कुमार अग्रवाल

२३ दिसंबर, २०१८ को हिमांशु जोशी ८३ वर्ष की उम्र में चिरनिद्रा के आगोश में समा गए। यह समाचार सुनते ही हिंदी परिवार में शोक की लहर दौड़ गई। वे जनता के प्रिय कहानीकार थे। सन् १९५५ में २१ वर्ष की उम्र में वे उत्तराखंड से काम की तलाश में दिल्ली आए। हिमांशु ने कुछ ही वर्षों के संघर्ष के बाद दिल्ली को अपना घर बना लिया। जैनेंद्र कुमार ने उनकी प्रथम कहानी 'दीप तो बुझ गया' को पढ़कर उनकी साहित्यिक प्रतिभा को परखा और उन्हें अपने साथ हिंदी साहित्य के क्षेत्र में कार्यरत होने की सलाह दी। बस वही उनके परिवार के जीवकोपार्जन का एकमात्र साधन हो गया। उत्तराखंड की पृष्ठभूमि होने के बावजूद उनकी कहानियों में भारतीय जीवन का स्पंदन है। सन् १९६८ से १९९३ तक साप्ताहिक 'हिंदुस्तान' में उन्हें सहायक संपादक के पद पर रखकर संपादक मनोहर श्याम जोशी ने उनकी साहित्यिक प्रतिभा तथा पत्रकारिता-वैविध्य का संपूर्ण देश को परिचय करवाया। उनके उपन्यास 'कगार की आग', 'छाया मत छूना मन' को धारावाहिक रूप में साप्ताहिक 'हिंदुस्तान' में प्रकाशित करके जोशीजी को लाखों पाठकों तक पहुँचाया। उन्होंने अपनी पचास वर्ष की साहित्य-यात्रा में प्राय: दो सौ कहानियाँ लिखीं। साथ-ही-साथ उन्होंने बाल-साहित्य, साक्षात्कार-साहित्य, यात्रा-वृत्तांत तथा कुछ कविताएँ लिखीं। उन्होंने 'शांतिदूत' पत्रिका का सन् १९९० से २००६ तक संपादन तथा प्रकाशन किया, जो विदेशों में बड़ी ही लोकप्रिय थी। उनकी रचनाएँ समस्त भारतीय भाषाओं के अतिरिक्त अंग्रेजी, नॉर्वेजियन, इटालियन, चेक, स्लाव, बुल्गारिया, चीनी, जापानी, कोरियन, बर्मी, नेपाली, बांग्ला आदि भाषाओं में रूपांतरित होकर सराही गईं, पर हिंदी साहित्य में गुटबंदी तथा पक्षपात के कारण उन्हें अनुकूल सम्मान न प्राप्त हो सका, जैसे उत्तर प्रदेश हिंदी साहित्य का सर्वोच्च पुरस्कार, भारत सरकार द्वारा पद्मश्री। पर वे स्वांत: सुखाय रचनाएँ करते रहे। वे अपनी धरती, संस्कृति और स्मृतियों में चरित्रों को उठाते एक ऐसे समाज की कल्पना करते हैं, जिसमें समरसता हो, प्रेम हो तथा सहनशीलता हो।

स्व. हिमांशु जोशी

मेरी उनसे प्रथम मुलाकात प्राय: १५ वर्ष पूर्व कोलकाता स्थित भारतीय भाषा परिषद् के एक कार्यक्रम में हुई। यह कार्यक्रम उनके साहित्यिक रचनाकर्म पर आधारित था।

हिंदी के प्रतिष्ठित लेखक। हिंदी-अंग्रेजी में लगभग चालीस पुस्तकें प्रकाशित, इनमें एक दर्जन उपन्यास, चार निबंध-संग्रह, एक कहानी-संग्रह के अतिरिक्त विभिन्न विषयों पर दो दर्जन पुस्तकें। संप्रति पं. बंगाल सरकार में उपभोक्ता विषयक विभाग के अतिरिक्त मुख्य सचिव एवं महायुक्त, भूमि-सुधार।

मैं उनके सौम्य, विनम्र, मृदुभाषी, सरल, सहज तथा राजनीतिक प्रतिद्वंद्विता रहित व्यक्तित्व से अत्यंत प्रभावित हुआ। बस हम एक-दूसरे के मित्र हो गए। इसके बाद मैं कई बार उनसे मिला। वे मुझे दिल्ली के इंडिया इंटरनेशनल क्लब में ले जाते थे। वहाँ हम बैठकर साहित्यिक चर्चाएँ करते थे। आई.ए.एस. से अवकाश प्राप्त करने के पश्चात् मैंने कहानियों के क्षेत्र में आगाज करने का संकल्प लिया, क्योंकि मेरा प्रथम कहानी-संग्रह 'यूकेलिप्टस' वांछित साहित्यिक मान्यता प्राप्त न कर सका। पर कहानी-विधा ही आजकल लोकप्रिय साहित्य-विधा है।

मैं कहानियाँ लिखता, उन्हें पढ़कर सुनाता तथा उनके सुझाव अमल में लाकर अपनी कहानियों में सुधार करता। मेरा २० नवंबर, २०१८ को सद्य: प्रकाशित कहानी-संग्रह 'गाँव-गाँव की कहानियाँ' में उनका आत्मनेपद पुरोवाक् मृत्यु के पूर्व उनका अंतिम आलेख है। उनका स्वास्थ्य दो वर्ष पूर्व से काफी बिगड़ना शुरू हो गया था तथा वे मुझे बोलकर वैश्विक साहित्य के लिए अपना स्तंभ लिखवाते, उसमें सुधार करते तथा अपने संग्रह से सामग्री उपलब्ध कराते। यह क्रम उनके स्वर्गवास तक जारी रहा तथा 'वैश्विक साहित्य' के माध्यम से हिंदी जगत् उनके सूर्यास्त काल की विचारधारा से परिचित होता रहा। ऐसी साहित्यिक प्रतिभा के प्रयाण के पश्चात् हिंदी कहानी साहित्य का कौन पथ-प्रदर्शन करेगा, जिसमें संपूर्ण भारत समाहित हो?

१७-सेंट्रल लेन, बंगाली मार्केट
नई दिल्ली-११०००१
दूरभाष : ९६५०००२५६५

प्रयागराज कुंभ-कथा

● राजेंद्र त्रिपाठी 'रसराज'

तीर्थराज प्रयाग में गंगा, यमुना और सरस्वती के त्रिवेणी संगम पर कालक्रम की कड़ी के अनुसार १४ जनवरी, २०१९ से अर्धकुंभ आयोजित हो रहा है; किंतु इस बार शासन और प्रशासन की मंशा के अनुरूप दिव्य और भव्य महाकुंभ के रूप में इसे मनाए जाने की तैयारियाँ सालभर से बहुत ही तत्परता के साथ चल रही थीं। यह दिव्यकुंभ विगत कुंभ पर्वों से बढ़कर कुछ विशेष प्रकार की व्यवस्थाओं और सुविधाओं से संपन्न आकर्षक ढंग से मनाए जाने की परिकल्पना है। भारतीय सनातन संस्कृति की धार्मिक आस्था, श्रद्धा और भक्ति की त्रिवेणी का यह संगम जब तीर्थराज प्रयाग के संगम से मिलता है तो कुंभ जैसे महापर्व में एक विश्वसंस्कृति का समागम दृष्टिगत होता है। यही 'स प्रथमा संस्कृतिर्विश्ववारा' जैसी पंक्ति का उद्घोष यजुर्वेद में भी मिलता है।

इस दिव्यकुंभ की पहली उपलब्धि यह हुई है कि परमपिता परमेश्वर द्वारा संपन्न किए गए प्रकृष्ट यज्ञों के कारण जिस पावन भूमि को प्रयाग नाम से अभिहित किया जाता था और समस्त तीर्थों में सबसे प्रधानतीर्थ होने के कारण तीर्थराज या प्रयागराज कहा जाता था, उसे बाद में इलाहाबाद के नाम से एक जनपद रूप में स्थापित कर दिया गया। वैसे तो वह इलाहाबाद भी पुरुरवा की माता इला के नाम पर पहले इलावास ही था, ऐलवंशीय चक्रवर्ती नरेश पुरुरवा और उर्वशी का निवासस्थान प्रतिष्ठानपुर, जो इसी प्रयाग में गंगा और यमुना के संगम के पूर्वी तट पर विद्यमान हुआ करता था, आज वही 'झूँसी' के नाम से प्रतिष्ठित माना जाता है। इसी इलावास को ऐलवास और बाद में इलाहाबाद कर दिया गया। उत्तर प्रदेश की वर्तमान सरकार ने इस कुंभ-पर्व के पूर्व ही इलाहाबाद नाम को परिवर्तित कर इसके प्राचीनतम और पौराणिक नाम 'प्रयागराज' को पुनर्प्रतिष्ठित कर दिया। इस बार शासन-प्रशासन की ओर से इस कुंभ को 'दिव्य और भव्य कुंभ' नाम से संबोधित किया जा रहा है।

यह कुंभ पर्याय है उस अमृत-कलश का, जो सुर और असुरों के परस्पर संघर्ष के कारण जब समुद्रमंथन किया गया तो उसमें से जो चौदह रत्न निकले, उनमें से वह अमृत कलश मुख्य रत्न था, जिसे पाने के लिए परस्पर छीना-झपटी हुई। देवताओं की ओर से जब इंद्र पुत्र जयंत उस कलश को लेकर भागा तो असुरों ने उसका पीछा किया। उस समय देवताओं की ओर से भी उसकी रक्षा के लिए प्रयत्न किए गए। पुराणों के अनुसार चंद्रमा ने अमृत को गिरने से बचाया, सूर्य ने कलश को टूटने से, बृहस्पति ने दैत्यों द्वारा छीनने से, और शनि ने कहीं जयंत अकेले ही उस अमृत को न पी ले, इस प्रकार उन सबने उस अमृत कलश की रक्षा की।

जाने-माने लेखक। संस्कृत-हिंदी के अनेक ग्रंथ एवं ९० से अधिक शोधपरक विविध रचनाएँ पत्र-पत्रिकाओं तथा जर्नल्स में प्रकाशित। अन्यान्य क्षेत्रों में उद्घोषक एवं मंच संचालन; राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय संस्कृत एवं हिंदी सम्मेलनों, संगोष्ठियों में सहभागिता, शोधपत्र-प्रस्तुति। संस्कृत महामहोपाध्याय की मानद उपाधि एवं अनेक साहित्यिक, सांस्कृतिक, सामाजिक व प्रशासनिक संस्थाओं से पुरस्कृत-सम्मानित।

चन्द्र प्रस्रवणाद् रक्षां सूर्यो विस्फोटनादधौ।
दैत्येभ्यश्च गुरु रक्षां सौरि देवेन्द्रजात भयात्॥

इस रक्षा अभियान में वह अमृत कलश जिन चार प्रमुख तीर्थस्थलों में रखा गया, वहाँ कुछ छलकी हुई बूँदों के कारण उन पवित्र स्थलों प्रयाग, हरिद्वार, उज्जैन और नासिक में कुंभपर्व मनाए जाने की परंपरा प्रचलित हुई।

प्रयाग में यह पावन तिथि माघ के महीने में जब सूर्य और चंद्रमा मकर राशि में हों, बृहस्पति मेष अथवा वृष राशि में स्थित हो तो कुंभ जैसे महापर्व का सुयोग बनता है।

कहा जाता है कि कुंभ सृष्टि का प्रतीक है। इस कलश के मुख में विष्णु, कंठ में रुद्र, मूल में ब्रह्मा, मध्य में मातृगण, अंतर्वस्था में समस्त सागर, पृथ्वी में निहित समस्त द्वीप तथा चारों वेद का समन्वयात्मक स्वरूप विद्यमान है। कुंभ भगवान् विष्णु का पर्याय भी कहा गया है।

कुंभ की शाब्दिक व्युत्पत्ति के अनुसार कुं भूमिं कुत्सितं वा उम्भति पूरयति—कुंभ का अर्थ है घड़ा, जलपात्र या करवा। कुभि पूरणे धातु से निष्पन्न कुंभ शब्द का तात्पर्य है—'कुम्भयति अमृतेन पूरयति सकल क्षुत् पिपासादि द्वन्द्वजातं निर्वर्तयति इति कुम्भः।' अर्थात् जो अमृतमय जल से पूर्ण करता है, जो क्षुत् पिपासादि अनेक द्वंद्वों से निवृत्त करता है, उसे कुंभ कहते हैं। यह पर्व मनुष्य की सांसारिक बाधाओं को दूर करता हुआ उसके जीवन घट को ज्ञानामृत से परिपूर्ण कर देता है, इसीलिए इसे कुंभ नाम से अभिहित किया गया है। 'कुत्सितं उम्भयति दूरयति जगद्हितायेति कुम्भः।' जगत् कल्याण के लिए दुष्प्रवृत्तियों को ज्ञानामृत द्वारा दूर करनेवाला यह पर्व कुंभ कहलाता है। 'कुं पृथ्वीं भागयति दीपयति तेजोवर्द्धनेनेति कुम्भः' अर्थात् पृथ्वी को अपने प्रभाव से प्रकाशित करनेवाले पर्व को कुंभ कहते हैं। कुंभ का अर्थ आच्छादन करना या आवृत्त करना भी होता है। परमात्मा अपने ऐश्वर्य से समस्त

विश्व को आवृत्त किए रहता है, इसलिए वह कुंभ है। कुंभ का अर्थ पेट, गर्भाशय, ब्रह्मा, विष्णु आदि अनेक पर्याय कहे गए हैं। लोक में कुंभ, अर्धकुंभ पर्व के कारक सूर्य, चंद्रमा तथा बृहस्पति तीन ग्रह कहे गए हैं। सूर्य आत्मा है, चंद्रमा मन है और बृहस्पति ज्ञान है। कुंभ शब्द की मीमांसा पाँच ज्ञानेंद्रिय, पाँच कर्मेंद्रिय, एक चित्त और एक मन से की गई है। इन द्वादश इंद्रियों पर विजय पाने से ही घट, कुंभ यानि शरीर का कल्याण होता है। विवेक और अविवेक देवासुर संग्राम को जन्म देता है। इनके पूर्ण नियंत्रण से ही घट में अमृत का प्रादुर्भाव होता है। कुंभ समुद्र, नदी, कूप, सरोवर आदि का प्रतीक है। इसीलिए कहा गया है कि कुंभ पर्व पर पतित पावनी गंगा के पवित्र जल में स्नान करने से एक हजार अश्वमेध यज्ञ, सौ वाजपेय यज्ञ और एक लाख भूमि की परिक्रमा करने से जो पुण्य-फल मिलता है, वह एक बार कुंभ स्नान करने से ही मिल जाता है। गंगाजी का नाम लेने मात्र से ही समस्त पापों का विनाश हो जाता है, दर्शन करने पर कल्याण होता है, स्नान, जलपान और दानादि करने से मनुष्य की सात पीढ़ियों का उद्धार हो जाता है। अथर्वेद के अनुसार ब्रह्माजी ने मनुष्य को ऐहिक और पारलौकिक सुख प्रदान करनेवाले कुंभ को प्रदान किया। ये कुंभ प्रयाग, हरिद्वार, उज्जैन और नासिक में प्रतिष्ठित हुए। पृथ्वी को ऐश्वर्य संपन्न बनानेवाले ऋषियों का कुंभ से तात्पर्य है पुरुषार्थ चतुष्ट्य अर्थात् धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की प्राप्ति कराना।

'चतुरः कुम्भां चतुर्णा ददामि क्षीरेण पूर्णान् उदकेन दध्मः'। यही इसकी सार्थकता है। तीर्थराज प्रयाग में माघ के महीने में प्रतिवर्ष १४ जनवरी से मकर संक्रांति के पर्व से शिवरात्रि तक माघमेले के रूप में कल्पवास करने के साथ-साथ स्नान, ध्यान, तप, यज्ञ, दानादि करने की पुरातन परंपरा चली आ रही है। यहीं छह वर्ष पर अर्धकुंभ और द्वादश वर्ष पर पूर्ण कुंभ मनाए जाने की परंपरा प्राचीन काल से ही प्रवर्तित हुई है। इस कुंभ पर्व पर गाँव-गिराँव, देश-विदेश से करोड़ों की संख्या में श्रद्धालु और आस्थावान् भक्त पदार्पण करते हैं, कल्पवास करते हैं और गंगा, यमुना और अदृश्य सरस्वती के संगम में डुबकियाँ लगाकर पुण्यार्जन करते हैं। ऋग्वेद के खिल भाग में कहा गया कि सितासित गंगा और यमुना के पवित्र संगम में स्नान करनेवाले लोग मोक्ष मार्ग के अधिकारी होते हैं और जो लोग यहाँ अपने शरीर का विसर्जन करते हैं, वे अमृतत्व को प्राप्त करते हैं।

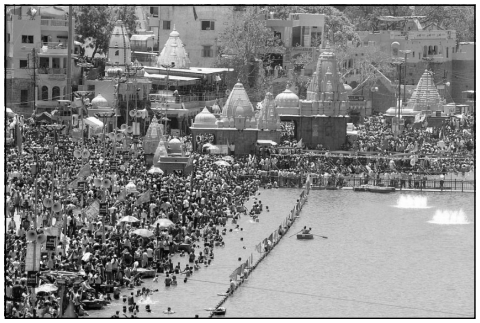

तीर्थराज प्रयाग में कुंभ पर्याय है उस जनसमवाय का, जो श्रद्धा, भक्ति और विश्वास की गठरी लिये चला आता है। यहाँ देश-विदेश से अपना पाप प्रक्षालन और पुण्य प्राप्त करने के लिए कुंभ पर्याय है उस भीड़ का, जो सुख-दुःख, सर्दी-गरमी, ठंडी-वर्षा, ओला-कोहरा, जाड़ा-पाला, आवागमन आदि की चिंता किए बिना चला आता है दूर-दूर से संगम में डुबकी लगाने की चाह में। तीर्थराज प्रयाग में वैसे तो प्रतिवर्ष माघ के महीने में यह सब दृश्य मौनी अमावस्या के विशेष पर्व पर दर्शनीय होता है, परंतु कुंभ का आकर्षण अपने आप में विशिष्ट और आकर्षक होता है। इस बार का कुंभ विगत वर्षों के कुंभों से हर दृष्टि से अलग और आकर्षक मनाए जाने की योजना है। वैसे तो यहाँ आने के लिए किसी को कहीं से अलग से आमंत्रित या निमंत्रित करने की आवश्यकता नहीं होती, सभी अपनी श्रद्धा और भक्ति के साथ यहाँ अपने खर्च से आते हैं और यहाँ आकर कुछ दान-दक्षिणा भी करते हैं। यहाँ आते हैं तो केवल पुण्य प्राप्त करने और इसके लिए यथासंभव दान भी करते हैं। छठी शताब्दी में महाराज हर्ष स्वयं हर पाँच वर्ष बाद यहाँ आकर अपना सर्वस्व दान किया करता था, वही इस माघमेले के प्रामाणिक स्तंभ माने जाते हैं, जिनके आगमन और दान करने की प्रामाणिकता ह्वेनसांग के यात्रा विवरण से सिद्ध होती है।

शतपथ ब्राह्मण के अनुसार उत्तरवैदिक काल में भरतवंशीय राजाओं ने इसी गंगा और यमुना के संगम में स्नान किया था। यही वह प्रयाग है, जहाँ ब्रह्माजी ने सर्वप्रथम अपने सर्वोत्कृष्ट यज्ञों का अनुष्ठान किया था। इन्हीं यज्ञों के संपादन के कारण ही इस क्षेत्र को 'प्रयाग' नाम से अभिहित किया गया। महाभारत के वनपर्व में इसका उल्लेख भी मिलता है—

यत्रायजत् भूतात्मा पूर्वमेव पितामह।
प्रयागमिति विख्यातं तस्माद् भरत सत्तत्॥

प्रयाग शब्द की व्युत्पत्ति भी इसी तथ्य का समाधान करती है। प्र उपसर्ग पूर्वक यज् धातु से प्रयाग शब्द की निष्पत्ति होती है, जिसका अभिप्राय है 'प्रकृष्टो यागः स प्रयागः' प्र का अर्थ है प्रकृष्ट या उत्कृष्ट। मत्स्य पुराण में भी इसका यही अर्थ किया गया है, 'प्रभावात् सर्वतीर्थेभ्यो प्रभत्यधिकं विभो।' याग् शब्द से स्पष्ट होता है कि यहाँ पर यज्ञों के अनुष्ठान द्वारा धार्मिक फलों की प्राप्ति होती है। 'प्रकृष्टत्वात् प्रयागोऽसौ प्राधान्याद् राजशब्दवान्' ब्रह्मपुराण के इस कथन से यह सिद्ध होता है कि सभी तीर्थों से श्रेष्ठ होने के कारण इसे तीर्थराज भी कहा जाता है और प्राधान्य अर्थात् प्रधानता के कारण 'राज' शब्द से युक्त है। इसी आधार पर प्रयाग को प्रयागराज या तीर्थराज भी कहा जाता है। यों तो दो नदियों के संगम को भी प्रयाग कहा जाता है। इस प्रकार के अनेक प्रयाग भारतभूमि पर मिलते हैं। स्कंदपुराण के अनुसार 'प्रकृष्टं सर्वयागेभ्यः प्रयागमिति कथ्यते' अर्थात् जितने भी यज्ञ-यागादि कर्म हैं, उनमें सर्वोत्कृष्ट होने से इसे प्रयाग कहा जाता है। उत्कृष्ट यागादि और दान-दक्षिणादि से परिपोषित देखकर विष्णु एवं शंकर आदि देवताओं ने इसका 'प्रयाग' नामकरण किया—

दृष्ट्वा प्रकृष्टं यागेभ्यः पुष्टभ्यो दक्षिणादिभिः।
प्रयागमिति तन्नाम कृतं हरिहरादिभिः॥

अग्निपुराण के अनुसार इसी प्रयाग में वेद एवं यज्ञ मूर्तिमान् हुए थे, 'तत्र यज्ञश्च मूर्तिमन्तः प्रयागके।' महाभारत में इस प्रयाग को तीनों

लोकों में सबसे बड़ा तीर्थ कहा गया है। सभी देवगण इसकी वंदना करते हैं और इसकी रक्षा करते हैं, 'तत्र ब्रह्मादयो देवाः रक्षां कुर्वन्ति संगतः', महाभारत के अनुशासन पर्व में कहा गया है कि माघ की अमावस्या को तीर्थराज प्रयाग में तीन करोड़ दस हजार अन्य तीर्थों का समागम होता है। मत्स्यपुराण में भी उल्लेख मिलता है कि पृथ्वी पर साठ करोड़ दस सहस्र तीर्थ बनाए गए हैं, उन सभी की स्थिति इस तीर्थराज प्रयाग में होती है—

दशतीर्थसहस्राणि षष्टिकोट्यरथापराः।
तेषां सन्निध्यमत्रैव तत्रस्तु कुरुनन्दन॥

प्रयागराज में माघ का महीना प्रतिवर्ष कल्पवासियों के लिए किसी कुंभ से कम नहीं होता। उनकी दिनचर्या और उनकी आस्था-भक्ति प्रतिवर्ष एक समान होती है। कुंभपर्व का आयोजन शासन-प्रशासन के लिए, देश-विदेश से आनेवाले साधु, संत, महात्माओं, अखाड़ों, महामंडलेश्वरों और शंकराचार्यों के लिए विशेष महत्त्व रखता है। इस कुंभ के अवसर पर भारतीय संस्कृति का समन्वित स्वरूप देखते को मिलता है। समूचा विश्व यहाँ की भीड़ और कुंभ पर होनेवाली व्यवस्थाओं को देखने के लिए लालायित रहता है। एक लघु भारत का स्वरूप और यहाँ की बहुव्यापी संस्कृति का समन्वित दर्शन करने का सुअवसर मिलता है। इस बार के कुंभ की तैयारियाँ विदेशी पर्यटकों को दृष्टि में रखकर भी की जा रही हैं। उनके आने-जाने, रहने, खाने-पीने और भ्रमण के लिए विशेष प्रबंध किए जा रहे हैं। विश्व के हर कोने से मान्य अतिथियों को आमंत्रित किया जा रहा है। दिन-रात सांस्कृतिक कार्यक्रमों, मनोरंजन, कथा-भागवत, रामायण रामलीला आदि संसाधनों से मेले को विशेष ढंग से व्यवस्थित किया जा रहा है। कुंभपर्व पर ही पूरे भारत वर्ष के साधु-संत, महात्मा, अखाड़े, महामंडलेश्वर, शंकराचार्य और विविध धर्मावलंबियों का समवाय यहाँ पदार्पण करता है। अखाड़ों का शाही स्नान देखते की बनता है।

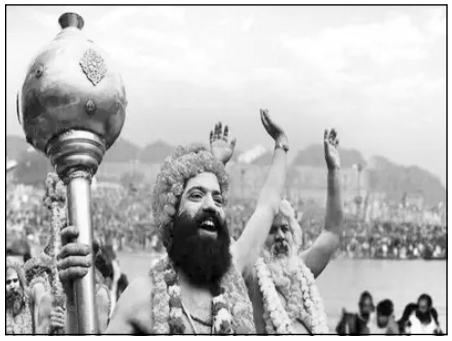

तीर्थराज प्रयाग में कुंभमेले की व्यापकता एक पृथक् नगर या शहर के रूप में व्यवस्थित की जाती है। तंबुओं की नगरी के नाम से प्रयागराज की प्रतिष्ठा पूरे विश्व में अलग स्थान रखती है। दो माह के लिए यहाँ का पावनतीर्थ देवलोक से कम नहीं लगता है। एक से बढ़कर एक पंडालों की बनावट, यज्ञशालाओं की निर्मिति, पर्णशालाएँ, कल्पवासियों का तंबुओं में निवास, अखाड़ों की दिनचर्या, चारों ओर भजन, कीर्तन का गायन, भक्तिभावना में तल्लीन तीर्थयात्रियों का परिभ्रमण देखते ही बनता है।

तीर्थराज प्रयाग में भगवान् ने स्वयं कहा है कि मैं समस्त विघ्नों को नष्ट के लिए और भक्तों की कार्यसिद्धि के लिए दिशा-विदिशाओं में आठ नाम धारण करके निवास करता हूँ। अक्षयवट के मूल में जो पुरुष है, वह मैं अक्षयमाधव हूँ। उस पुरुष को वटमाधव और मूल माधव भी कहते हैं। इस प्रकार इन तीन नामों से युक्त होकर मैं वहाँ रहता हूँ। मेरे आठ और नाम हैं—शंखमाधव, चक्रमाधव, गदामाधव, पद्ममाधव, अनंतमाधव, बिंदुमाधव, मनोहरमाधव और असिमाधव। इन अष्टमाधवों का दर्शन फलदायी माना गया है। यहाँ के अक्षयवट, पातालपुरी, लेटे हुए बड़े हनुमानजी, नागवासुकि, वेणीमाधव, मनकामेश्वर, सोमेश्वर महादेव, भरद्वाज आदि महत्त्वपूर्ण मंदिर हैं, जहाँ का दर्शन परम पुण्यदायी माना गया है।

त्रिवेणीं माधवं सोमं भरद्वाजं च वासुकिम्।
वन्दे अक्षयवटं शेषं प्रयागं तीर्थनायकम्॥

—पद्मपुराण ४३/४

प्रयाग में माघमेले के कल्पवासी और कल्पवास करने की मान्यता पूरे मेले का प्राण माना जा सकता है। प्रयाग में संगम और अक्षयवट, जिसे कल्पवृक्ष भी कहा जाता है, यही परम तीर्थ और परम धाम कहे गए हैं। यहाँ का कल्पवृक्ष ही वह पावन स्थल है, जिसके नीचे बैठकर न जाने कितने ऋषियों, मुनियों और महर्षियों ने अपनी कठोर तपस्या एवं साधना करके सिद्धियाँ प्राप्त की हैं। अनेक महापुरुषों ने अपनी मनोकामनाओं की पूर्तियाँ की हैं। यह कल्पवृक्ष ही यहाँ के कल्पवास करने का प्रमुख केंद्र है। चूँकि इसी कल्पवृक्ष के नीचे बैठकर तपस्या और साधना करके ऋषियों और मुनियों को देवताओं का दर्शन प्राप्त हुआ। स्वयं भगवान् विष्णु और भगवान् शंकर जिसमें वास करते हैं, ऐसे कल्पवृक्ष के समीप संगम तट पर गंगा की रेती में पूरे माघमासपर्यंत कल्पवासियों की पूजा-पद्धति, स्नान, ध्यान, संयम, नियम, दिनचर्या, आहार-व्यवहार अपने आप में विशिष्ट और भक्तिपरायण दिखते हैं। गृहस्थ जीवनयापन करनेवाले लाखों लोग भी तंबुओं की छाया में रहकर पूरे माघ महीने तक यहाँ वास किया करते हैं। कथा, भागवत, कीर्तन, भजन, सुनते-गुनते और भगवद्भक्ति में तल्लीन रहा करते हैं। उनकी आस्था और भक्ति किसी सुविधा और साधन की अपेक्षा नहीं रखती बल्कि वे हर स्थिति में अपना कल्पवास करने का संकल्प पूरा करने के लिए तत्पर हुआ करते हैं। वास्तविक आकर्षण तो वे ही होते हैं। बाकी तो मेले में घूमनेवाले, तरह-तरह की चीजों के दुकानदार, रोजगारी और खरीददार सड़कों और फुटपाथों पर भीड़भाड़ से भरे-पूरे दिखाई देते हैं।

इस बार मेले की व्यापकता पूर्व में झूँसी से छतनाग, उत्तर में सलोरी और शिवकुटी तक, दक्षिण-पूर्व में अरैल से मवैया गाँव तक का क्षेत्र अधिगृहीत किया गया है। इस पार से उस पार आने-जाने के लिए पीपे के दर्जनों पुल बनाए जा रहे हैं। प्रयाग की पंचकोशी परिक्रमा के अंतर्गत जितने भी प्रमुख मंदिर और दर्शनीय स्थल हैं, उन जगहों तक पहुँचने के लिए साधन और सड़कों का निर्माण किया जा रहा है, उन्हें सजाया और सँवारा जा रहा है। पूरे प्रयागराज शहर को स्मार्टसिटी घोषित किया गया है। नगर की सभी सड़कें और चौराहे चौड़े किए जा रहे हैं। अनधिकृत जमीनों और सड़कों के किनारे किए गए अतिक्रमण

को हटाया जा रहा है। न जाने कितने पुराने पेड़ों और मकानों को हटाकर शहर को सुंदर बनाया जा रहा है। आजादी के बाद पहली बार शहर के पुनर्निमाण और सुंदरीकरण पर इतना खर्च किया जा रहा है। एक वर्ष के भीतर ही हाईकोर्ट से पानी की टंकी, रामबाग और गोविंदपुर की ओर जानेवाले लोगों के लिए फ्लाईओवर ब्रिज का निर्माण कराके, तेलियरगंज, अल्लापुर, अलोपीबाग, सोहबतियाबाग, बैरहना की ओर सी.एम.पी. के पास रेलवे लाइन के नीचे से आने-जाने के लिए नए मार्गों का निर्माण आवागमन और भीड़ को नियंत्रित करने के अनेक उपाय अभिनव प्रयागराज शहर के लिए नए उपहार माने जा सकते हैं।

बम्हरौली एयरपोर्ट का विस्तार और कई महत्त्वपूर्ण महानगरों के लिए आने-जाने की हवाई यात्रा की सुविधाएँ इस बार के दिव्य कुंभ की ही देन कहे जा सकते हैं। शासन और प्रशासन की ओर से विदेशी राजदूत ,मेहमानों को आमंत्रित किया जा रहा है यहाँ की व्यवस्थाओं को देखने के लिए। उनके रहने का प्रबंध मेला क्षेत्र में ही विशेष प्रकार की सुविधाओं से युक्त किया जा रहा है। तीर्थयात्रियों के मनोरंजन के लिए अनेक प्रकार के सांस्कृतिक कार्यक्रम आयोजित करने हेतु देश के कोने-कोने से प्रांतीय कलाकारों से संपर्क साधे जा रहे हैं। समूचे भारत की समन्वित संस्कृति को प्रदर्शित करने के लिए हर प्रकार की प्रतिभाओं को आमंत्रित किया जा रहा है। इसके लिए उत्तर-मध्यक्षेत्र सांस्कृतिक केंद्र, संस्कृति और पर्यटन आदि विभाग अपनी-अपनी ओर से प्रयासरत हैं। पूरे शहर का कायाकल्प किया जा रहा है। पूरे माघ मेलाक्षेत्र को दूधिया रोशनी से सजाकर स्वच्छता और सुरक्षा की दृष्टि से सुव्यवस्थित किया जा रहा है। पुलिस प्रशासन भी 'दिव्य और सुरक्षित कुंभ' की थीम के साथ मेले में हर प्रकार की सुरक्षा के लिए रात-दिन सतर्क रहकर सजग दिखाई पड़ रहा है। तीर्थराज प्रयाग का यह महापर्व आनेवाले सभी तीर्थयात्रियों, श्रद्धालु भक्तों, स्नानार्थियों, व्यवस्था में जुड़े समस्त अधिकारियों, कर्मचारियों, सुरक्षा और सुव्यवस्था में लगे सभी सहयोगियों के लिए मंगलमय, पुण्यप्रद और फलदायी हो इस शुभकामना के साथ तीर्थराज प्रयागराज की पावन भूमि पर अपनी विनत प्रणामांजलि निवेदित करता हूँ।

सितासिते यत्र तरङ्गचामरे नद्यौ विभाते मुनिभानुकन्यके।
नीलात्पत्रं वट एव साक्षात् स तीर्थराजो जयति प्रयाग॥
श्रुतिः प्रमाणं स्मृतयः प्रमाणं पुराणमप्यत्र परं प्रमाणम्।
यत्रास्ति गंगा यमुना प्रणामं स तीर्थराजो जयति प्रयागः॥

अंत में उन समस्त साहित्य-सुधा-पिपासु प्रेमियों को इस साहित्यामृत-सिंधु रूपी प्रयागराज-कुंभ-कथार्णव में अवगाहन करने हेतु आमंत्रित कर विनतभावना से महाकवि विल्हण द्वारा प्रणीत विक्रमांकदेव महाकाव्य का यह पद्य उद्धृत करना चाहता हूँ—

साहित्यपाथोनिधिमन्थनोत्थं कर्णामृतं रक्षत् हे कवीन्द्राः।
यदस्य दैत्यारिव लुण्ठनाय काव्यार्थचौराः प्रगुणी भवन्ति॥

साअ
रसराज-निवास
२ ए/१ मिंटो रोड, प्रयागराज-२१२००१
(उत्तर प्रदेश)
दूरभाष : ०९४१५६४५७२२

ज्ञान का अहंकार

लघुकथा

• पुष्पेश कुमार पुष्प

चीन के महान् दार्शनिक कन्फ्यूशियस एक बार घूमते-घूमते दूर के एक देश में पहुँचे। वहाँ के राजा ने उनके सामने तीन पिंजरे रख दिए। एक पिंजरे में चूहा था और उसके सामने ढेर सारे व्यंजन रखे हुए थे, किंतु वह कुछ भी नहीं खा रहा था। दूसरे पिंजरे में बिल्ली थी तथा उसके सामने दूध से बने ढेर सारे व्यंजन रखे हुए थे, लेकिन वह भी न कुछ पी रही थी और न खा रही थी। तीसरे पिंजरे में एक बाज था, उसके सामने ढेर सारे ताजे मांस के टुकड़े रखे थे, लेकिन वह भी ऐसे ही पड़ा हुआ था।

कन्फ्यूशियस ने यह सब देखा और अपने शिष्यों से कहा, ''भय की महिमा देखी तुमने? चूहा बिना भोजन किए रह जाएगा, किंतु आनेवाले संकट की अपेक्षा आज के संकट की इसे सबसे बड़ी चिंता है। वह अनभिज्ञ है कि एक न एक दिन तो उसे मरना ही है तो सामने रखे भोजन को खाकर क्यों न मरे? यही स्थिति बिल्ली की है। बाज को सामने देख लग रहा है कि साक्षात् मौत उसके सामने खड़ी है। पर बाज की दशा इन दोनों से निराली है। वह कभी चूहे को खाने की सोचता है तो कभी बिल्ली को। उसकी नजर इन दोनों पर अटकी हुई है। उसके सामने जो भोजन रखा हुआ है, उसे वह इन भावी भोजन के सामने उपेक्षित समझ रहा है। यह जीव का स्वभाव है। यदि ये तीनों इसी प्रकार पिंजरों में कैद एक-दूसरे के सामने रहे तो तीनों भूखे मर जाएँगे।'' फिर कन्फ्यूशियस ने अपने शिष्यों का ध्यान राजा की तरफ किया और कहा, ''इन तीनों से अधिक तो यह राजा मूर्ख है, जो अपने ज्ञान के अहंकार में दूसरों की ज्ञान की परीक्षा ले रहा है। ऐसे लोगों की गति एक दिन उस सपेरे की तरह होती है, जो अपनी बीन के धुन पर साँप को नचाता है, किंतु ताल भूलकर एक दिन स्वयं साँप द्वारा डँस लिया जाता है।''

साअ
विनीता भवन
निकट बैंक ऑफ इंडिया
काजीचक, सवेरा सिनेमा चौक
बाढ़-८०३२१३ (बिहार)
दूरभाष : ०९१३४०१४९०१

कहानी

पहला खत

● रवि शर्मा

तेज भागने के बावजूद मेरी कमीज थोड़ी भीग गई थी। मेस से हॉस्टल का रास्ता खुले आसमान से गुजरता था और अगस्त की बारिश कश्मीर में कोई नई बात नहीं थी। मुझे हजरतबल रीजनल इंजीनियरिंग कॉलेज में दाखिला लिये पूरा एक महीना हो चला था। मैं लखनऊ से वहाँ पढ़ने आया था और मेरे जैसे कई और आए थे हिंदुस्तान के कोने-कोने से।

कश्मीर में उस समय अलगाववाद तो न था, लेकिन आमतौर पर कश्मीरी अपने को आजाद कश्मीर का मानते थे और हमें हिंदुस्तान का। एक तरफ कश्मीरी लड़के हमें बिन वीजा के टूरिस्ट कहते थे तो दूसरी तरफ कश्मीर की वादियों में डल और नगीन लेक के बीच बसा यह कॉलेज रोज यह यकीन दिलाता था कि दुनिया में कहीं जन्नत है तो कश्मीर में है। उम्र सोलह की थी, लेकिन एक महीने में ही इतना तो अच्छी तरह पता चल गया था कि दुनिया का स्वर्ग कश्मीर नहीं, अपना घर है और दुनिया का सबसे बड़ा तोहफा है माँ के हाथ का खाना। चलते समय माँ ने आटे के लड्डुओं का एक डिब्बा साथ दिया था, जो मैं दोस्तों से छुपाकर रखता था और खत्म हो जाने के डर से बड़ी किफायत से खाता था। लेकिन इसके बावजूद माँ के हाथ का खाना रोज याद आता था।

समय १९७९ का था, जब पैसे और साधन दोनों सीमित थे। लखनऊ से श्रीनगर का रास्ता पूरा करने में ३६ घंटे लगते थे। २४ घंटे में जम्मू पहुँचने के बाद करीब १२ घंटे का बस का सफर होता था, जो खूबसूरत तो बहुत था, लेकिन कभी-कभी खतरनाक भी लगता था। जीवन में पहली बार घर से बाहर निकला था, और वह भी इतना दूर। घरवालों को भी अच्छी तरह मालूम था कि मैं उन्हें कितना याद करता होऊँगा, इसलिए मेरा छोटा भाई और बहन रोज मुझे खत लिखते थे और जिसमें पढ़ाई के साथ तंदरुस्ती का ध्यान रखने की माँ की हिदायत जरूर लिखी होती थी। हालाँकि माँ ने लिखने के लिए मना किया था, लेकिन फिर भी वे मुझे बता देते थे कि माँ मुझे याद करके कितना रोती हैं और कैसे हरेक खाने की चीज बनाते समय मुझे याद करती हैं।

अपने कमरे की तरफ बढ़ते समय मैंने जेब से कमरे के ताले की चाबी निकाल ली थी, क्योंकि माँ कहती थी कि बारिश के गीले कपड़े जल्द-से-जल्द बदल लेने चाहिए। लेकिन पास पहुँचकर देखा कि कमरा पहले से ही खुला हुआ था। मेरा रूम पार्टनर मुझसे पहले आ चुका था।

''कहाँ रह गया था तू? मैं तुझे ढूँढ़ रहा था।'' उसने कहा, ''तेरा एक खत आया है, तेरी मेज पर रख दिया है।''

बहुराष्ट्रीय और राष्ट्रीय कंपनियों में १४ से अधिक वर्षों तक सी.ई.ओ. के पद पर काम किया। प्रदेश स्तर के खिलाड़ी, टेलीविजन पर उद्घोषक, प्रसिद्ध कपड़ा कंपनी के लिए मॉडल और वेब सीरीज में अभिनेता रह चुके हैं। फोटोग्राफी से लगाव है। एक काव्य कृति 'भीगी रेत' शीघ्र प्रकाश्य।

''कुछ नहीं यार, कुछ सीनियर मिल गए थे और उनका रैगिंग का शौक अभी पूरा नहीं हुआ था।'' मैने खिसियाते हुए कहा।

उसने मेरी तरफ देखा और हँस पड़ा, फिर बोला, ''और सुना, गाने और चुटकुले सबको।''

मैं सबसे पहले कमीज बदलना चाहता था, लेकिन फिर सोचा, पहले खत पढ़ लूँ। पते की लिखावट देखकर साफ पता चलता था कि यह मेरी बहन गुड़िया ने लिखा है। मोतियों सी लिखावट थी उसकी। मैं घर के सारे खत बड़े ध्यान से खोलता था, जिससे वे खराब न हों और पढ़ने के बाद उन्हें करीने से अपनी दराज में रख लेता था। इसको भी मैंने ध्यान से खोला। खत खोला तो पहली नजर में लिखावट पहचान न सका। शायद मंजू की थी। मंजू मेरे मामा की बेटी थी, जो हमारे साथ रहती थी और उसका दाखिला अभी-अभी दूसरी कक्षा में कराया गया था। फिर खत में नीचे नजर पड़ी, जहाँ लिखा था—तुम्हारी माँ। लगता है, इस बार माँ ने मंजू को खत लिखना सिखाने के लिए खत उससे लिखवाया है। 'तुम्हारी माँ' पढ़कर आँखों से बरबस आँसू छलक आए। पलभर के लिए यह महसूस हुआ कि मैंने माँ के हाथों को पकड़ रखा है। फिर धीरे-धीरे खत को पढ़ना शुरू किया—

मेरे प्यारे बेटे,

आशा है तुम सकुशल होगे। जब से तुम गए हो, एक मिनट के लिए तुम्हारी सूरत आँखों से दूर नहीं होती है। तुम्हारे बिना सबकुछ सूना-सूना लगता है। रोज ही जाकर तुम्हारी कुरसी पर बैठ जाती हूँ और सोचती हूँ कि मेरा बेटा यहीं बैठकर पढ़ता था। हर समय याद करती रहती हूँ कि इस समय मेरा बेटा यह कर रहा होगा तो इस समय यह कर रहा होगा। किसी खाने में कोई स्वाद नहीं आता है, यह सोचकर कि मैं यहाँ अच्छा खाना खा रही हूँ, लेकिन मेरे बेटे को होस्टल में अच्छा खाना मिलता होगा या नहीं। तुम अपना ध्यान रखना और पैसों की बिल्कुल फिकर मत करना। रोज जूस पीना और सुबह-शाम दूध जरूर लेते रहना। बेटा, सेहत है तो सबकुछ है। कल ही लड्डू बनाए थे और तुम्हारी बहुत याद आई। गुड़िया भी कहती है कि भैया की बहुत याद

आती है। कल राखी खरीदते समय रो-रोकर बुरा हाल किया था उसने। चिंटू भी तुम्हारे बिना अकेला सा हो गया है और कई दिनों से खेलने तक नहीं गया है।

बेटा, पढ़ाई कितनी जरूरी है, यह तुम अच्छी तरह जानते हो। मन लगाकर पढ़ाई करना। ठीक से पढ़-लिख लोगे तो जीवन में आगे बढ़ोगे। मैं इतनी दूर से आशीर्वाद के सिवा तुम्हारे लिए कुछ नहीं कर सकती।

सुना है बेटा, वहाँ ठंड बहुत होती है, गरम कपड़े पहनकर रखना। तुम्हें वैसे ही जुकाम की शिकायत रहती है। रजाई अगर कम पड़े तो कंबल जरूर जोड़ लेना। हाँ, कपड़े खुद मत धोना, धोबी से धुलवा लेना।

याद रखना बेटा कि तुम्हें जीवन में सफल भी होना है और एक अच्छा इनसान भी बनना है। इनसानियत की बुनियाद पर खड़ी सफलता ज्यादा खूबसूरत और स्थायी होती है।

और हाँ, जब भी पाँच-छह दिन की छुट्टी हो, घर आ जाना और पैसों की ज्यादा फिकर मत करना। मैं अपने बेटे का इंतजार करूँगी।

ढेर सारा आशीर्वाद!

तुम्हारी माँ''

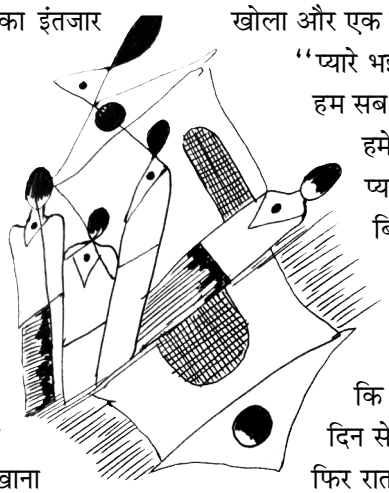

खत को एक बार फिर से पढ़ा और न जाने कितनी बातें एक-एक कर आँखों के सामने घूम गईं। मेरी बहन कहती थी कि मैं माँ का सबसे चहेता हूँ, शायद सबसे बड़ा हूँ इसलिए। माँ बताती है कि गाँव के रिवाज के मुताबिक उनकी शादी १२ साल की उम्र में हो गई थी। पापा उनसे दो साल बड़े थे और दसवीं में पढ़ते थे। बचपन से ही घर को सँभालना सिखलाया गया था उन्हें, कढ़ाई-बुनाई से लेकर खाना बनाने तक। शादी के बाद पहले ही दिन माँ ने शगुन में १२ लोगों का खाना बनाया था और दादाजी ने कहा था कि बहू अच्छा खाना बनाती है। उनके लिए यह ही सबसे बड़ा इनाम था। माँ तब अठारह की थीं, जब मैं पैदा हुआ। पापा गाँव के न सिर्फ पहले ग्रैजुएट हुए, बल्कि इंजीनियर बने। पापा जब तक पढ़े, माँ मुझे लेकर गाँव में दादा-दादी के साथ रहीं। माँ के संयम और इच्छाशक्ति का सारा घर कायल है। याद तो नहीं, लेकिन अंदाजा लगा सकता हूँ कि सबकुछ कितना मुश्किल रहा होगा। लखनऊ से चलते समय रेलगाड़ी की खिड़की से दिखता माँ का चेहरा बरबस याद आ गया, एक हाथ हिलाकर मुझे बिदा कर रही थीं और दूसरे हाथ से लगातार गिरते आँसुओं को पोंछ रही थीं। सामने मेज पर रखे माँ के फोटो पर नजर पड़ी तो आँखें भर आईं।

कब तक माँ का फोटो देखा, पता नहीं। जब ध्यान टूटा तो खत लिफाफे में रखने के लिए हाथ बढ़ाया। लेकिन यह क्या? उसमें एक और कागज था मोड़कर रखा हुआ। जल्दी-जल्दी खोला। यह गुड़िया की लिखावट थी। एक बार में ही पढ़ गया। आँसू झर-झर बहने लगे थे और रुकने का नाम नहीं ले रहे थे। बार-बार माँ का फोटो देखता था और आँसुओं की धार और तेज हो जाती थी। मेरी कमीज अब तक पूरी तरह से भीग गई। सिसकियाँ बँध गई थीं और रुकने का नाम नहीं ले रही थीं। मेरा रूम पार्टनर घबरा गया था और मेरी तरफ आने लगा। मैंने उसे दूर ही रहने का इशारा किया। वो समझदार था, मुझे कमरे में अकेला छोड़कर बाहर निकल गया।

बाहर तेज बारिश की आवाज आ रही थी। मैंने रोते-रोते खिड़की खोल दी। रात के अँधेरे में बाहर कुछ दिखाई नहीं दे रहा था। कमरे के बाहर बादल बरस रहे थे और अंदर मैं। आँसू थे कि थमने का नाम ही नहीं ले रहे थे। न जाने कब तक रोता रहा और फिर कब हाथ में खत लिये-लिये ही मेज पर सर रखकर सो गया।

चिड़ियों की आवाज से अचानक आँख खुली। बाहर मौसम साफ हो गया था। बारिश रुक गई थी और खिड़की से दूर कहीं डल लेक दिखाई दे रही थी। पानी में झाँकता नीला आसमान दूर तक बिखरी हुई चाँदी सा नजर आ रहा था। खत अभी तक मेरे हाथ में था। मैंने उसे खोला और एक बार फिर से पढ़ने लगा। गुड़िया ने लिखा था—

''प्यारे भइया,

हम सब जानते थे कि माँ आपको बहुत प्यार करती हैं। लेकिन हमें भी यह नहीं पता था कि माँ आपको इतना ज्यादा प्यार करती हैं। बचपन से माँ जब भी हम सबको पढ़ने बिठाती थीं तो हमेशा कहती थीं कि उन्हें इस बात का बहुत अफसोस है कि वे पढ़-लिख न सकीं। लेकिन जिस दिन आप का पहला खत आया और हमने उन्हें सुनाया तो वे बहुत रोईं और रोते-रोते बोलीं कि मैं अपने बेटे को अपने हाथों से खत लिखूँगी। उस दिन से माँ रोज सारा काम खत्म करके मुझसे पढ़ती हैं और फिर रातभर उसे दोहराती हैं। और आज जो खत मैं भेज रही हूँ, वो माँ ने अपने हाथ से खुद लिखा है। भइया, आप बहुत भाग्यशाली हैं कि माँ ने अपने जीवन की पहली चिट्ठी अपने सबसे प्यारे बेटे आपको लिखी। कितने आश्चर्य की बात है कि एक महीने से भी कम समय में उन्होंने खत लायक लिखना पढ़ना-सीख लिया। अब तो आपको भी यकीन हो गया होगा कि माँ को दुनिया में सबसे प्यारे आप ही हैं और हाँ, आज मुझे इस बात का यकीन हो गया है कि एक माँ अपने बच्चे के लिए कुछ भी कर सकती है।

आपकी छोटी बहन

गुड़िया।''

एक बार फिर पलकें आँसुओं से भर गईं। मैंने रोते-रोते एक कागज निकाला। आँख का आँसू गाल पर ढलक गया। आँसू के गिरने से आँख का धुँधलापन कुछ कम हुआ और मैं खत लिखने लगा—

मेरी प्यारी माँ··

डी-१, द्वितीय तल, डिफेंस कॉलोनी
नई दिल्ली-११००२४
इ-मेल : ravisharma.india@gmail.com

"Mee Too"

(हर नारी की अंतर्वेदना)

• उर्वशी अग्रवाल

वही किस्सा वही किरदार "Mee Too"
थी बुरी नज़र का शिकार "Mee Too"

पुजारी की छुअन को भूली नहीं हूँ
ऐसा नहीं है की सावन झूली नहीं हूँ
आँखों से अपनी चुपके से टोक देता था
प्रसाद के बहाने अकसर वो रोक लेता था
मम्मी को डर से बताती नहीं थी
इसलिए मैं मंदिर जाती नहीं थी
जी पर रखकर बैठी हूँ भार "Mee Too"

गरमी की छुट्टी में नानी के जाना
भूली नहीं हूँ वो गुज़रा ज़माना
इक रिश्ते का मामा मुझे घूरता था
कोमल से चेहरे पे लब ढूँढ़ता था
ओझल सदा उसकी आँखों से रहती
अपनी कहानी किसी को न कहती
कई बार हुई थी शर्मसार "Mee Too"

घर से निकलते थे जब-जब भी पापा
रिश्तों ने मुझको आँखों से नापा
छुप्पम-छुपाई से डरती थी मैं तो
सच जगहँसाई से डरती थी मैं तो
पापा को कुछ भी बताती तो कैसे
ये परदे शर्म के हटाती तो कैसे
अपने जिस्म में हुई गिरफ्तार "Mee Too"

शिक्षा के मंदिर में शिक्षक न कम था
दलीलों में उसकी हर्गिज़ न दम था
घर पर बुलाकर था नंबर बढ़ाता
अक्षर के माने मुझे फिर सिखाता
उसकी कहानी मैं किसको सुनाती
मारे डर के कभी पाठशाला न जाती
सच बनी हुई हूँ अंगार "Mee Too"

ट्यूशन में टीचर का गालों को छूना
उलझन थीं उलझे बालों को छूना
गुरुवर की दृष्टि सच्ची नहीं थीं
खोटी थी नीयत अच्छी नहीं थी
छोटी थी पर मैं कच्ची नहीं थी
ये भी तो सच है मैं बच्ची नहीं थीं
थी हालात के आगे लाचार "Mee Too"

बचपन जवानी के किस्से बहुत हैं
टूटी हूँ इतना की हिस्से बहुत हैं
अंकल जिसे मैंने हरदम कहा था
उसकी छुअन को भी मैंने सहा था
शोले थे बाहों में देखे हैं मैंने
नाखून निगाहों में देखे हैं मैंने
थी जीवन की धारा हूँ अश्रु की धार "Mee Too"

दुनिया की नज़रें सचमुच बुरी हैं
चुभती हैं ऐसे जैसे छुरी हैं
सुरक्षित नहीं हैं ये राहें कँटीली
गड़ती बदन में हैं आँखें नुकीली
डर लगता है मुझको बनते-सँवरते
डरती हूँ मैं तो तनहा गुजरते
वर्ना करना चाहती हूँ शृंगार "Mee Too"

मेरे बॉस की कुछ शर्तें थीं ऐसी
खोलूँ मैं कैसे वो परतें थीं ऐसी
जो चढ़नी है सीढ़ी वो चढ़के दिखाओ
पर नज़रों में मेरी उतर के दिखाओ
ये अस्मत को मेरी गवारा नहीं था
उसकी नज़रों में खुद को उतारा नहीं था
लिपटी खुदी से रोई जार-जार "Mee Too"

नारी सुरक्षित होती कहाँ है
दुखड़े वो अपने रोती कहाँ है
कोई गैरों की बातें कर-कर के रोया
हमने तो खुद को रिश्तों में खोया
संबंधी कोई यहाँ होता नहीं है
टूटी हो माला पिरोता नहीं है
आप बताती हूँ जीवन का सार "Mee Too"

मिलकर सभी ने मुझको हराया
दर्दों को गाया तो जग मुस्कराया
रिश्तों की नज़रें ऐसे गड़ी थी
मेरे बदन की लिखावट पढ़ी थी
छूने का मतलब बखूबी समझती
आँखों से हरदम थी रहती छलकती
फूलों सा जीवन जैसे था खार "Mee Too"

छाती को अपनी कूटूँ तो कैसे
हूँ ज्वालामुखी पर फूटूँ तो कैसे
गुस्सा जिगर के अंदर भरा है
अश्कों का गहरा समंदर भरा है
अंदर ही अंदर बिखर सी गई हूँ
अपने बदन में ही मर सी गई हूँ
पत्थर की जैसे हूँ कोई मज़ार "Mee Too"

अपने ही घर में पराई हूँ जैसे
कहानी सभी को सुनाई है ऐसे
शर्म आती अब आपबीती बताकर
कैसी है रिश्तों की नीति बताकर
है स्वाद कसैला, कड़वा, तीखा
मर्तबान में भर बैठी हूँ खट्टा-मीठा
मगर फफूँदी लगा अचार "Mee Too"

दोहे

साँसों में है इत्र और, लहजे में है स्वाद।
लज्जत से महके वही, जो करता संवाद॥

गूँगी-बहरी आँधरी, घर की हर दीवार।
कहना-सुनना-चीखना, रोना है बेकार॥

आँखों में आँसू रहे, होठों पर मुसकान।
इस धरती के जीव को, कहते हैं इनसान॥

ईंटें मेरे नाम की, लगी हुई बुनियाद।
दीवारों को आई न, इक पल मेरी याद॥

साथ रहेगा उम्रभर, यादों का संसार।
जिक्र तेरा जब आएगा, होंगे झंकृत तार॥

हमने तो रक्खा नहीं, दिल में अपने बैर।
पूरा ये विश्वास है, रब रखेगा ख़ैर॥

तरुवर बनकर मैं करूँ, खूब घनेरी छाँव।
आकर मेरे पहलु में, बैठे सारा गाँव॥

नींदों की अवहेलना, कैसे देखूँ ख्वाब,
मन के बंजर बाग में, खिलते नहीं गुलाब।

आसमान की बिजलियाँ, गिरती मेरे गाँव,
मुझे बताओ आप ही, रखूँ कहाँ पे पाँव।

सूरज ने भेजा मुझे, सुबह-सुबह पैगाम,
अभी रजाई छोड़ दें, कर लें कुछ तो काम।

आँसू पीड़ा दर्द हैं, मेरा ही सामान।
सुलगाती हूँ रोज़ मैं, यादों का लोबान॥

नीम उगा पीपल लगा आकर सावन झूल।
क्यों कर्मों के बाग में, बोकर चला बबूल॥

मंडी तक जाता नहीं, गिर जाते हैं दाम।
रावण का बाज़ार है, मुझे बचाओ राम॥

मेरी छत में छेद है, नहीं किसी को खेद।
मौसम खुली किताब है, किसको दूँ मैं भेद॥

कोई तो हल खोज़ लो, कुछ तो करो निदान।
चलो मनाएँ आज़ सब, रूठा हुआ किसान॥

पशुधन को समझा नहीं, मेरा भारत देश।
कहाँ करूँ मैं बोल अब, अर्ज़ी अपनी पेश॥

मुझसे मुझको छीनता, ऐसा है वो कौन।
जब भी उससे बात की, वो रहता है मौन॥

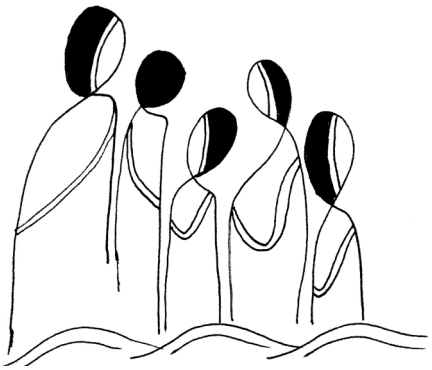

तेरे अपने दायरे, कुछ मैं भी मजबूर।
जीवन पथ पर साथ है, लेकिन दिल से दूर॥

मैं ख़ुद से अनजान हूँ, मेरी पता न जात।
एक ज़माना बीत गया, ख़ुद से हुई न बात॥

खुद को में हूँ सींचती, सोच यही की बाग़।
हाय ज़माने दीखते, तुझको मेरे दाग़॥

मैं हूँ शबरी राम की, चखती रहती बेर।
तकती रहती रास्ता, हुई कहाँ पर देर॥

टूट-फूट का कौन हो, बोलो जिम्मेदार।
हमसे तो होगा नहीं, रिश्तों का व्यापार॥

बेटा है परदेस में, को से बोले हाल।
पल-पल माँ तस्वीर का, चूमे हैं बस भाल॥

मुख से राम ही बोलिए, बनते बिगड़ें काम।
अपने भगतों के भगत, होते हैं श्री राम॥

रावण से टूटा नहीं, सीता का विश्वास।
राम चिन्हों को सीता, तकती थी आकाश॥

प्रभु जी तुमसे मेरी, लगी हुई उम्मीद।
खुशी कि मेरे वास्ते काटो एक रसीद॥

बेटी कविता शायरी, बेटी सुंदर गीत।
खिड़की रोशनदान है, बेटी मेरी भीत॥

मेरी लाडो लाड़ली, कितनी है नादान।
आँखों में शैतानियाँ, होठों पर मुस्कान॥

बिटिया की हर बात की, मीठी है तासीर।
थोड़ा सा पुचकार कर, हर लेती हर पीर॥

कभी-कभी तो खेल में, ऐसी लगती होड़।
बेटी मुझको ओढ़ती, लूँ मैं बेटी ओढ़॥

पापा की है लाड़ली, मम्मी की है शान।
दादा की वो शान है, दादी का अभिमान॥

बेटा है अनमोल माना, बेटी भी अनमोल।
दोनों एक समान हैं, देख तराजू तोल॥

बिटिया पीहर से चली, करली आँखें बंद।
माँ बाबा की लाडली, करले बातें चंद।

दुनिया की इस भीड़ में, जाऊँ किसके पाप।
मुझको तो इनसान से, आती छल की बास॥

४/१९, आसफ अली रोड
नई दिल्ली-११०००२
दूरभाष : ०११-२३२४५९९९

जन्मदिवस (२८ जनवरी) पर विशेष

पं. विद्यानिवास मिश्र का संस्कृत काव्य विमर्श

● अजयेंद्रनाथ त्रिवेदी

पंडित विद्यानिवास मिश्र के सरोकारों पर हो रही एक आत्मीय चर्चा में हस्तक्षेप करते हुए डॉ. कृष्णबिहारी मिश्र ने उन्हें, 'विचार-क्रांति का अहिंसक योद्धा' कहा था। प्रमाण के रूप में उन्होंने विनोबाजी का एक उद्धरण भी दिया। उद्धरण इस प्रकार था—'पुराने शब्दों पर नए अर्थ की कलम लगाना विचार-क्रांति की अहिंसक प्रक्रिया है।' रामायण, महाभारत, श्रीमद्भागवत तथा गीतगोविंद पर पंडितजी के विचारों को समझने की चेष्टा में विनोबाजी की यह बात मुझे सोलह आना सही लगी। इन कृतियों पर विद्यानिवास मिश्र के व्याख्यानों तथा निबंधों के अनुशीलन से यह पता चलता है कि कालजयी ग्रंथ अर्थ-गौरव-गर्भ होते हैं तथा अपने युग के आग्रहों से मुक्त रहते हुए सार्वकालिक प्रासंगिकता बनाए रखते हैं। हर युग में कोई मतिमान व्याख्याकार आता है और जैसा कि विनोबाजी ने कहा है—'पुराने शब्दों पर नए अर्थ की कलम लगा जाता है।' पंडित विद्यानिवास मिश्र ऐसे ही मतिमान व्याख्याकार हैं; ऐसा हमारा मानना है।

स्व. पं. विद्यानिवास मिश्र

पंडित विद्यानिवास मिश्र लोक तथा शास्त्र के आधुनिक निर्वचनकारों में अन्यतम हैं। लोक के प्रति संसक्त हिंदी के एक ललित निबंधकार के रूप में वे अपना विशिष्ट स्थान तो रखते ही हैं, संस्कृत की व्याकरण तथा साहित्यिक परंपरा के एक महनीय तीर्थ भी हैं। संस्कृत के कालजयी महाकाव्यों 'वाल्मीकि रामायण', 'महाभारत', 'श्रीमद्भागवत पुराण' तथा 'गीतगोविंद' के प्रति उनकी कुछ मौलिक स्थापनाएँ हैं। इन ग्रंथों पर होनेवाले परंपरागत विमर्श को उन्होंने एक नई दिशा दी है। इन सद्ग्रंथों को केंद्र में रखकर दिए गए उनके व्याख्यानों तथा इनको केंद्र में रखकर लिखे गए उनके निबंध को सहृदय श्रोताओं एवं मान्य आचार्यों ने काफी पसंद किया। प्रस्तुत निबंध में हम 'रामायण', 'महाभारत', 'श्रीमद्भागवत' तथा 'गीतगोविंद' पर पंडितजी के विचार देखेंगे।

'रामायण', 'महाभारत', 'श्रीमद्भागवत' तथा 'गीतगोविंद' संस्कृत काव्य-परंपरा के विशिष्ट रत्न हैं। पंडितजी ने विभिन्न अवसरों पर दिए गए अपने व्याख्यानों तथा निबंधों में इन ग्रंथों पर विचार किया है। वाल्मीकि रामायण पर उनकी पुस्तक 'रामायण का काव्यमर्म' प्रभात प्रकशन से प्रकाशित हुई है। 'महाभारत' पर उनकी पुस्तक 'महाभारत का काव्यार्थ' नेशनल पब्लिशिंग हाउस से, 'श्रीमद्भागवत' पर उनके विचार 'लीलापुरुष श्रीकृष्ण' प्रभात प्रकाशन से तथा 'गीतगोविंदम्' पर केंद्रित उनकी पुस्तक 'राधा माधव रंग रँगी' भारतीय ज्ञानपीठ से प्रकाशित हुई है। इन पुस्तकों में जैसा कि लेखक ने एक स्थान पर स्वीकार भी किया है कि शास्त्रीय विवेचना या मतवाद आदि की स्थापना करने की कोई चेष्टा नहीं है, प्रत्युत ये विचार एक भावक के रूप में उनकी अभिव्यक्ति ही हैं। जो स्वाद शास्त्रालोचन के प्रयास में बहुधा दब जाता है, उसे पंडितजी ने स्वयं चखा है तथा हमारे आस्वाद के लिए इन पुस्तकों में उसे सँजोया है।

'वाल्मीकि रामायण' पर पंडितजी के व्याख्यान तथा कुछ निबंध 'रामायण का काव्यमर्म' नामक पुस्तक में संकलित हैं। यह पुस्तक पंडितजी की रामकथा विषयक चिंतना का प्रतिफल है। इसमें 'वाल्मीकि रामायण' के साथ-साथ भवभूति तथा तुलसी की रामकथाओं पर उनके विचार व्यक्त हुए हैं। इसके परिशिष्ट में नर्मदा प्रसाद उपाध्याय का आलेख 'वाल्मीकि रामायण और मध्ययुगीन चित्रकला' शामिल है। रामकथा से संबंधित कुछ चित्रों के एलबम ने इस पुस्तक के कलेवर को श्रीसमृद्ध किया है। यहाँ हम इस पुस्तक में 'वाल्मीकि रामायण' के संबंध में पंडितजी के विचारों तक ही अपने को सीमित रखेंगे।

डॉ. विद्यानिवास मिश्र को 'रामायण' की अपेक्षा 'महाभारत' ज्यादा प्रिय था। इसका कारण उन्होंने 'महाभारत' के चित्रपट की विराटता को माना है। परंतु 'रामायण' की सांप्रतम (आजकल) तथा अस्मिन लोके (इस लोक में) की प्रतिज्ञा ने पंडितजी को आकर्षित किया। उनका कहना है कि 'रामायण' के पूर्व भी काव्य थे, पर वे देव-काव्य थे। 'रामायण' से मानुष-काव्य का आरंभ होता है। रामकथा की मंदाकिनी वाल्मीकि रामायण रूपी गोमुख से निकलकर भास, कालिदास, प्रवरसेन, भवभूति से होती हुई स्वयंभू, तुलसी, केशव, मैथिलीशरण गुप्त, निराला तथा नरेश मेहता तक चली आई है। पंडितजी मानते हैं कि इन रामकथाओं में घटनाक्रम का अंतर भले हो, पर 'राम' तथा 'रामायण' के पात्र सर्वत्र ही एक नई दीप्ति से आलोकित मिलते हैं।

'वाल्मीकि रामायण' के संदर्भ में पंडितजी ने इस प्रश्न पर गंभीरता से विचार किया है कि रावण के पराभव, रामराज्य की स्थापना आदि के बाद भी रामायण आखिर करुण-रस प्रधान क्यों है, वीर-रस प्रधान क्यों नहीं? और यह कि राम की गाथा वीरगाथा क्यों नहीं है? पंडितजी ने रामकथा की परंपरा में इसका उत्तर खोजा है। राम का चरित्र उदात्त है तथा संतुलित भी। धर्म तथा सत्यसंधता उनके चरित्र के अनन्य विभूषण हैं। इनकी वजह से भी कठिन निर्णय लेने की घड़ी में राम अंतर्द्वंद्व में पड़ जाते हैं। पंडितजी के अनुसार इसी अंतर्द्वंद्व से उबरकर राम का चरित्र संपूर्णता प्राप्त करता है। निर्वासनों का अंतहीन सिलसिला राम के जीवन में बना रहा है। उन्हें व्यवस्था तो बनाए ही रखनी थी, उसकी शुद्धता तथा उपयुक्तता पर आँच न आए, यह भी देखना था। इस संतुलन-साधना में राम ने लोक-मर्यादा को वरीयता दी, व्यक्ति के रूप में अपने मतामत

की उपेक्षा की। पंडितजी ने सीता के निर्वासन में राम का निर्वासन देखा है। इस निर्वासन में करुणा राम का संबल रही है।

'रामायण का काव्यमर्म' में पंडितजी ने दिखलाया है कि 'रामायण' में व्यक्ति-व्यक्ति के बीच का संबंध केंद्र में है, ममता का अछोह विस्तार है। राम का कठोर निर्णय भी इस सौमनस्य में बाधक नहीं बन सका और ममता तिरोहित नहीं हुई, क्योंकि राम धर्म के साक्षात् विग्रह हैं। राम धर्म की रक्षा के लिए प्रतिश्रुत हैं तथा सभी के साथ आत्मीय व्यवहार करने के कारण वे सामंजस्य की प्रतिमूर्ति हैं। राम अपने कथन को प्रमाणित करते हैं तथा अपने कार्य से लोक की आराधना करते हैं। पंडितजी की मान्यता है कि राम अपने लिए कठोर तथा लोक के लिए करुण हैं। राजधर्म के साथ-साथ मानव धर्म के प्रति भी राम संवेदनशील रहे हैं। दिव्य बल से समन्वित होते हुए भी उन्होंने पौरुष पर भरोसा किया है। साधारण जन में जो असाधारणता है, राम ने उसे पहचाना है तथा उसकी प्रतिष्ठा की है।

सीता-निर्वासन का प्रसंग परवर्ती काल से आज तक आलोचना का विषय बना हुआ है। इस प्रसंग ने भी पंडितजी को छुआ है। उन्होंने सीता के निर्वासन को राम का निर्वासन कहा है। वे कहते हैं कि 'रामायण' में सीता को लेकर राम के समक्ष तीन बार विकट परिस्थितियाँ आई हैं—सीता हरण, सीता अग्निपरीक्षा तथा सीता पृथ्वी-प्रवेश। इन तीनों स्थितियों में राम की क्रोधाग्नि भड़की है। सामान्य जन यह समझते हैं कि राम सीता के प्रति निठुर रहे हैं। पंडितजी मानते हैं कि यह निठुराई राम ने सीता के प्रति नहीं, वस्तुत: अपने प्रति की है। सीता के वियोग में राम के उद्‌गारों से यह संकेत भी मिलता है। राम अपनी ही मर्यादा को लेकर चिंतित नहीं हैं, लोक मर्यादा के प्रति भी जागरूक हैं। रामायण की कथा की महत्ता राम के शौर्य-पराक्रम में जितनी है, राम के औदार्य में और उनकी धर्मप्रानता में भी उतनी ही है। पंडितजी की मान्यता है कि रामायण जितना रामचरित है, उतना ही सीताचरित भी है।

रामायण की बनावट पर भी पंडितजी ने मौलिक तरीके से विचार किया है। वाल्मीकि ने समाधि की अवस्था में नारद से राम की कथा ग्रहण की। वे कहते हैं कि रामायण की प्रत्येक मार्मिक परिस्थिति एक गहरी वास्तविकता के अन्वेषण से उद्‌भासित है। ऐसी प्रत्येक परिस्थिति एक असमाधेय द्वैत से गुजरकर मार्मिक बनती है। पंडितजी के अनुसार, राम का चित्रण रामायण की कथा का एक पार्श्व है। राम के विलोम रावण की कथा इस काव्य का दूसरा पार्श्व है।

महाभारत को 'पंचम वेद' कहा जाता है। इसकी इतनी स्तुति हो चुकी है, इस पर इतना कुछ कहा जा चुका है कि अब विद्वान् से विद्वान् व्यक्ति के लिए इस पर फिर से कुछ कहना कठिन हो जाता है। महाभारत की गर्वोक्ति प्रसिद्ध ही है—'यदिहास्ति तदन्यत्र यन्नेहास्ति न तत्क्वचित्।' परंतु पंडितजी की रसान्वेषी प्रतिभा ने इस ग्रंथ के काव्यमर्म के उद्‌घाटन का लगभग मौलिक-सा काम किया है। महाभारत को वे सनातन-स्रोत तथा निरंतर आधुनिक ग्रंथ मानते थे। अत: महाभारत के रचनाकाल, उसकी ऐतिहासिकता, उसकी प्रासंगिकता तथा उसकी धर्मशास्त्रीय मीमांसा, जैसे विद्वानों को प्रिय विषय को छोड़ते हुए उन्होंने

हिंदी की विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं, जर्नलों में निबंध, शोध-आलेख आदि प्रकाशित। संप्रति मुख्य प्रबंधक, राजभाषा, यूको बैंक, कोलकाता।

उसके काव्यतत्त्व के अनुशीलन में अपना मन लगाया। शांत तथा करुण रस को महाभारत का मुख्य रस माना जाता रहा है। पंडितजी रसों के इस द्वंद्व में नहीं पड़े। वे कहते हैं कि उस द्वंद्व के भीतर से गुजरते हुए महाभारत का एक अतिक्रामी अर्थ प्रस्तुत हुआ कि मुख्य रस न शांत है, न करुण, अपितु मुख्य रस एक अव्यय भाव है, अच्युत भाव है, एक सर्वभूतात्मक भाव है। सत्य के साथ करुणा का संयोजन है।

'महाभारत का काव्यार्थ' में महाभारत का सत्य, महाभारत की पीड़ा तथा महाभारत का अव्ययभाव, इन तीन अध्यायों में पंडितजी ने अपनी बात कही है। पहले अध्याय में उन्होंने हृदय के अपराजेय भाव को महाभारत का सत्य बताया है। महाभारत के आदि नाम 'जय' को वे हृदय की इसी अजेयवस्था का सूचक मानते हैं। इस ग्रंथ की सनातनता में महाभारत के सत्य का एक दूसरा पहलू उन्हें व्यक्त हुआ लगता है। इसका ऐतिहासिक विस्तार अनुल्लंघ्य उदधि की तरह है तथा इसकी कथान्विति सृष्टि के वैचित्र्य से तुलनीय है। महाभारत की व्यास परंपरा की शाश्वतता का इससे बड़ा प्रमाण और क्या होगा कि यह परंपरा, जो तब आरंभ हुई थी, आज तक चली आ रही है। पंडितजी मानते हैं कि विरुद्धों में अविरोध महाभारत का सत्य है। पंडितजी ने भीष्म द्वारा की गई श्रीकृष्ण-स्तुति से एक श्लोक उद्धृत करके अपनी बात रखी है। इस स्तुति में भीष्म ने उस सत्य को नमन किया है, जो जिजीविषा (पढें—अमृतभाव) से उपजने वाले ऋत से सत् का सेतु बनाता है और जो धर्म-अधर्म के व्यवहार को उस सेतु निर्माण की सामग्री कहता है।

महाभारत का रस क्या है? इस प्रश्न पर विद्वानों के मत का परिचय देने के बाद पंडितजी ने अपना मत व्यक्त किया है। उन्हें महाभारत में करुणा-ही-करुणा लहराती हुई दिखाई देती है। उन्हें महाभारत दु:ख की सही पहचान करानेवाला काव्य लगता है। इसी पहचान से महाभारत संपूर्ण जीवन को पहचानने का संदेश देता है। महाभारत की यह पीड़ा एक ओर तो उन्हें धृतराष्ट्र के ऐकांतिक तथा अजानपदिक दु:ख में दीखती है तो दूसरी ओर उन्हें यह व्यास के युद्धपूर्व की परिकल्पना में आए जानपदिक दु:ख में दीखती है। वे व्यास को उद्धृत करते हैं—''जो जन्म लेता है, मरता है, जो उठता है, वह गिरता है, जो जुड़ता है, वह बिछड़ता है। सुख का अंत है आलस्य और फिर दु:ख, दु:ख का अंत है दक्षता, कुशलता, सजगता और सुख।''

महाभारत के अव्यय भाव ने पंडितजी को बहुत प्रभावित किया है। पंडितजी ने कहा है कि व्यास ने श्रीकृष्ण के इस सर्वोपेक्षी और सर्वापेक्षी, सबकी उपेक्षा करनेवाले पर सबकी अपेक्षाओं को समझनेवाले सत्य से रस लेकर अपनी रचना (महाभारत) का बिरवा रोपा। उन्होंने महाभारत में समभाव से प्रवहमान सत्य की धारा को महाभारत के

अव्यय (जिसका व्यय या नाश न हो) भाव के रूप में पहचाना है। वे मानते हैं कि मात्र एक कथा कहने के लिए ही व्यास ने महाभारत की रचना नहीं की। उन्होंने महाभारत की रचना उस पवित्र ज्ञान-यज्ञ के निरंतर अभ्यास के लिए की, जिसे पाकर माताएँ पुत्रवती होती हैं, पिता पोषक होते हैं और सृष्टि का चक्र चलता रहता है। पंडितजी का विचार है कि इस अव्यय भाव को व्यक्त करने के लिए व्यास ने सृष्टि को दिव्य चक्षु से देखा और इस प्रकार एक पुण्य इतिहास रच गया।

'श्रीमद्भागवत पुराण' को केंद्र में रखकर पं. विद्यानिवास मिश्र के व्याख्यानों का संग्रह है 'भावपुरुष श्रीकृष्ण'। इसमें कुछ सामग्री 'गीतगोविंद' पर भी है। पंडितजी ने श्रीमद्भागवत पुराण को भी काव्य की कोटि में ही रखा है। कहा है—'पुराण है ही काव्य की वाणी।' भावपुरुष श्रीकृष्ण में पंडितजी ने भागवत का दिव्यतत्त्व, भागवत का मानवीय तत्त्व तथा उसकी भक्ति भावना पर विचार किया है। अपने विचारों के संबंध में यहाँ भी पंडितजी ने स्पष्टीकरण दिया है। कहा है, ''इसमें न तत्त्व समीक्षक की दृष्टि है, न इतिहास-लेखक की, न धर्म परायण की, न कलाकार की, न कवि की, इसमें साहित्य के सामान्य धरातल पर भागवत और गीतगोविंद से अभिभूत पाठक की दृष्टि है।''

पंडितजी के अनुसार 'श्रीमद्भागवत पुराण' सनातन ग्रंथ है। यह इसलिए कि इसमें वर्णित कृष्ण की लीला तथा उसका गान, दोनों ही सनातन हैं। वे मानते हैं कि यद्यपि यह पुराण परमहंसों की संहिता है, तथापि इसमें सामान्य जन की चित्तवृत्ति के लिए यथेष्ट विश्राम उपलब्ध है। भागवत की कथा सूत-शौनक संवाद, शुक-परीक्षित संवाद, मैत्रेय-विदुर संवाद तथा श्रीकृष्ण-विदुर संवाद, इन चार संवादों में संपन्न हुई है। पंडितजी ने इस कथा को भारत-भूमि का हृदय कहा है। वे कहते हैं कि भारत-भूमि की तरह ही भागवत-भूमि भी बड़ी कठोर है और बड़ी कोमल भी श्रीकृष्ण की तरह। पंडितजी के शब्दों में, ''जो इसे बाँचकर अपनी जीविका चलाता है, उसके हाथ में आकर निकल जाता है, जो पूरा अर्थ नहीं समझता, पर किसी एक क्षण में कहीं किसी प्रसंग पर विगलित हो जाता है, अश्रु और रोमांच बन जाता है, भागवत उसका हो जाता है। श्रीकृष्ण भी ज्ञान-संपन्नों के उतने नहीं होते, जितने अकिंचन और सहज व्यक्ति के होते हैं।''

पंडितजी के अनुसार श्रीमद्भागवत का रस शरद् काव्य का रस है। यह मेघों से बरसकर उथला जाने, नदी के जल का घटकर निथर जाने, संतृप्त पृथ्वी का कास वनराजियों से विहँस उठने, आकाश के स्वच्छ हो जाने पर छलकता है। इसकी व्याख्या करने के सच्चे अधिकारी तो परमहंस ही हैं। पर इसका अर्थ यह नहीं कि अकिंचन के लिए भागवत के पास कुछ नहीं है। अकिंचन को उसकी श्रद्धा के अनुपात में श्रीमद्भागवत भिगो जाता है। आखिर भगवत्ता की पूर्णता मानवदेह में ही तो होती है। मानवदेह परमार्थ के लिए ही बनी है और इसी में इसकी सार्थकता एवं महत्ता है। स्वार्थ में पड़कर हम मानवदेह की गरिमा खो देते हैं। पंडितजी के अनुसार, भागवतकार मानवदेह का महत्त्व इसी में मानते हैं कि वह दूसरे प्राणियों में निहित चैतन्य की संभावना को समझ और उसे आत्मरूप में देख सकता है। श्रीमद्भागवत की यह अपेक्षा है कि नरदेह सृष्टि के अखंड प्रवाह को अखंड बनाए रखने का माध्यम बने।

पंडितजी ने श्रीमद्भागवत की दो बातों की ओर ध्यान खींचा है। पहली बात तो यह कि यह सृष्टि विराट् है तथा एकात्म भी। दूसरी बात यह है कि वासुदेव ही सबकुछ हैं—'वासुदेवः सर्वम्'। पंडितजी समझते हैं कि सृष्टि की विराटता तथा एकात्मता सर्वभूतात्मभाव की पीठिका है। वासुदेव ही सबकुछ हैं, ऐसा यह दिखलाने के लिए है कि इस विश्व-व्यवस्था में तत्त्वतः कोई भेद नहीं है। कोई ऊँचा-नीचा, बड़ा-छोटा नहीं है, क्योंकि स्वयं श्रीकृष्ण इन सारी उपाधियों से ऊपर उठकर, सारी वर्जनाओं का अतिक्रमण करके अपनी विशिष्टता में सामान्य तथा सामान्य में विशिष्ट बने रहे। पंडितजी के अनुसार भागवत का यही भाव परमहंस भाव है। इसी को सबसे ऊँची मानवीय गरिमा प्रदान की गई है।

पंडित विद्यानिवास मिश्र का मत है कि श्रीमद्भागवत श्रीकृष्ण भाव की एक विशाल यात्रा का विवरण है। चूँकि यह सदैव नया रहता है, इसे इतिहास नहीं, पुराण ही कहा जा सकता है। पुराण अर्थात् पुराना न पड़नेवाला। 'भागवत पुराण' को पढ़ते समय घटनाएँ प्रत्यक्ष घटती हुई सी लगती हैं, व्यतीत नहीं, क्योंकि श्रीकृष्ण एक भाव हैं, उनका वाङ्मय विग्रह श्रीमद्भागवत अतीत की स्मृति नहीं, वर्तमान की सुधि है—पल-पल बीत रहे वर्तमान की सुधि।

जयदेव विरचित 'गीतिकाव्य गीतगोविंद' को पंडित विद्यानिवास मिश्र ने श्रीमद्भागवत का पूरक ग्रंथ कहा है, उसकी फलश्रुति माना है। 'राधा माधव रंग रँगी' नामक पुस्तक में इस गीतिकाव्य पर दिए उनके व्याख्यान तथा निबंध संगृहीत हैं। गीतगोविंद सवा दो दिनों की कहानी है। इसमें मात्र तीन पात्र हैं—श्रीकृष्ण, राधा तथा सखी। पहला दिन श्रीकृष्ण का गोपबधुओं के साथ विहार करते बीतता है। इसे देख खिन्नमना राधा अपने कुंज में लौट जाती है। रात आते ही श्रीकृष्ण सखी को भेजते हैं राधा को बुलाने के लिए। मानिनी राधा नहीं आती है। दूसरा दिन मान-मनौवल में बीतता है। पहले तो नहीं, पर सखी के समझाने-बुझाने पर वह श्रीकृष्ण के कुंज में जाती है। वह रात श्रीकृष्ण-राधा के अभिसार की रात होती है। अगली सुबह राधा श्रीकृष्ण से आग्रह करती है कि वे राधा को फिर से सजा दें, अलंकृत कर दें। श्रीकृष्ण ऐसा ही करते हैं। पंडितजी के अनुसार नई राधा श्रीकृष्ण के हाथों रची जाए, यह लक्ष्य पूरा होता है। 'गीतगोविंद' यहीं संपन्न हो जाता है।

पंडित विद्यानिवास मिश्र ने 'गीतगोविंद' को एक नया युगारंभ कहा है। उनका मत है कि यदि श्रीमद्भागवत श्रीकृष्ण का वाङ्मय विग्रह है तो गीतगोविंद राधा का गीतमय विग्रह। वे इस गीतिकाव्य को रूपायमानता की संभावनाओं का घनीभवन मानते हैं। उनके अनुसार गीतगोविंद भारत के सर्जनात्मक इतिहास की ऐसी महत्त्वपूर्ण घटना है, जो भविष्य में भी आवर्त तथा विवर्त के रूप में प्रत्यक्ष अनुभवगम्य होती रहेगी। यहाँ पंडितजी सावधान करते हुए कहते हैं, ''ऐसा तभी होगा, जब हम इसकी विषयवस्तु को भारतीय विश्वदृष्टि के आलोक में देखेंगे, अध्यात्म के संसार को इंद्रियगोचर संसार से अविलग देखेंगे।''

पंडित विद्यानिवास मिश्र के अनुसार 'गीतगोविंदम्' ने 'राधाकाव्य' को विस्तार दिया है। इसमें वे श्रीकृष्ण तत्त्व तथा राधा तत्त्व को दो नहीं,

एक माननेवाली एक समग्र दृष्टि पाते हैं। सांस्कृतिक संवेदना की दृष्टि से वे गीतगोविंद को एक नए युग के उन्मेष के रूप में लेते हैं। इसमें वे राधा तत्त्व का विस्फोट पाते हैं, जिस पर श्रीकृष्ण तत्त्व का आच्छादन है। 'राधा माधव रंग रँगी' नामक पुस्तक के तीन निबंधों में गीतगोविंद को राधा तत्त्व की पीठिका के रूप में स्थापित किया गया है तथा राधा के माधवभाव में निमज्जित हो जाने में इस गीतिकाव्य की संपूर्णता देखी है। वे कहते हैं कि 'गीतगोविंद' एक नई राधा को रचने का, स्वयं श्रीकृष्ण द्वारा रचे जाने का काव्य है। वे रेखांकित करते हैं कि कवि जयदेव से पहले भी राधा-कृष्ण लोक मानस में सप्रतिष्ठित थे। उनका केलि रस भी परिपक्व हुआ था। बस जयदेव के पहले किसी कवि ने श्याम बिंदु को अपने में समाहित नहीं देखा था और गौर छवि के चारों ओर नाच-नाचकर वृत्त बनते नहीं देखा था। पंडितजी ने इसी दृष्टि को 'गीतगोविंद की अपूर्वता' कहा है। उनके अनुसार यह चिर अभिलाषा का, सनातन आकुलता का काव्य है, जो श्रीकृष्ण की विभूति के योग से मोक्ष का भी मोक्ष बन गया है।

पंडित विद्यानिवास मिश्र संस्कृत काव्य की रसधार से आर्द्र-चित्त आचार्य हैं। लोक के प्रति उनकी प्रीति ने इस आर्द्रता को एक सोंधी सुगंध भर दी है। फलस्वरूप संस्कृत काव्य वैभव की एक अभिनव व्याख्या हमारे सामने आई है। 'वाल्मीकि रामायण', 'महाभारत', 'श्रीमद्भागवत' तथा 'गीतगोविंद' से संस्कृत काव्य का एक परिप्रेक्ष्य बनता है। पंडितजी ने इस परिप्रेक्ष्य की रसवादी व्याख्या करके संस्कृत काव्य-विमर्श को एक नए दिगंत में स्थापित किया है। जैसा कि स्थान-स्थान पर पंडितजी ने स्वयं स्पष्ट किया है कि यह व्याख्या शास्त्रीय विमर्श नहीं, भावक की अभिव्यक्ति है। इस व्याख्या में पर्याकुल मन का विश्राम है तथा द्विधाग्रस्त मानस को निर्द्वंद्व पथ का निर्देश है। इसमें संदेह नहीं कि भारतीय साहित्य, अध्यात्म तथा कला को सर्वतोभावेन पुष्ट करनेवाली संस्कृत की उक्त काव्य कृतियों की पंडितजी द्वारा की गई व्याख्या से उन कृतियों को एक नए प्रकाश में देखने का अवसर हमें मिला है।

मुख्य प्रबंधक (राजभाषा)
यूको बैंक, राजभाषा विभाग
प्रधान कार्यालय १०, बी.टी.एम. सरणी
कोलकाता-७००००१
दूरभाष : ९८७४४५९७६७

दोहे

प्राणवायु के मंत्र

● सुरेश उजाला

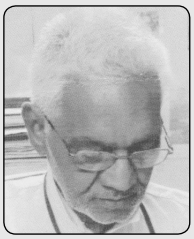

सुपरिचित कवि-लेखक। दूरदर्शन एवं आकाशवाणी दिल्ली तथा लखनऊ केंद्रों से कविताओं का प्रसारण। प्रतिष्ठित पत्र-पत्रिकाओं में रचनाओं का प्रकाशन। अंग्रेजी, उर्दू, पंजाब, तमिल एवं बंगला भाषा में कविताओं का अनुवाद। अनेक संस्थाओं द्वारा सम्मानित एवं पुरस्कृत।

जो मूर्त-अमूर्त है, आस-पास विस्तार।
वो सब पर्यावरण है, जीवन का आधार॥

जलवायु-उत्ताप-भू, जीव और निर्जीव।
ये ही पर्यावरण की, रखते सुदृढ़ नींव॥

नीर-प्रदूषण अति बढ़ा, इसका करें निदान।
करना होगा अन्यथा, जहरीला जलपान॥

भू-दोहन की अति करे, जैव-संपदा नास।
अब सचेत हो जाइए, अरे कुमति के दास॥

ध्वनि-प्रदूषण कर रहा, मानव को बीमार।
हृदय-रोग बढ़ने लगा, कान हुए बेकार॥

जंगल से मंगल मिले, इनको करो न नष्ट।
नहीं तो भोगती रहेंगी, सदा पीढ़ियाँ कष्ट॥

कचरा निस्तारण करें, यों सारे उद्योग।
पर्यावरण पुनीत हो, मानव रहे निरोग॥

चंगे-चंगे वृक्ष के, कितने चंगे रंग।
मानव इनके संग तो, वे भी उनके संग॥

जितनी है चादर बड़ी, उतने पैर पसार।
आबादी का डालिए, अधिक न भू पर भार॥

जगत्-प्रदूषण हरण के, वृक्ष एक संयंत्र।
जपते ये अनवरत हैं, प्राणवायु के मंत्र॥

समझ लीजिए पेड़ भी, एक आपका पूत।
उसे घरौब्बा मानिए, गृह सदस्य मजबूत॥

पीपल के तरु के तले, बोध पा गए बुद्ध।
चिंतन में आया यहाँ, पर्यावरण विशुद्ध॥

दिया बुद्ध ने वृक्ष को, 'जीव-संयोतो' मान।
इन पर निर्भर हैं सभी, पशु-पक्षी-इनसान॥

सबका जीवन हो सुखी, सबका हो कल्याण।
हिंसा-प्रतिहिंसा नहीं, करती युग-निर्माण॥

पाँच मुक्तक

तर्क करता जा रहा है आदमी
स्वर बदलता जा रहा है आदमी,
क्रांति के इस दौर में ऐ साथियो
भीम बनता जा रहा है आदमी।

हम सभी के मन में वो आबाद है
मानवीय सोच की बुनियाद है,
शोषितों का दर्द सीने में लिये
बेजुबाँ के मौन का संवाद है।

है बहुत छोटा मगर आकाश है
आनेवाली क्रांति का आभास है,
हर गलत अवधारणा से लड़ रहे
रच रहे नित्य नया इतिहास है।

लक्ष्य से भटका हुआ है आदमी
अर्थ में अटका हुआ है आदमी,
आज के इस दौर में ऐ साथियो
पेड़ पर लटका हुआ है आदमी।

सपने आँखों में सजाए रखिए
ज्ञान के दीप जलाए रखिए,
लक्ष्य मिल जाएगा तुम्हें एक दिन
मन में विश्वास जगाए रखिए।

१०८ तकरोही, पं. दीनदयाल पुरम् मार्ग
इंदिरा नगर, लखनऊ-२२६०२९ (उ.प्र.)
दूरभाष : ०९४५११४४४८०

कहानी

घिरती हुई साँझ

● उषा यादव

माँ कात्यायनी के मंदिर में जाकर माथा नवा आने का प्रस्ताव माँ का था, जिसे नेहा ने तुरंत स्वीकार कर लिया।

यह मंदिर बचपन से ही उसकी जानी-पहचानी देवस्थली था; सिर्फ परिचित ही नहीं, बेहद आत्मीय भी। चार बरस की नन्ही उम्र में जब वह दादी की उँगली पकड़कर वहाँ जाती थी तो देवी माँ के भव्य विग्रह को देर तक अपलक निहारती रहती थी। दादी के कई बार टोकने पर ही वहाँ से हटती थी। न जाने क्या दिखाई देता था उसे माँ की ममतालु आँखों में कि उस अबोध वय में ही उसका सारा शरीर थम-थम करने लगता था।

दादी माँ नहीं रहीं, पर अपनी हर छोटी-बड़ी उपलब्धि पर उसका मंदिर जाकर माथा टेकने का क्रम नहीं टूटा। हाँ, इंटरमीडिएट पास करते ही जब उसी साल मेडिकल की प्रवेश-परीक्षा में चयन हो गया तो उसे दिल्ली छोड़कर पुणे जाना पड़ा। वहाँ पढ़ाई का एक लंबा दौर चला। मात्र डॉक्टर बनकर वह संतुष्ट न थी, अत: सर्जरी में विशेषज्ञता हासिल करने के लिए कई छोटी-बड़ी डिग्री-डिप्लोमा बटोरती रही। उन्हीं उपाधियों के बल पर जब पिछले दिनों दिल्ली के एक बड़े अस्पताल में उसकी नियुक्ति हो गई तो वह खुशी से फूली न समाई। पुणे से अपना सारा ताम-झाम समेटकर दिल्ली लौटने में उसने जरा भी देर नहीं लगाई। आखिर यही शहर तो उसकी जन्मस्थली था। यहीं उसकी नार गड़ी थी। यहाँ से मोह कैसे छोड़ सकती थी!

कल शाम ही वह पुणे से लौटी और आज दिन में अस्पताल जाकर उसे कार्यभार ग्रहण करना था। सुबह उठते ही माँ ने देवी माँ का दर्शन कर आने को कहा तो वह फौरन मान गई; बल्कि उसे तो यही लगा कि माँ ने उसके मुँह की बात छीन ली है। फौरन नहा-धोकर वह माँ कात्यायनी के चरणों में अपना प्रणाम निवेदित करने के लिए निकल पड़ी। मंदिर तक पहुँचने के लिए उसने गाड़ी खुद ड्राइव की। कुछ सोचने का सवाल ही नहीं था। यहाँ का चप्पा-चप्पा उसका जाना-पहचाना था।

पर गाड़ी खड़ी करके मंदिर तक का रास्ता पैदल तय करते हुए उसे लगा कि सबकुछ पहले जैसा नहीं है। पिछले दस वर्षों में यहाँ बहुत कुछ बदल गया है। पिछली बार जब यहाँ आई थी, तब भीड़-भाड़ के बावजूद सुकून से दो घड़ी आँख मूँदकर देवी माँ से अपने मन की बात कह सकी थी। दादीवाला जमाना धीरे-धीरे गायब होते हुए उसने देखा जरूर था, पर चूँकि शैशव से किशोर वय तक लगातार मंदिर से जुड़ी रही थी, इसलिए इस अंतराल में होनेवाले बदलाव उसकी पकड़ में नहीं आए थे।

पर आज पूरे दस साल बाद···

एकबारगी उसे लगा कि वह देवी माँ के मंदिर नहीं, बल्कि किसी मेले-ठेले में पहुँच गई है। बाप रे! गली के दोनों ओर कतारबद्ध दुकानें-ही-दुकानें! हर दुकान पर छोटी उम्र के ऐसे तेज-तर्रार लड़के, जो राह चलते दर्शनार्थियों का ध्यान खींचने के लिए 'आइए बहनजी', 'आइए माताजी', 'आइए बाबूजी' की तेज आवाज से लोगों का रास्ता चलना दूभर किए हुए थे। लग रहा था कि मधुमक्खियों के इस झुंड से किसी तरह बाहर निकल सकें तो जान बचे! पेड़ा-बर्फी, फूल-मालाएँ, आरती का थाल और दीपक बेचने के लिए दुकानदारों में जिस तरह होड़ मची हुई थी, उस मारामारी ने भक्तों की आस्था पर आतंक की छाया सी डाल दी थी। इसे एक बार नजरअंदाज कर भी दिया जाए तो दूसरे आकर्षण मौजूद थे। देवी माँ की पोशाक, छत्र, सिंहासन, पूजा की घंटी, नाना आकारों की धातु मूर्तियाँ और ताँबे के जलपात्र से सजी दुकानें, भक्तजनों के पाँवों को आगे बढ़ने से बरबस रोक रही थीं। अगर यह सम्मोहन भी बरजोरी तोड़ दिया जाए तो सी.डी.-कैसेट बेचनेवाली दुकानों पर कानफोड़ू आवाज में बजता भक्ति-संगीत भक्तों को मोहने का एक और उपक्रम था। नेहा ने महसूस किया कि बाजार ने आज भगवान् को भी क्रय कर लिया है। लोगों की जेब खाली कराने के ये हथकंडे कितने चुपके से और कितनी चतुराई से हमारे सिद्धपीठों के आस-पास पसर गए हैं!

जैसे-तैसे भीड़ के धक्कों ने जब उसे मंदिर की सीढ़ियों के पास पहुँचा दिया तो वह एकाएक सिहर उठी, 'ऐं, यह भिखारी? यह अभी जीवित है? और इसकी टाँग का वह पुराना जख्म भी अब तक?'

लेकिन कुछ सोचने का वक्त न था। भीड़ के धक्कों के बीच सीढ़ियों पर पाँव रखती हुई अब वह मंदिर के सहन में पहुँच चुकी थी। कैसे भीतर जाकर उसने देवी माँ के दर्शन किए और कैसे वापस लौटी, उसे कुछ पता नहीं! भीड़ के अथाह समंदर में अपने आराध्य के साथ संवाद जोड़ने का तो सवाल ही नहीं था, सिर्फ हाथ जोड़कर वह उनके विग्रह की एक झलक भर पा सकी। फूलों का कोई दोना उसके हाथ में न था। दादी ने सच्ची आस्था के पुष्पों से देवी माँ के अर्चन की जो बात सिखाई थी, वह आज तक उसके मन पर पत्थर की लकीर की तरह

वरिष्ठ कथाकार। 'हीरे का मोल' तथा 'सोना की आँखें' बाल-उपन्यास बहुत चर्चित हुए। उन्होंने बच्चों के लिए नाटक और कथात्मक शैली में जीवनियाँ भी लिखी हैं। उ.प्र. हिंदी संस्थान के 'बाल साहित्य भारती' पुरस्कार से सम्मानित।

अंकित थी।

मंदिर से बाहर निकलते समय सीढ़ियों के नीचे बैठा वह भिखारी एक बार फिर नजर आया। इस वक्त उसके पास ठिठकने का कोई मतलब न था। नेहा ने सोचा कि जल्दी ही किसी दिन दोपहर के वक्त यहाँ आएगी। उस समय मंदिर के पट बंद रहते हैं, इसलिए भीड़ न रहने पर इससे बात करने में सुविधा रहेगी।

मन के इसी संकल्प ने तीसरे दिन ही डॉ. नेहा को मंदिर की सीढ़ियों के नीचे बैठे बूढ़े भिखारी के पास खड़ा कर दिया। आज एक बार फिर वह रोमांचित हो उठी। हाँ, यह वही भिखारी है। इसे वह अपने शैशव से ही पहचानती है। दादी की उँगली पकड़कर जब चार बरस की गुड़िया-सी यहाँ आती थी तो इस चोटिल भिखारी पर निगाह पड़ते ही बेतरह काँप उठती थी, ''दादी, इसे देखो!''

दादी उसे वहाँ से खींचकर ले जाना चाहतीं, पर वह अड़ जाती, ''एक रुपया दे दो न! मैं उस बेचारे को दे आऊँ?''

रुपया न सही, अठन्नी-चवन्नी, जो कुछ दादी के बटुए में होता, उसे लेकर भिखारी की मैली हथेली पर धरने के बाद ही वह वहाँ से हटती थी।

जब आठ-दस बरस की हुई तो एक दिन पता नहीं क्या सोचकर बहुत गंभीर हो उठी, ''दादी, यह भिखारी अपनी चोट का इलाज क्यों नहीं कराता है?''

''देखती तो हो तुम, बेचारा कितना गरीब है। देह पर चीथड़े हैं। अभागा अपने जख्म का इलाज क्या खाक कराएगा!'' दादी जैसे करुणा से विगलित होकर किसी दूसरे लोक में पहुँच गई थीं।

''आप देखना, एक दिन मैं इसका इलाज करूँगी बगैर एक पैसा लिये, बिल्कुल मुफ्त में। तब तो यह अभागा नहीं रहेगा न!'' कहते-कहते उसके चेहरे पर एक चमक तिर उठी थी।

दादी अपनी मुसकान नहीं छिपा सकीं, ''तू इलाज करेगी?...कैसे?''

''खूब बड़ी डॉक्टर बनकर।'' वह पूर्ववत् गंभीर बनी रही थी।

क्षणांश में दादी के चेहरे पर उसका मजाक उड़ानेवाली मुसकान की जगह एक अनूठी तृप्ति उतर आई, ''जुग-जुग जियो, बिटिया! गरीबों के लिए तुम्हारे मन में यही दया-करुणा बनी रही तो देखना एक दिन जरूर बड़ी डॉक्टर बनोगी। हो सकता है कि उस दिन तक मैं न रहूँ, यह चोट खाया भिखारी भी न रहे; पर ऐसे लाचार प्राणी तब भी धरती पर रहेंगे। तुम्हें उनका इलाज करते हुए आसमान से जरूर देखूँगी।''

'क्या आज भी दादी उसे इस भिखारी के पास चिकित्सक रूप में खड़ी हुई देख रही हैं?' डॉ. नेहा ने रोमांचित होते हुए सोचा। अगले ही पल उसने बूढ़े भिखारी को अपना यहाँ आने का मंतव्य जताया, ''बाबा, मैं तुम्हारी टाँग के इस जख्म का इलाज करना चाहती हूँ।''

''इलाज?'' बूढ़ा भिखारी एकदम भौचक्का हो उठा। उसे किसी दयावान से नया ऊनी कंबल पा जाने पर भी इतना ताज्जुब न होता, जितना इस बात से हुआ।

''मैं एक डॉक्टर हूँ, बाबा।...एक सर्जन। यकीन मानो, तुम्हारी टाँग का यह वर्षों पुराना जख्म एकदम ठीक कर दूँगी।''

''तुम्हें कैसे मालूम कि यह जख्म वर्षों पुराना है?'' भिखारी का अचरज बरकरार रहा।

''क्योंकि मैं अपनी चार वर्ष की उम्र से इसे देख रही हूँ और देखकर द्रवित होती रही हूँ। तब दादी माँ की उँगली पकड़कर यहाँ आती थी। तुम्हारी टाँग की इतनी बुरी हालत देखकर मैंने दादी से वायदा किया था कि एक दिन डॉक्टर बनकर तुम्हारा मुफ्त इलाज करूँगी। तुम न मिलते तो इसी हालत में कोई और गरीब-लाचार यहाँ मिल जाता। इसे ईश्वरीय कृपा ही समझूँगी कि अपने संकल्प को पूरा करने के लिए मुझे तुम दिखाई दे गए।''

''डॉक्टरनीजी, आपकी इस मेहरबानी का शुक्रिया। दस-पाँच रुपए दे दें, वही इस गरीब के लिए बहुत है। इलाज तो मुझे कराना ही नहीं है।''

''क्यों?''

''बस, मेरा मन। इस जख्म के साथ जीवन काटने का आदी हो चुका हूँ। पर आपकी रहमदिली देखकर पचास रुपए माँगने का साहस जुटा रहा हूँ। मैं भी आज हलवाई की दुकान पर जाकर भरपेट पूड़ी-सब्जी-हलवा खा सकूँगा।''

''बाबा, भरपेट आलू-पूड़ी तो मैं तुम्हें वैसे भी खिला दूँगी, पर तुम्हारे इलाज के बारे में एक नहीं सुनूँगी। मुझे तो वैसे भी विश्वास नहीं होता कि बिना दवा-इलाज के तुम्हारा इतना पुराना घाव जानलेवा क्यों नहीं साबित हुआ।''

''हम लोग जड़ी-बूटियों का देसी इलाज करते हैं न, इसी वजह से हमारे घाव जहरीले होने से बच जाते हैं। हम भी इनके साथ जिंदगी काटने के आदी हो जाते हैं।''

''तुम कुछ भी कहो, मैं तुम्हारा इलाज जरूर करूँगी। भले ही तुम्हारी जड़ी-बूटियों ने इस जख्म को जानलेवा न होने दिया हो, पर इसे और ज्यादा खींचने का तुक मेरी समझ में नहीं आता!'' डॉ. नेहा की भौंहों पर बल पड़ गए।

''आप तो चीरा लगाकर छुट्टी पाएँगी, पर उसके बाद मेरी देख-भाल कौन करेगा? मेरी दवा-दारू का खर्च कौन उठाएगा? दुनिया में एकदम अकेला हूँ मैं। अगर बदकिस्मती से ऑपरेशन सफल न हुआ, टाँग काटने की नौबत आ गई तो अपाहिज होकर चलने-फिरने से भी लाचार हो जाऊँगा।...न, डॉक्टरनीजी, मुझ पर रहम करने की जरूरत नहीं। मैं ऐसे ही ठीक हूँ।''

''बाबा, मैं तुम्हारी बेटी जैसी हूँ। मुझे सिर्फ 'डॉक्टरनीजी' मत समझो। यकीन मानो, तुम्हारे पूरी तरह स्वस्थ होने तक दवा का सारा खर्च मैं उठाऊँगी।''

''मुझे ऐसी बातों पर यकीन नहीं है।'' कहते हुए बूढ़े भिखारी ने दोनों हाथ जोड़ लिये।

यह बात खत्म करने का संकेत था।

डॉ. नेहा इसे समझ गई। पर दृढ़ कंठ से बोली, ''ठीक है बाबा,

अभी तो मैं जा रही हूँ, लेकिन दुबारा, तिबारा और चौबारा आऊँगी तथा तब तक आती रहूँगी, जब तक तुम्हारी टाँग का इलाज न हो जाए।''

किंतु अगली बार जाने की बात सुनकर माँ भड़क उठी, ''तुम अब कहीं नहीं जाओगी। वह बूढ़ा भिखारी भाड़ में जाए! उसके इलाज के लिए तेरा इस तरह पगलाना मैं बरदाश्त नहीं कर सकती।''

''तुम इस बात को नहीं समझोगी, माँ। बेहतर है, चुप रहो।'' नेहा शांत कंठ से बोली।

''क्यों चुप रहूँ?'' माँ और ज्यादा तैश में आ गईं, ''तेरे सिर पर समाजसेवा का भूत सवार है तो गरीबों की किसी बस्ती का एक चक्कर लगा आ। न जाने कितने हड्डीले बच्चे, जर्जर बूढ़े और अंदरूनी बीमारियों की शिकार जनानियाँ तुझे अपनी सनक पूरी करने के लिए मिल जाएँगी।''

''यह सनक नहीं है, माँ। दादी को दिया गया मेरा वचन है। उस वक्त तुमने यह वाकया देखा होता तो आज न रोकतीं। एक दस-ग्यारह साल की लड़की के मुँह से डॉक्टर बनकर भिखारी के घाव का इलाज करने की बात सुनकर उनके रोम-रोम से आशीष बरसा था। सच माँ, मेरे हाथों उसी भिखारी का इलाज होने पर दादी की आत्मा को बड़ी शांति मिलेगी।''

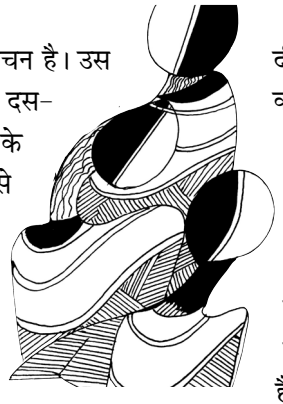

''तू जाने और तेरा काम जाने! लेकिन मैं साफ कहती हूँ कि मुझसे अब इस भिखारी प्रकरण पर चर्चा करने की जरूरत नहीं है।'' माँ रूखी आवाज में बोलीं।

वह हँस दी, ''ठीक है, तुमसे चर्चा नहीं करूँगी; लेकिन जिस दिन जीत जाऊँगी, बताऊँगी जरूर। इसकी अनुमति तो है न?''

माँ ने कोई जवाब न दिया।

संवेदनशील मन की डॉ. नेहा ने अपनी कोशिशों को विराम न दिया। जब-तब दोपहर में समय निकालकर, उस बूढ़े भिखारी के पास जाकर अपना मुफ्त इलाजवाला प्रस्ताव इतनी बार दोहराया कि वह इसे सुनते-सुनते थक गया। एक दिन ऊबकर बोला, ''आखिर चाहती क्या हो तुम?''

''कहा न, तुम्हारी टाँग का इलाज।''

''लेकिन इस बारे में मैं यहाँ कोई बात नहीं करूँगा। इसके लिए तुम्हें मेरे घर तक आना होगा। बोलो, क्या कहती हो?''

''मैं एक डॉक्टर हूँ। मरीज के इलाज के लिए उसके घर तक पहुँचना मेरा धर्म है।''

''तो ठीक है। कल सुबह आठ बजे इस पते पर हमारी बस्ती में पहुँचो।''

''पहुँच जाऊँगी।'' नेहा शांत कंठ से बोली।

''देखो, मैं पहले ही बता दूँ कि किसी बाहरी आदमी को हमारी बस्ती में प्रवेश की इजाजत नहीं है। चूँकि मैं वहाँ का पुराना बासिंदा हूँ, लोग मेरी इज्जत करते हैं, इसलिए मेरे कहने से किसी को तुम्हारे वहाँ आने से आपत्ति न होगी। पर तुम्हें कसम खानी होगी कि वहाँ का सच अपने तक सीमित रखोगी।'' भिखारी ने गहरी दृष्टि से देखते हुए कहा।

''मुझे क्या पड़ी है, जो इसे सब जगह उगलती फिरूँगी।'' नेहा तैश में आ गई।

''मीडिया हमेशा अपनी खोजी निगाहें लिये हर जगह रहस्य सूँघता घूमता है। उसके कैमरे को टेलीविजन के लिए सस्पेंस पैदा करनेवाली तसवीरें चाहिए। फिर चैनल भी कोई एक-दो नहीं हैं, पचासों हैं। उन शिकारी कुत्तों को हमारी बस्ती अपनी परछाईं तक से दूर रखना चाहती है। उधर अखबारों के संवाददाता भी चटपटी खबरें बटोरने के लिए उतावले रहते हैं। तुम्हारे मुँह से एक शब्द भी निकल गया। तो हमारी बस्ती संकट में घिर जाएगी; इसलिए यह कसम तो तुम्हें अभी, इसी वक्त खानी ही पड़ेगी।''

''शपथ लेने से क्या होगा? बाद में मैंने जुबान खोल दी तो तुम क्या कर लोगे?'' नेहा ने लापरवाही से अपने सिर को एक झटका दिया।

''जो इनसान अपने बचपन के संकल्प को डॉक्टर बन जाने के बाद भी याद रख सकता है, जो एक छोटे-से वाकया को मन में बसाकर अपना दो महीने का कीमती वक्त जाया कर सकता है और जो पैसे के पीछे भागती दुनिया में रहते हुए भी संस्कारों की पूँजी सँभालकर रखता है, वह अपनी शपथ का मान रखेगा, इसका मुझे पूरा यकीन है।''

''तो यह भी समझ लीजिए कि ऐसे इनसान के शब्द ही काफी होते हैं। उसे शपथ लेने की जरूरत नहीं है।'' नेहा दृढ़तापूर्वक बोली।

भिखारी ने इसके बाद बगैर कुछ कहे एक मैला-सा कागज उसकी ओर बढ़ा दिया, जिस पर घसीटामार लिखाई में एक पता लिखा हुआ था।

अगली सुबह डॉ. नेहा भिखारियों की बस्ती के लिए निकल पड़ी। काफी लंबा रास्ता तय करने के बाद, सड़क पर गाड़ी खड़ी करके उसे अनेक सँकरी गलियों से होते हुए पैदल चलना पड़ा। बदबू के भभके। कचरे के ढेर आदि, वहाँ तक पहुँचने का रास्ता ही इतना घिनौना था कि कई बार नेहा को सप्रयास उबकाई रोकनी पड़ी। सच, पुख्ता सूचना के अभाव में कोई संवाददाता यहाँ का रुख कर ही नहीं सकता था। इन गंदी-बदबूदार गलियों में नाली के कीड़ों की तरह जिंदा इनसान रहते थे। यहाँ पाँव रखने के लिए बड़े जीवट का कलेजा चाहिए था। फिर यह भिखारियों की बस्ती नहीं थी बल्कि वहाँ तक पहुँचने का रास्ता भर था।

भिखारियों की बस्ती के भयावह यथार्थ से रूबरू होने की कल्पना मात्र से डॉ. नेहा काँप उठी। पता नहीं क्या देखने को मिलेगा वहाँ— टूटी-फूटी, अँधेरी और सीलन भरी कोठरियाँ, प्रेतनी-सी कंकालप्राय बूढ़ियाँ, खौं-खौं खाँसते बूढ़े, नंग-धड़ंग बच्चे।

बस इससे ज्यादा नहीं सोच सकी वह। माथे पर चुहचुहा उठा पसीना पोंछते हुए एक ठंडी साँस भरी।

गनीमत थी कि अब इस आखिरी गली से बाहर निकलकर वह

भिखारियों की बस्ती में पहुँच गई थी।

''आ गईं तुम? मैं इंतजार ही कर रहा था।'' कानों में आवाज पड़ने के साथ ही नेहा का ध्यान टूटा। देखा तो मंदिर की सीढ़ियोंवाला भिखारी पास ही खड़ा था, उसी तरह दयनीयता की मूर्ति बना हुआ तथा टाँग के खून रिसते जख्म पर भिनभिनाती मक्खियाँ लिये हुए। एक गूढ़ हँसी होंठों पर लाकर बोला, ''अगर चाहता तो वहीं तुम्हें सारी बात बता सकता था; पर अपने कारोबार की जगह धंधे की चुगली करना ठीक नहीं लगा। वैसे भी दीवारों के कान होते हैं। कोई सुन लेता तो मेरे पेट पर लात पड़ते देर नहीं लगती। इसीलिए तुम्हें यहाँ आने की तकलीफ उठानी पड़ी।''

''कोई बात नहीं।'' नेहा ने शालीनता दिखाई।

''अमूमन हम आँखों देखे यथार्थ को ही सच समझते हैं, पर कभी-कभी सच उससे एकदम विपरीत होता है। अब मुझे ही लो, तुम मंदिर की सीढ़ियों के नीचे बैठकर भीख माँगनेवाले बूढ़े, लाचार और बीमार भिखारी के रूप में ही जानती हो न?''

नेहा ने स्वीकृति में सिर हिलाया।

''एक डॉक्टर, एक सर्जन होते हुए भी जब तुम मेरे घाव की हकीकत नहीं जान सकीं तो आम आदमी उसे भला कैसे पकड़ सकता था? सोचो जरा, जब जख्म ही असली नहीं है तो भिखारीपन का वह लबादा असली कैसे हो सकता है? मैं भी ईंट-गारे और सीमेंट के बने हुए पक्के मकान में रहनेवाला संपन्न आदमी हूँ। घर में टेलीविजन, फ्रिज, गैस का चूल्हा और मोबाइल जैसी सुविधाएँ हैं।''

''तुम झूठ बोल रहे हो।'' नेहा अविश्वास भरे कंठ से चीखी।

''झूठ बोलकर मुझे भला क्या मिलेगा?'' भिखारी ने कंधे उचकाए, ''तुम मेरी टाँग चीरने पर तुली हुई थी, इसीलिए अपनी इस निराली और अपने आप में संपूर्ण बस्ती का सच दिखाने के लिए तुम्हें यहाँ बुलाया।''

नेहा भौचक्की-सी देखती रही।

''मेरे साथ चलो।'' कहकर भिखारी जब आगे बढ़ा तो उसके पाँव खुद-ब-खुद साथ चल पड़े। कुछ ही क्षणों में वह जैसे खुले आकाश के नीचे बने मुक्त प्रेक्षागृह में पहुँच गई थी।

सारा तमाशा किसी तिलिस्मी दुनिया से कम रोमांचक न था।

अच्छा तो यह यहाँ का ट्रेनिंग स्कूल है? यहाँ भिखारी गढ़े जाते हैं। बाकायदा फीस भरकर नौसिखिए यहाँ प्रवेश लेते हैं और उस्ताद के चरणों में बैठकर भीख माँगने का हुनर सीखते हैं। कैसे गिड़गिड़ाकर राह चलते मुसाफिर की संवेदना जगाई जाए, किस सफाई से आँखों में बाम या ग्लिसरीन लगाकर धारोधार आँसू बहाए जाएँ, किस तरह आवाज में जमाने भर का दर्द भरकर अपने नकली जख्म या फ्रैक्चर के दर्द को असली बनाया जाए, यह सब सीखना किसी स्कूली शिक्षा से कम महत्त्वपूर्ण नहीं है। कंप्यूटर की पढ़ाई से कम कठिन नहीं है, इस विद्या में पारंगत होना। आखिर चाल-ढाल, चेहरे व आँखों के हाव-भाव से अपनी दीनता जताना कोई आसान काम है क्या? वह भी उस हालत में, जब आप अच्छी खाती-पीती हैसियत के इनसान हैं।

एक अन्य उस्ताद भिखारियों को अंग्रेजी सिखाने के लिए था। आखिर पाउंड और डॉलर की पहचान होनी भी जरूरी है। टूटी-फूटी अंग्रेजी जाने बिना विदेशी पर्यटकों को उलटे छुरे से मूँड़ना कैसे संभव है?

जैसे-जैसे नेहा के पाँव आगे बढ़ते गए, वह मन-ही-मन तमाशे की सारी कड़ियाँ जोड़ती रही; तो यह है यहाँ का मैकअप मैन? जीतू नाम है इसका। फिल्मों में नायक-नायिका को तरह-तरह का 'लुक' देनेवाले मैकअप मैन से इसका हुनर रत्ती भर भी कम नहीं है। मिनटों में एक अच्छे-खासे इनसान का रूप परिवर्तन करने की कला में माहिर है। इसका ऊँचा 'रेट' भी लोग खुशी-खुशी चुकाते हैं, क्योंकि काम में कोई नुक्स नहीं छोड़ता। फिर 'सौंदर्य-प्रसाधन' भी अपने आप जुटाता है—किस्म-किस्म के पाउडर, लिपस्टिक और फाउंडेशन। यह बात दीगर है कि गोरेपन की क्रीम की जगह कालिख, मिट्टी, कीचड़ और बूट पॉलिश का इस्तेमाल करता है। जले हुए हाथ-पाँव दिखाने के लिए इसे जली हुई रोटी और मास का कीमा चाहिए। शरीर पर घाव दिखाने के लिए मास की दुकान से कुछ छीछड़े लाकर किसी जले या मैले कपड़े पर चिपकाकर उस कपड़े को इतनी सफाई से हाथ-पाँव पर बाँधता है कि घाव एकदम असली नजर आए। रक्त-रंजित अवस्था दिखाने के लिए सस्ते टमाटर सॉस की पूरी बोतल उड़ेलने से इसका काम चल जाएगा। नकली फ्रैक्चर, नकली घाव और लँगड़े-लूले-अंधेपन की नकली अपंगता को भी मैकअप के बल पर असली जता देना इसके बाएँ हाथ का खेल है। इसीलिए तो भिखारियों की बस्ती में इसकी कला के कद्रदान भरे पड़े हैं।

उस्ताद जरूर मौजूद थे इस समय, पर चेले-चपाटे सिरे से ही नदारद थे। यह धंधे का वक्त था। तैयार होकर वे सब अपने ठिये पर निकल गए थे।

पूरी बस्ती का हवा-पानी लेने के बाद नेहा एक बार फिर बूढ़े भिखारी के साथ गली के उस मुहाने पर जा पहुँची, जो उसे भिखारियों की बस्ती से बाहर निकालती। बूढ़ा हँसकर मूल विषय पर आया, ''शायद अब यह कहने की जरूरत नहीं है कि मेरी टाँग के इलाज के लिए तुम्हारी सर्जरी की नहीं, सामनेवाले हैंडपंप के एक बालटी पानी की जरूरत है।''

नेहा चुप रही।

''मेरे कौशल की दाद देती हो न? तुम्हारी डॉक्टरी पर मेरा हुनर बाजी मार ले गया।'' बूढ़ा भिखारी विजय-गर्व से भरकर इतराया।

''इसे तुम हुनर कहते हो? मेरे मुँह से अपनी वाहवाही सुनना चाहते हो?'' नेहा बिफर उठी, ''तो कान खोलकर सुन लो, ऐसा कभी नहीं होगा। तुम्हारी बस्ती के इस सच से मैं कतई प्रभावित नहीं हूँ। हाँ, खौफजदा जरूर हूँ।''

''क्यों?'' भिखारी चौंका।

''क्योंकि जब दालों, मसालों और दवाइयों में मिलावट करके नकली माल की खेप बाजार में उतारी जाती है तो वह लोगों के दिल,

दिमाग, गुरदे और आँतों को नुकसान पहुँचाती है। हृदय रोग, लकवा और कैंसर जैसी बीमारियाँ उपजाती हैं। पर तुम लोग तो असली के नाम पर नकली जख्म, नकली फ्रैक्चर और नकली अपंगता को धड़ल्ले से बाजार में कागज के कुछ टुकड़ों की खातिर बेचकर लोगों की भावनाओं से खेलते हो। यदि वे मिलावटखोर इनसान की सेहत से खिलवाड़ करते हैं तो तुम लोग मनुष्य की संवेदनाओं का मखौल उड़ाते हो।'' कहते हुए नेहा हाँफ उठी।

भिखारी के पास इन बातों का कोई जवाब न था। उसका सिर झुक गया।

नेहा का कंठ विषाद से भर गया, ''जब बाजार में देसी घी के नाम पर पशुओं की चरबी से तैयार किया गया नकली घी बिकने लगा तो कितने ही लोगों ने घी खाना छोड़ दिया। इसी तरह नकली दर्द बिकता देखकर लोग पसीजना छोड़ देंगे। घाटा कौन उठाएगा? इनसानियत ही न! सचमुच यह कल्पना ही रोंगटे खड़े कर देनेवाली है। मैं भयभीत हूँ, क्योंकि करुणा के साम्राज्य में पीड़ा के मिलावटखोरों का प्रवेश गलत ही नहीं, अमानवीयता की दस्तक भी है। इसी वजह से किसी सीधे-सच्चे जरूरतमंद इनसान को भी हाथ फैलाते देख बहुरूपिया मानते हुए प्रताड़ित किए जाने की क्रूरता दिखाई जा सकती है और यदि ऐसा हुआ तो वह मानवता को शर्मसार करनेवाली घटना होगी।''

भिखारी के चेहरे पर विजय-गर्व की जगह हार की शर्म छा गई थी। नेहा मुड़ी और उसे एक अवहेलना भरी दृष्टि से देखती हुई वापस लौट गई। गंदी गलियों से एक बार फिर गुजरना पड़ा, पर इस बार दिमागी तनाव की वजह से उसने उधर ध्यान नहीं दिया। अंततः वह मुख्य सड़क पर पहुँची और जैसे ही अपनी कार के पास जाकर दरवाजा खोलने लगी, एक युवा भिखारिन पता नहीं पास की किस गली से निकलकर उसके पास दौड़ी चली आई। अपनी गोद के एक मरियल बच्चे को दिखाते हुए, जिसके माथे पर खून से सनी मैले-कुचैले कपड़े की पट्टी बँधी हुई थी, कातर कंठ से बोली, ''मैडमजी, एक स्कूटरवाला इसे टक्कर मारते हुए निकल गया। तीन बच्चे खत्म हो जाने के बाद यही अकेला अब मेरे पास बचा है। इसकी दवा-दारू के लिए...''

बच्चे के माथे की खून से रँगी पट्टी, माँ की आँसुओं से रुँधी आवाज। पर उसकी अधूरी बात को बीच में ही काटकर नेहा के कंठ से एकाएक एक विद्रूप भरा स्वर निकला, ''टमाटर सॉस की पूरी बोतल उड़ेलकर इसे लाई है क्या?''

अगले ही पल उसकी गाड़ी स्टार्ट हो चुकी थी और भिखारिन के मुँह से निकलनेवाली धारा-प्रवाह गालियों का थोड़ा-बहुत अंश भी उसके कानों में पड़ चुका था। ये गालियाँ एक दुःखी माँ के हृदय से निकली हैं या अपनी चोरी पकड़े जाने पर उपजी सीनाजोरी से प्रसूत हैं, कौन जानता था? हाँ, वह अवश्य विचलित हो उठी थी। शायद उसने कुछ देर पहले इसी खतरे का अंदेशा जताया था। मनुष्यता से रोशन धरती पर इसी घिरती हुई साँझ के उतरने का अंदेशा।

७३ नॉर्थ ईदगाह कॉलोनी,
आगरा-२८२०१०
दूरभाष : ९०१२८१८०२५

लेखकों से अनुरोध

- मौलिक तथा अप्रकाशित-अप्रसारित रचनाएँ ही भेजें।
- रचना फुलस्केप कागज पर साफ लिखी हुई अथवा शुद्ध टंकित की हुई मूल प्रति भेजें।
- पूर्व स्वीकृति बिना लंबी रचना न भेजें।
- केवल साहित्यिक रचनाएँ ही भेजें।
- प्रत्येक रचना पर शीर्षक, लेखक का नाम, पता एवं दूरभाष संख्या अवश्य लिखें; साथ ही लेखक परिचय एवं फोटो भी भेजें।
- डाक टिकट लगा लिफाफा साथ होने पर ही अस्वीकृत रचनाएँ वापस भेजी जा सकती हैं। अतः रचना की एक प्रति अपने पास अवश्य रखें।
- किसी अवसर विशेष पर आधारित आलेख को कृपया उस अवसर से कम-से-कम तीन माह पूर्व भेजें, ताकि समय रहते उसे प्रकाशन-योजना में शामिल किया जा सके।
- रचना भेजने के बाद कृपया दूरभाष द्वारा जानकारी न लें। रचनाओं का प्रकाशन योजना एवं व्यवस्था के अनुसार यथा समय होगा।

अंतर्बाह्य जगत् के कथाकार : हिमांशु जोशी

● राहुल

कथाकार के रूप में हिमांशु जोशी का सृजन अपनी राष्ट्रीय ही नहीं, अंतरराष्ट्रीय पहचान रखता है। उनकी भाषाशैली में कुछ ऐसा आकर्षण है, जिसे अनदेखा नहीं किया जा सकता। जीवंतता उनके शब्द-शब्द से बरसती है। कथा-प्रवाह कहीं अवरुद्ध नहीं होता और वे जो शब्दों में दर्ज करते हैं, वह जीवन और समाज के दायित्व का एहसास कराता है।

स्व. हिमांशु जोशी

हिमांशु जोशी का जन्म गाँव—ज्योस्यूडा, खेतीखान चंपावत (उत्तराखंड) में ४ मई, १९३५ में हुआ था। इनके पिता का नाम श्री पूर्णानंद जोशी एवं माता का नाम श्रीमती तुलसी देवी था। खेतीखान और अल्मोड़ा से पढ़ाई पूरी करने के पश्चात् १९५६ में वे दिल्ली आ गए और पत्रकारिता की शुरुआत साप्ताहिक हिंदुस्तान (पत्रिका) से की। यहीं पर उनकी मुलाकारत ख्यातिप्राप्त साहित्यकार मनोहर श्याम जोशी से हुई और वर्षों तक हिमांशुजी साप्ताहिक हिंदुस्तान पत्रिका में सहायक संपादक के रूप में सक्रिय भूमिका निभाते रहे। इसके बाद दूरदर्शन व आकाशवाणी में कार्यरत रहे और फिल्म के लिए अपनी रचनाएँ लिखते रहे। इनकी रचनाओं में अंतत: मनुष्य-चिह्न, जलते हुए डैने, हिमांशु जोशी की इकसठ कहानियाँ, इस बार फिर बर्फ गिरी तो, नंगे पाँवों के निशान आदि कहानी-संग्रह के अतिरिक्त, अरण्य, महासागर, कगार की आग, तुम्हारे लिए, समय साक्षी है, छाया मत छूना मन, सु-राज (उपन्यास), अग्नि संभव, नील नदी का वृक्ष, एक आँख की कविता (कविता-संग्रह) तथा यात्राएँ, नॉर्वे : सूरज चमके आधी रात (यात्रा-वृत्तांत), कालापानी की अनकही कहानी पर आधारित संस्मरणात्मक कृति (यातना शिविर) भी विशेष चर्चा का विषय रहीं। अथचक्र और तपस्या इनकी आंचलिक कहानियाँ हैं।

हिमांशुजी की कहानियों में जहाँ एक ओर पर्वतीय जन-जीवन का जीवंत चित्रण है, वहीं उपन्यासों में क्षेत्रीय संस्पर्श के साथ आम आदमी की पीड़ा, दु:ख-दर्द, आर्थिक अभाव और शोषण की प्रवृत्ति का बड़ा ही यथार्थपरक अंकन हुआ है। उन्होंने पहाड़ की अभिशप्त जिंदगी के तमाम पहलुओं को बड़े नजदीक से देखा, जाँचा और परखा ही नहीं, बल्कि जिया और भोगा भी। पहाड़ के संपन्न-समृद्ध लोगों के अमानवीय व्यवहार को उन्होंने अपनी कहानियों में बड़ी बेबाकी से चित्रित किया। कहें कि जितना यथार्थपरक चित्रण उन्होंने पर्वतीय जन-जीवन-जगत् का किया है, वैसा अन्यत्र नहीं मिलता। इनकी कहानियों में नारी नियति, उनके शारीरिक, मानसिक शोषण और संवेदना की जीवंत तसवीर देखने को मिलती है।

इनके उपन्यास 'कगार की आग' में भी पर्वतीय जीवन के साथ नारी-नियति का जो चित्रण किया गया है, वह सांस्कृतिक परिवेश में एक नई अभिव्यक्ति कही जा सकती है। 'सागर तट का शहर' में कुछ ऐसा सम्मोहन है कि पाठक उसे अनदेखा नहीं कर सकता। वास्तव में यह कृति जोशीजी के सृजनस्वरूप को प्रस्थापित करने में अपनी अग्रणी पहचान बनाए रहेगी। इनके कथा-पात्र (चरित्र) अपनी आस-पास की जिंदगी जीते हुए जीवंत हैं। ये पात्र अपनी पहचान को इसी रूप में उभारते हैं, जैसे सहज रूप में वे समाज में अपनी भूमिका अदा कर रहे हैं। इनमें कहीं किसी तरह की कोई बनावट-बुनावट नहीं है। हिमांशु जोशी का रचना-संसार इस दृष्टि से अपने आस-पास की जिंदगी का रचना-संसार है, जो पाठक-मन में भीतर तक पैठकर यथार्थ से रू-ब-रू कराता है और गहरी संवेदना उभारता है। इनकी रचनाओं को पढ़कर कोई भी पाठक कह सकता है कि जोशीजी का लेखन सार्थक जीवन की गहरी अभिव्यक्ति देने में पूर्णत: सक्षम है। इनकी कहानियों की सबसे बड़ी विशेषता है कि ये जिंदगी के सामानांतर चलती हुई परंपराओं से जुड़कर भी नई परंपरा को जन्म देती हैं।

'कगार की आग' पर तेरह कड़ियों का रेडियों धारावाहिक बना। उसी तरह 'हरा सूरज' धारावाहिक के अलावा सु-राज, कांछा, तपस्या, अगला यथार्थ, इस बार, स्वभाव आदि अनेक कथा-कृतियों पर भी रेडियो नाटक प्रसारित हुए। 'तुम्हारे लिए' पर दूरदर्शन धारावाहिक बना। सु-राज पर फिल्म बनी, जो अंतरराष्ट्रीय समारोहों में भारत की ओर से भेजी गई।

इनकी कुछ रचनाएँ समस्त भारतीय भाषाओं के अतिरिक्त अंग्रेजी, नार्वेजियन, स्लाव, चेक, बल्गारियन, चीनी, जापानी, बर्मी, कोरियाई, नेपाली आदि में भी अनूदित हो चुकी हैं।

हिमांशुजी अपनी रचना और बाहरी जीवन में एक पारदर्शी

व्यक्तित्व लिये अपनी पुख्ता पहचान बनाने में सफल रहे। इनके विधायक व्यक्तित्व का विरल रूप आज भी मेरी आँखों में है। वर्षों तक इनका सान्निध्य मुझे मिला। इनकी मीठी वाणी की सहजता अनायास ही व्यक्ति को अपनी ओर आकर्षित कर लेने की अद्‌भुत क्षमता रखती थी। आकाशवाणी दिल्ली के किसी कार्यक्रम में जब इनकी प्रस्तुति हो रही थी, मुझे प्रत्यक्ष सुनने का सुअवसर मिला और नॉर्वे से प्रकाशित पत्रिका के वार्षिक अंक को तत्कालीन महामहित उपराष्ट्रपति श्रीकृष्णकांतजी को भेंट करने के लिए इनके साथ उपराष्ट्रपति भवन में साहित्यकारों के साथ इन पंक्तियों का लेखक भी था। प्रसिद्ध साहित्यकार कमलेश्वर के साथ पत्रिका का वार्षिक अंक भेंट कर सभी को एक असीम आनंद की अनुभूति हुई। ऐसे जनधर्मी, संवेदनशील सर्जक का निधन २३ नवंबर, २०१८ हो गया।

साहित्य और पत्रकारिता के क्षेत्र में महत्त्वपूर्ण योगदान के लिए उन्हें अनेक पुरस्कारों से सम्मानित किया गया। छाया मत छूना मन, मनुष्य चिह्न, श्रेष्ठ आंचलिक कहानियाँ तथा गंधर्व-गाथा के लिए उन्हें उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान द्वारा पुरस्कृत किया गया। कहानियाँ तथा

जाने-माने आलोचक-कवि। 'प्रजातंत्र, कहीं अंत नहीं', 'जंगल होता शहर', 'महानायक सुभाष', (कविता-संग्रह), 'युगांत' (प्रबंध काव्य) चर्चित; संपादित कृतियों के साथ-साथ दर्जन भर बाल-साहित्य और राजभाषा हिंदी से संबंधित पुस्तकें भी। हिंदी अकादेमी एवं अन्य साहित्यिक-सांस्कृतिक संस्थाओं से कई सम्मान प्राप्त।

भारत रत्न पं. गोविंद वल्लभ पंत के लिए हिंदी अकादमी, दिल्ली द्वारा उन्हें सम्मानित किया गया। 'तीन तारे' को राजभाषा विभाग, बिहार ने पुरस्कृत किया। इनके अलावा पत्रकारिता के क्षेत्र में दिया जानेवाला 'स्व. गणेश शंकर विद्यार्थी पुरस्कार' से भी उन्हें अभिनंदित किया गया। ऐसी साहित्य-विभूति को बारंबार नमन।

साइट-२/४४, विकासपुरी
नई दिल्ली-११००१८
दूरभाष : ९२८९४४०६४२

कविता

आया नया साल

● अर्पणा शर्मा

हर दिन-पलछिन, साल सुनो
जाते-जाते कुछ कहता है,
रेत के मानिंद मुट्ठी से
ये हरदम रिसता रहता है,
जी लो जी भरकर इसको
फिर ना कोई मलाल हो,
शुभ-मंगल ये नया साल हो!

लंबे-लंबे हैं रास्ते
पुकारें हमें उल्लासते,
जीवन पतंग चले उड़ती
बाँधे डोरी उमंगों की,
कँटीली राहों पर चलते
थक ना जाना निढ़ाल हो,
शुभ-मंगल ये नया साल हो!

सीमाओं पर पहरे हैं
दुश्मन हमको घेरे हैं,
वीरों के बलिदानों से ही
सजते ये जीवन-मेले हैं,
रहे सदैव उन्नत-गर्वीला
भारत माँ का भाल हो,
शुभ-मंगल ये नया साल हो!

शौर्य-एकता शक्ति से
अतुलित देशभक्ति से,
कर जाएँ विफल सभी
साजिशें गद्‌दारों की,

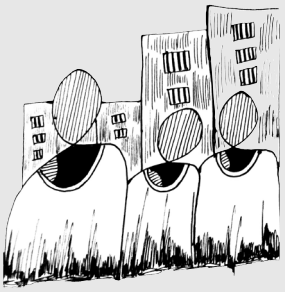

और शत्रु की हर चाल हो
शुभ-मंगल ये नया साल हो!

ज्ञान प्रकाश फैले चहुँ ओर
खुशहाली बनी रहे सब ठौर,
तोड़ कुप्रथा लिंग-भेद की
नारी-मान रखें सब लोग,
धर्म-समाज ना हो संकुचित
दृष्टिकोण सबका विशाल हो,
शुभ-मंगल ये नया साल हो!

सुपरिचित लेखिका एवं बैंक अधिकारी। 'भाव्या' एवं 'भाविनी' (कविता-संग्रह), 'व्यंग्य के विविध रंग' (व्यंग्य-संग्रह) एवं विभिन्न इ-पत्रिकाओं, समाचार-पत्र-पत्रिकाओं में रचनाओं का निरंतर प्रकाशन। 'नवोदित लेखा सम्मान', 'शब्द शक्ति सम्मान' तथा 'साहित्यश्री' सम्मान से सम्मानित।

नव पीढ़ी के विहानों पर
पाश्चात्य संस्कृति करे असर,
धर्म-संस्कृति मर्यादा से
ना हो विमुख इनकी डगर,
इनके जीवन सोपानों पर
शुभाशीषों की छाँह रहे,
अनुशासन की ढाल हो
शुभ-मंगल ये नया साल हो!

अधिकारी सूचना प्रौद्योगिकी
देना बैंक, भोपाल (म.प्र.)

नए साल के इंतजार में

• गोपाल चतुर्वेदी

जाने इस देश में कैसे लोग बसते हैं कि उन्हें नए साल की प्रतीक्षा रहती है? उन्हें आज तक यह समझ नहीं आया है कि इस जनवरी से उस जनवरी तक कलेंडर के सिवाय क्या बदलता है? कभी चुनाव का वर्ष हो तो जरूर नए नारे, वादे, आश्वासन सुनने को मिल जाते हैं। जनता जानती है कि जो जितना बड़ा नेता है, वे उतना ही बड़ा झूठा है। इस मामले में वह कतई अविश्वसनीय है। फिर भी वे उसके झूठ को माफ करते हैं। ''उसने गरीबी हटाने या काला धन मिटाने के लिए कहा तो कम-से-कम। जरूर उसकी मजबूरियाँ रही होंगी। ऐसा नहीं है कि उसने कोशिश नहीं की हो।'' इस तर्क पर हर बड़े नेता को क्षमा मिल जाती है अगले चुनाव में फिर नया आकर्षक झूठ दोहराने को।

यों तो लोगों को कुछ बड़े परिवर्तन का इंतजार भी नहीं होता है। बस कुछ छोटी बातें हैं, जैसे भोला ने पूरा इंतजाम कर लिया नकल से हाई स्कूल करने का। अंतिम वक्त बेचारे का परीक्षा-केंद्र बदल दिया गया। उसे विश्वास है कि इस बार वह हर संभावना का ताल-मेल बिठाकर ऐसा प्रबंध करेगा कि कोई धोखा न हो। वहीं रामजी एम.कॉम. करके नियमित नौकरी के इंतजार में है। पिछली बार सब पक्का हो गया था, पर इंटरव्यू के समय रेट ही बढ़ गया। बस पचास हजार की वृद्धि से अफसरी धरी रह गई। सेल्स टैक्स अफसर बनने में कोई कसर न थी। ऐसी अनपेक्षित दुर्घटनाएँ अकसर हो जाती हैं। इस बार उसने पूरा इंतजाम कर लिया है। रेट बढ़े तो बढ़े, वह पूरी राशि चुकाने में सफल होगा। उसकी यही आशा है कि पोस्ट का विज्ञापन फिर निकलेगा और इस बार उसके साथ छल-कपट का कोई चांस न रहेगा। उसे भरोसा है कि पिछली बार के समान 'ठेका' लिखित और इंटरव्यू दोनों का होगा। एकमुश्त राशि चुकाने से दोनों से पार पाना संभव होगा। वह और उसके घरवाले सबको प्रतीक्षा है कि नया वर्ष उनकी कामना को पूरा करे।

वर्ष का अंत संभव है, उम्मीदों का नहीं। तभी तो चंटू और उसकी गैंग ने बैंक लूटने के निश्चय पर इस साल अमल करने का फैसला किया है। पिछले वर्ष दुर्भाग्य से उन्होंने जिस बैंक मैनेजर को पटाया था, उसका तबादला हो जाने से सब मेहनत निरर्थक हो गई। अब उन्होंने नए मैनेजर पर डोरे डाले हैं। इतनी जल्दी उसके स्थानांतरण का तो प्रश्न ही नहीं उठता है। यह निश्चित हुआ है कि लूट के धन में उसका भी हिस्सा होगा। पिछले वर्ष भी तोड़ इसी बात पर हुई थी। लोगों को ताज्जुब होता है कि मैनेजर जैसी शख्सियत कैसे इस जाल-बट्टे में फँस जाती है? उन्हें कौन बताए कि हर विभाग या संस्था में निष्ठा अब लुप्त हो चुकी है। सबको अपनी जेब भरने की प्राथमिकता है, नहीं तो भ्रष्टाचार कैसे फलता-फूलता? छोटा तो छोटा, बड़े-से-बड़ा अफसर भी इसी चक्कर में है। सामाजिक श्रेष्ठता का आज एक ही मापदंड है कि किसने कितनी कमाई की है? ईमानदार और मूर्ख में आज कोई खास अंतर नहीं है। उसमें पैसे कमाने की जुगत होती तो क्यों ईमानदार रहता? या तो कायर था या बिना सूझ-बूझ का, वरना सी.बी.आई. भी भ्रष्ट की जेब में रहती है। भ्रष्ट जानता है कि कमाने का अर्थ मिल-बाँट के खाना है। इसमें सी.बी.आई. को भी शामिल करना समझदारी की निशानी है, नहीं तो पुलिस या किसी भी भ्रष्ट-तंत्र को रोकनेवाले की सिफत है कि वह बड़े-से-बड़े सदाचारी को करप्शन का कुंभकर्ण बना सकता है, वह भी इस अंदाज से कि किसी को शक तक न हो।

दरअसल सबका अपना प्रचार-तंत्र है। उसकी योग्यता का यही मानक है कि वह किसी भी सफेद झूठ को कैसे सच साबित कर सकता है। यदि नेता का प्रचार-तंत्र अकुशल है तो पोंगा पोंगा ही रहेगा, उसका पंडित बनना कठिन है। भारतीय जनता का विश्वास है कि उसका नेता सर्व शक्तिमान है। वह एक ओर सुमेरु ला सकता है तो दूसरी ओर सोने की लंका को फूँकने में भी समर्थ है। किसी इनसान के लिए हनुमान होना शायद संभव न हो तो फिर प्रचार-तंत्र का उपयोग ही क्या है? यह उसी का कमाल है कि वह एक साधारण इनसान को सिर्फ अपने प्रयास व प्रचार से हनुमान बनाने में कारगर है। तभी एक सामान्य आदमी महामानव का अवतार धरता है। ज्ञान के सागर में से एक बूँद भी ग्रहण करना आसान नहीं है, पर प्रचार-तंत्र उसे हर विषय का ज्ञानी सिद्ध करने में सफल है। यही उसकी उपयोगिता है, वरना उसका होना, न होना अर्थहीन है। भारत का नेता विकास से लेकर बड़े-से-बड़े अर्थशास्त्री को टक्कर देने में इसलिए कामयाब है, क्योंकि उसे प्रचार-तंत्र ने ऐसी छवि प्रदान की है। भले ही गरीबी से उसका दूर-दूर का रिश्ता न हो, पर वह उन सबका सगा है, क्योंकि उसने गाँव की झोंपड़ी में रात बिताई है। उनका दर्द समझा हो, न समझा हो, पर वह उनसे अपने को जुड़ा महसूस करता है। यह जुड़ाव वास्तव में हो, न हो, पर प्रचार-तंत्र का जादू है कि

वह इसे साकार करता है। उसे गंदे बच्चों से चिढ़ है, पर प्रचार-तंत्र उन्हीं के साथ उनकी गोद लिये तसवीर ऐसे प्रचारित करता है कि लोग उनके साथ उसके लगाव को सच मानते हैं।

हर वर्ष के साथ इंतजार का सिलसिला खत्म नहीं होता है। बस लोगों के मन में एक उम्मीद रहती है कि इस साल लटका रहा, क्या पता, अगले साल निपटारा हो ही जाए? हमें याद है कि हमारे संयुक्त परिवार में एक गूँगे-बहरे सज्जन भी थे। सबसे बुजुर्ग होने के कारण घर में उनका सम्मान था। कभी-कभी हमें उम्र में उनसे छोटे होने के कारण आश्चर्य भी होता कि कोई बरात गुजरती तो सबसे अधिक उत्कंठा और उमंग से वे उसे ताकते रहते। वे तो उसमें शरीक भी हो जाते, पर लोकाचार के कारण शायद यह संभव नहीं था। वह तो उनके हमउम्र ने एक दिन राज खोला कि वे जीवन भर विवाह की आकांक्षा पाले रहे, पर हो नहीं पाया। अब बेचारे बरात और बैंड देखकर ही संतोष कर लेते हैं।

जीवन का ध्रुव सत्य है कि जो जिसके पास नहीं है, वह उसी की इच्छा करता है। कुछ साँवले लोगों द्वारा क्रीम-पाउडर का प्रयोग इसका छोटा सा उदारहण है। कालों का गोरी चमड़ी के प्रति आकर्षण भी इसी श्रेणी में आएगा। भारत प्रारंभ से रंग-भेद के विरुद्ध रहा है। जाने कोई यह क्यों नहीं सोचता कि अपने ही देश में इसका चलन भले ही अपवादस्वरूप हो, पर उसका होना दुखद है। कुछ तो यहाँ तक कहते हैं कि दक्षिण में जयललिता से लेकर नेहरू-गांधी परिवार की लोकप्रियता का एक कारण चमड़ी का रंग भी है। हम मानते हैं कि यह तथ्य केवल हास्यास्पद से अधिक कुछ नहीं है। फिर भी वस्तुस्थिति चाहे कुछ भी हो, इस स्थिति पर विचार करना उचित है कि किसी भी सभ्य समाज में इस प्रकार की सोच क्या तर्कसंगत है? कोशिश यही होनी चाहिए कि इससे कैसे छुटकारा पाया जाए। सब विद्वान् इसी मत के हैं। भले समाज में उनके कहे पर अमल हो, न हो।

नए वर्ष के आगमन को ऐसे धूमधाम से मनाया जाता है कि जैसे सबकी मनोकामना पूर्ण होने का समय आ ही गया है। हमारे एक मित्र का निष्कर्ष है कि ऐसा नहीं है। संभव है कि सब इस खयाल से खुश होते हों कि पूरा वर्ष बीत गया और न वह किसी दुर्घटना के शिकार हुए न किसी सड़क के माफिया युद्ध के अथवा किसी डॉक्टर की पेशेवर चूक के। वे जानते हैं कि हिंदुस्तान में आलू-भंटे से भी सस्ती इनसान की जान है। एक का दाह-संस्कार हो या दस का, आबादी की ऐसी इफरात है कि फर्क क्या पड़ता है? फिर भी रास्ते वैसे ही भीड़-ग्रस्त बने रहते हैं, जैसे पहले थे और बेरोजगारों की तादाद भी। एक को रोजगार उपलब्ध हो तो सौ बेकारों की कतार लग जाती है अपना अधिकार जमाने के लिए। मूल समस्या आबादी का विस्फोट है। उससे सब आँखें मूँदे बैठे हैं। सब राजनीतिक दल इसका जिक्र करने तक से हिचकते हैं कि कहीं संजय गांधी के 'हम दो हमारे दो' जैसी दुर्दशा न हो चुनावी संग्राम में। सबके लिए सत्ता पर कब्जा देशहित से कहीं आगे है। यदि मतदाता को परिवार नियोजन से परहेज है तो उन्हें क्या पड़ी है 'आ बैल मुझे मार' का दृष्टिकोण अपनाने की। वोटर अपने अज्ञान में भुगतना चाहता है तो भुगते।

हमें ताज्जुब होता है कि नववर्ष के आगमन पर हर्ष और उल्लास के इस वातावरण पर यदि सामान्य हादसों से बच भी निकले तो अपने आराध्य को धन्यवाद दें, उत्सव-तमाशे की क्या जरूरत है? हिंदुस्तान में इनसान को भगवान् की इच्छा या संदेश सुनानेवालों की कमी नहीं है। ऐसे महापुरुष ज्योतिषी या भविष्यवक्ता कहलाते हैं। उनसे सलाह लें तो वे छूटते ही बता देंगे कि कुंडली में शुभ ग्रहों का प्रभाव अधिक था मारक ग्रहों की तुलना में। ''यदि आप सही-सलामत हैं तो इसी वजह से। आते रहा कीजिए, लाभ ही होगा।''

जाहिर है कि वे अपनी फीस का बंदोबस्त भी करते चलते हैं। उनसे मिलकर प्रभावित होना लाजमी है। उनके कमरे में देश के बड़े लोग, जैसे प्रधानमंत्री, मुख्यमंत्री आदि के साथ उनकी फोटो की भरमार है। वे उनकी ओर इंगित कर बताते भी हैं, ''इन सबके सत्ता पाने में हमारा योगदान है। यों तो हम बिना ऊपरवाले की कृपा के व्यर्थ हैं। उसने जो कहा, वह हमने इनको सूचित किया, इन्होंने माना भी, वरना क्यों यज्ञ और हवन करवाते? इन सबका प्रताप है कि आज देश के सर्वोच्च पद पर आसीन हैं।''

इनमें से कई उनके पिता की उम्र के हैं और उनका देहावसान इनके जन्म के समय ही हो चुका है, उन्हें भी सत्ता इन्होंने ही दिलाई है। आनेवाला इतना हड़कता है कि फीस देकर उन्हें साष्टांग दंडवत् करके चुपचाप लौट आता है। दीगर है कि ज्योतिषी महोदय की हर भविष्यवाणी को झुठलाते हुए उसे आज तक नौकरी नसीब नहीं हुई है। हर बार कोई-न-कोई दुष्टग्रह उससे भाग्योदय के अवसर को झटक लेता है। वह बार-बार उनका शिकार हो जाता है। इसमें न ज्योतिषी का दोष है, न सरकार का। लिखनेवाले ने उसकी कुंडली ही ऐसी रची है।

इक्कीसवीं सदी में, कौन कहे कि ऐसे अंधविश्वासी भी हैं? यदि भगवान् हैं भी तो क्या उन्हें इतनी फुरसत है कि हर इनसान के सुख-दुःख में हिस्सेदार बनें? जब पड़ोसी तक पासवाले के सुख-दुःख में रुचि नहीं लेते हैं तो ऊपर बैठे प्रभु क्यों ऐसा करेंगे? हमने तो अकसर देखा है कि यदि पड़ोस की लड़की बिना बताए किसी के साथ भाग जाए तो पड़ोसी मिठाई बाँटता है। पूरा प्रयास जाननेवाले के 'अहित-साधन' का है तो हम कैसे मान लें कि भगवान् किसी अनजान के भले-बुरे का इतना ध्यान रखेंगे? इसी कारण विद्वानों का निर्णय है कि ये सब दिल को दिलासा देने के साधन हैं। इनका कोई वैज्ञानिक आधार नहीं है। विवशता में हमें उनसे सहमत होना पड़ता है।

इसे देश का दुर्भाग्य ही कहेंगे कि हमने इंतजार को भी काम का दर्जा दे दिया है। मसलन, कोई जब तक एक नौकरी के नतीजे की प्रतीक्षा करता है तो ऐसा नहीं है कि वह हाथ-पर-हाथ धरकर बैठे। वह दूसरी-तीसरी और अन्य जगहों पर भी अर्जी भेजता है। इस प्रक्रिया में समय लगता है और वह सुबह से लेकर शाम तक इसी में व्यस्त है। जैसे घर के नौकरी पाए दूसरे सदस्य काम पर जाते हैं, वैसे ही वह भी नहा-धोकर 'काल्पनिक' दफ्तर की ओर सिधारकर अपने मन के इसी भ्रम

में जीवित है कि वह भी घर से बाहर पैसा कमाने की होड़ में जुटा है। उसकी जेब के पैसे, जूते-चप्पल के साथ घिसें तो घिसें। बस उसे एक ही चिंता है कि ऊपरवाले की अनुकंपा से कहीं कुछ जुगाड़ हो जाए।

नौकरी का भी अपना नियम है। देखने में आया है कि कुछ किस्मतवाले एक बारगी चार-पाँच हथियाते हैं और कुछ दुर्भाग्यशाली एक तक को तरसते हैं। यह नौकरी का 'एक से अनेक' का सिद्धांत है। जैसे पैसा पैसे की ओर आकृष्ट होता है, वैसे ही नौकरी नौकरी की ओर। देखने में आया है कि कई पेट काटकर लॉटरी का टिकट खरीदते हैं और उसमें भी ठगे जाते हैं। जो समृद्ध हैं, लॉटरी को भी उन्हीं की तिजोरी पसंद है। कभी-कभी संदेह होता है कि क्या समाज में कहीं भी न्याय है या नहीं?

जैसे नौकरी में एक से अनेक का सिद्धांत है, वैसे ही प्रतीक्षार्थियों का भी एक से सौ का उसूल है। जैसे-जैसे उनकी तादाद बढ़ती है, नया साल मनानेवालों की संस्था भी। जिनके पास कुछ करने को नहीं है, वे करें भी तो क्या? सब नए वर्ष का हल्ला मचा रहे हैं तो वे भी कुछ नहीं तो हल्ला ही मचा लें। हम तो सोच-सोचकर सिहर उठते हैं कि कहीं ऐसा तो नहीं है कि निर्धन की नियति निर्धन रहना है और प्रतीक्षार्थी की प्रतीक्षार्थी!

९/५, राणा प्रताप मार्ग
लखनऊ-२२६००१
दूरभाष : ९४१५३४८४३८

मरु-हृदय पर एक दिन

गजल

● चंद्रपाल मिश्र 'गगन'

चाहते वह मिल भी जाए क्या भला मिल जाएगा,
फिर सुहाना स्वप्न कोई आपको भरमाएगा।

दो पलों की जिंदगी में व्यर्थ के भटकाव हैं,
सोच लो बीता समय फिर लौटकर ना आएगा।

जो किया जैसा किया फल भी मिले उसका जनाब,
रोने-धोने से न कोई काम यूँ चल पाएगा।

सफलता मिलती नहीं यह प्यार में देखा गया,
जो मिलेगा बिछुड़ने के ही तराने गाएगा।

खिल उठोगे फूल-से अपने में डूबो तो सही,
दूसरों में डूबने से हर कोई पछताएगा।

सुन लीजिए चीखें-पुकारें दूसरों की मान्यवर,
क्या पता यह वक्त तुमको कब कहाँ तड़फाएगा।

कह रहा हर पल गुजरता रात है तो दिन भी है,
मरु हृदय पर एक दिन बरसाती बादल छाएगा।

कहकहे मत यूँ लगा अपनी घिनौनी जीत पर,
वक्त का दर्पण तुझे गुजरा समय दिखलाएगा।

पाँच मुक्तक

अब पछताने से क्या, हो गया सो हो गया,
मिल गया वह मिल गया, खो गया सो खो गया।
जिसने जो चाहा किया था अपनी-अपनी थी पसंद,
प्यार में विष-बीज कोई बो गया सो बो गया॥

जाने-माने रचनाकार। 'संकेत संभावनाओं के', 'हम ढलानों पर खड़े हैं' (काव्य-संग्रह) तथा पत्र-पत्रिकाओं में रचनाएँ प्रकाशित। देश के जाने-माने साहित्यकारों के साक्षात्कार लिये। संप्रति प्रधानाचार्य पद से सेवानिवृत्त होकर लेखन में रत।

सच में हम अब तक अकेले जिंदगी की राह में,
क्या बताएँ कितने भटके अपनेपन की चाह में।
घुटन सिसकन और तड़फन का न कोई है हिसाब,
भरम में उल्लास कुछ पल, डूबते फिर आह में॥

पता नहीं जीवनधारा किधर बहाकर ले जाए,
मिलकर कौन किसे हँस करके निष्ठुर धोखा दे जाए।
जीवन में क्या-क्या होना है नियति की मर्जी पर है,
कभी डूबती नैया को भी पवन तटों तक खे जाए॥

छाया से संग चिपके रहते हो जाते प्रतिकूल कभी,
मधुर बोल जो हृदय भिगोते बन जाते हैं शूल कभी।
वक्त-वक्त की बातें यह तो कहने से होता है क्या,
संगृहीत जीवन की मणियाँ लगने लगतीं धूल कभी॥

नहीं सुहाती भीड़ हृदय को एकाकीपन खलता है,
रास न आती दुनियादारी वक्त न काटे कटता है।
मन की गतियाँ ऐसी ही कुछ उसको पलभर चैन नहीं,
पास नहीं उसको पाने को मन का अश्व मचलता है।

२११/१ आवास विकास कॉलोनी
कासगंज (उ.प्र.)
दूरभाष : ७०१७७३०६१८

नदी बहती रही

• मालिनी गौतम

सुपरिचित रचनाकार। अब तक 'बूँद-बूँद एहसास' (कविता-संग्रह); 'दर्द का कारवाँ' (गजल-संग्रह); 'गीत अष्टक तृतीय' (साझा गीत-संकलन) एवं प्रतिष्ठित पत्रिकाओं में रचनाएँ प्रकाशित। संप्रति एसोसिएट प्रोफेसर (अंग्रेजी), कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, संतरामपुर (गुजरात)।

किनारे

जल राशि, नदी, स्त्री ठहरती, उफनती, इठलाती
अपने उद्‌गम स्थल से निकलती एकाकार होने के भाव को लिये
स्वयं में सबकुछ समाहित कर लेने के खयाल को लिये
जीवन, बच्चे, बालू, शंख, सीप, गोल-चिकने पत्थर, शैवाल
मछलियाँ और भी न जाने क्या-क्या?
इस बात से अनभिज्ञ कि निरंतर बहते इस समय-चक्र में
धीरे-धीरे बहुतों का साथ छूट जाएगा,
पट विस्तृत होंगे, होगा दो किनारों का निर्माण
जो हमेशा एक-दूसरे को ताकते रहेंगे आमने-सामने…
पर यों ही बहते-बहते पट हो चुके थे
इतने विस्तृत कि किनारे हाथ बढ़ाकर एक-दूजे को छू सकें
इसकी कोई गुंजाइश ही नहीं थी,
जब अहसास हुआ इस बात का
तो बहुत देर हो चुकी थी,
पर अंतहीन यात्रा तो शुरू ही थी
शायद फिर कभी मिलने की आस में…

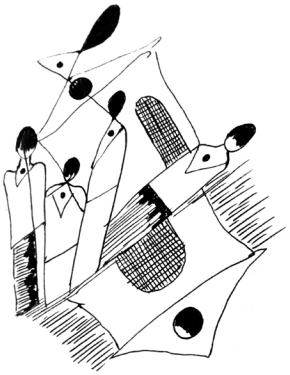

फिर अचानक धीरे-धीरे
नदी सूखने लगी पट संकीर्ण होने लगा
किनारे सिमटते गए, नजदीक आते गए
बस कुछ ही हाथों की दूरी थी उनके बीच
पर अब कुछ और प्रश्न सिर उठाए खड़े थे
अब प्रश्न था अस्तित्व का।
अगर किनारों के बीच की दूरी खत्म हो जाए तो
नदी का अस्तित्व ही खतरे में था
नदी का खत्म होना ही किनारों के मिलने की संभावना थी
पर इस मिलन में न जाने कितने ही जीव आहत होते
छोटी-छोटी सुनहरी मछलियाँ, एक पैर पर खड़े बगुले, कछुए
मछुआरे व उनके परिवार, किनारे पर उगे वृक्ष,
पानी की तलाश में आते पशु-पक्षी,
घड़ी भर को विश्राम करते राहगीर, मुसाफिर…
इन सबके अस्तित्व को खतरे में डालकर
क्या किनारों का मिलना संभव था?
इसलिए नदी बहती रही
चुपचाप अपने दर्द को सीने में छुपाए हुए
हर आने-जानेवाले को प्यार-दुलार और स्नेह बाँटते हुए
और किनारे चमकते रहे चाँदनी रातों में…।

बेशरम के पौधे

कभी-कभी मुझे लगता है कि मुझमें कहीं अंदर उगे हुए हैं
'बेशरम' के पौधे!
ये पौधे बार-बार सिर उठाकर पूछते हैं कुछ विचित्र से प्रश्न…
वे प्रश्न जो पूछना मना है एक स्त्री के लिए
वह स्त्री जिसकी जुबान पर लगा है ताला सदियों से…
क्योंकि देवियाँ भी क्या कभी बोलती हैं?
वे तो त्याग, समर्पण, प्रेम और सहनशीलता की मूर्ति होती हैं!

मैं भी बड़ी कोशिश करती हूँ इस देवीस्वरूप को अपनाने की,
बार-बार कुचल देती हूँ 'बेशरम' के पौधे की फुनगियों को!
कानों में डाल देती हूँ उँगलियाँ ताकि सुन न सकूँ वे प्रश्न,
जो मुझे मजबूर करते हैं मेरे अस्तित्व को तलाशने पर
मजबूर करते हैं मुझे देवियों की परछाइयों से दूर
सिर्फ एक स्त्री बनकर जीने के लिए!
प्रश्नों के इस कोलाहल को बमुश्किल रोक पाती हूँ
एक-दो या चार दिन!
और फिर से फुनगियों में सुगबुगाहट शुरू हो जाती है,
नई कोपलें फूटने लगती हैं, कोलाहल उठने लगता है
हर बार पहले की अपेक्षा अधिक तेज!

५७४, मंगल ज्योत सोसाइटी
संतरामपुर-३८९२६०
जिला-महीसागर (गुजरात)
दूरभाष : ९४२७०७८७११

अनोखे देशभक्त-पितृभक्त नेताजी

● बद्रीनारायण तिवारी

सन् १९४७ के पूर्व भारत दासता की जंजीरों में जकड़ा हुआ था। इसे आजाद कराने में देशवासियों को न केवल भीषण कठिनाइयों का सामना करना पड़ा, बल्कि बेशुमार कुरबानियाँ भी देनी पड़ीं। स्वतंत्रता संघर्ष के दरम्यान जिन योद्धाओं ने अपना सर्वस्व न्योछावर कर उसे सफल बनाने में समर्पित मानव का परिचय दिया, उनमें मुख्य रूप से भगतसिंह, चंद्रशेखर आजाद, महात्मा गांधी, लोकमान्य तिलक, तात्या टोपे, जवाहरलाल नेहरू, राजेंद्र प्रसाद आदि के नाम उल्लेखनीय हैं।

उन्हीं सेनानियों के बीच जवानी, उत्साह, उमंग एवं स्वाभिमान की प्रतिमूर्ति महान् देशभक्त, 'तुम मुझे खून दो मैं तुम्हें आजादी दूँगा' के क्रांतिकारी उद्घोषक और 'आजाद हिंद फौज' के कमांडर सुभाष चंद्र बोस' का नाम कौन नहीं जानता, जिन्होंने देश आजाद कराने के लिए अपने प्राण तक न्योछावर कर दिए।

सुभाष चंद्र बोस का जन्म उड़ीसा के कटक में २३ जनवरी, १८९७ ई. को हुआ था। उनके पिता जानकीनाथ बोस ने उड़ीसा की राजधानी कटक के मिशनरी स्कूल से मैट्रिक की परीक्षा उत्तीर्ण करने के बाद कलकत्ता के प्रेसीडेंसी कॉलेज से एफ.ए. की परीक्षा पास की। सुभाष चंद्र बोस १९१९ में स्कॉटिश चर्च कॉलेज से बी.ए. की परीक्षा में दर्शनशास्त्र में विश्वविद्यालय में सर्वप्रथम रहे। इंग्लैंड में आई.सी.एस. परीक्षा में चतुर्थ स्थान प्राप्त किया। कैंब्रिज विश्वविद्यालय से मनोविज्ञान और नीति-शास्त्र का ट्राइपास कोर्स लेकर ग्रैजुएट भी हुए।

प्रेसीडेंसी कॉलेज के छात्रावास में जो घटना घटित हुई थी, उससे सुभाष की क्रांतिकारी विचारधारा का परिचय मिलता है। जब वे प्रेसीडेंसी कॉलेज में शिक्षा प्राप्त कर रहे थे, उसी क्रम में मि. वोटन नामक एक दुष्ट गोरा महाविद्यालय में प्राध्यापक था। भारतीय छात्रों के प्रति उसका अत्यधिक अपमानजनक दुर्व्यवहार देखकर सुभाष बाबू को गहरा आघात लगा। सुभाष वेदना को दबा नहीं सके और आवेश में आकर उन्होंने उस प्राध्यापक को पीट दिया। इसी संबंध में महाविद्यालय के छात्रों के द्वारा एक जोरदार हड़ताल की गई। परिणामस्वरूप सुभाष दो वर्षों तक विश्वविद्यालय से निष्कासित कर दिए गए।

सुभाष चंद्र बोस में बाल्यावस्था से ही आध्यात्मिक जिज्ञासा थी, उसी की प्रेरणा से वे एक दिन अपने परिवार के माता-पिता के मोह-बंधन को तोड़कर घर से भाग निकले थे। लगभग छह मास तक वे वृंदावन, काशी, हरिद्वार आदि तीर्थों, मंदिरों, मठों में भ्रमण करते रहे। वे सच्चे गुरु के अन्वेषण में निकले थे, परंतु तीर्थ-स्थलों के साधु, सन्यासियों का जीवन बड़ा विलासमय दिखाई पड़ा, जिससे उन्हें घृणा हो गई और वे लौटकर घर आ गए।

सुभाष में अद्भुत संगठन क्षमता थी। उनकी वाणी में एक आकर्षण था, जो जनता को मोह लेता था। बंगाल का सत्याग्रह आंदोलन उन्होंने ही किया था, जिसने अधिक जोर पकड़ लिया था। १९२० में उन्होंने युवक दल का गठन किया, जिसके द्वारा कृषकों तथा श्रमिकों का संगठन बनाया। सन् १९२१ में जब अंग्रेजों के द्वारा रौलेट ऐक्ट, पंजाब हत्याकांड, मार्शल लॉ आदि के विरुद्ध देश भर में आंदोलन चलाया जा रहा था। बापू का असहयोग आंदोलन भी जारी था। स्वतंत्रता संघर्ष का मध्य संक्रमण काल था। सुभाष बाबू संवेदनशील हृदय के व्यक्ति थे। अंग्रेजों के द्वारा भारतवासियों पर अत्याचार देखकर वे काफी मर्माहत हो गए और आई.सी.एस. का पद त्यागकर आजादी के आंदोलन में कूद पड़े। फलतः गिरफ्तार कर लिए गए।

सन् १९२४ में कलकत्ता निगम में निर्विरोध निर्वाचित हुए। किंतु साल भर के भीतर ही बंगाल अध्यादेश के अनुसार उन्हें अनिश्चित काल के लिए कारावास का दंड दिया गया। पहले तो उन्हें कलकत्ता के अलीपुर जेल में रखा गया। पुनः बर्मा के मांडले जेल में नजरबंद कर दिया गया। वहाँ उनका स्वास्थ्य बहुत बिगड़ गया। उन्होंने कारागृह में दुर्गा का त्योहार मनाने के लिए अनशन भी किया। अब उनके शरीर में क्षय के लक्षण प्रकट होने लगे। उन्हें स्विट्जरलैंड में जाकर स्वास्थ्य सुधारने की अनुमति दी गई, पर शर्त लगा दी गई थी कि बर्मा से वे सीधे चले जाएँ। रास्ते में भारत के किसी बंदरगाह पर न उतरें। उन्होंने इस शर्त

को नामंजूर कर दिया। अंत में अंग्रेजों के द्वारा बिना शर्त उन्हें छोड़ दिया गया। जेल से छूटने के बाद वे शीघ्र ही स्वस्थ हो गए।

वे प्रांत की कांग्रेस समिति के अध्यक्ष चुने गए और १९२७ में प्रांतीय कौंसिल में भी निर्वाचित हुए। उन्होंने 'इंडिपेंडेंस ऑफ इंडिया' लीग का संगठन बनाया तथा 'साइमन आयोग' के बहिष्कार में भी योगदान दिया। १९२८ के कांग्रेस अधिवेशन में स्वयंसेवक सेना के प्रधान सेनानी बने। उन्होंने कांग्रेस डेमोक्रेटिक पार्टी भी बनाई। पुन: उन पर राजद्रोह का झूठा मुकदमा चलाकर साल भर के लिए जेल भेज दिया गया। किंतु स्वास्थ्य के बिगड़ने पर इलाज के लिए वियाना भेजा। स्वास्थ्य सुधार के बाद उन्होंने बुडापेस्ट, मिलान आदि देशों में घूमकर प्रचार किया। लेकिन सरकार की अनुमति के बिना ही स्वदेश लौट आए। यहाँ आते ही उन्हें जेल में डाल दिया गया, किंतु पुन: स्वास्थ्य के बिगड़ने पर उन्हें बिना शर्त १९३७ में छोड़ दिया गया।

हरिपुर कांग्रेस के अधिवेशन में मतभेद होने के कारण सभापति के पद से त्याग-पत्र देकर कांग्रेस के भीतर ही 'अग्रगामी दल' की स्थापना की। १९४० में रामगढ़ के कांग्रेस अधिवेशन में विशेष भाग लिया। पुन: बंदी बनाए गए। पुन: अनशन किया। स्वास्थ्य के बिगड़ने पर उन्हें छोड़ दिया गया, किंतु उनके मकान पर कठोर नजरबंदी प्रतिबंध लगा दिया गया। अब वे एकांतवास तथा ईश्वराधना में तल्लीन हो गए। इसी बीच हिटलर के नेतृत्व में द्वितीय महासमर शुरू हुआ।

२६ जनवरी, १९४१ को पुलिस को चकमा देकर भारत से पेशावर होते हुए वे काबुल पहुँच गए। पुन: काबुल के जर्मन दूतावास की सहायता से बर्लिन पहुँचकर हिटलर से मिले। नेताजी सुभाषचंद्र बोस श्री चितरंजन दास को अपना राजनीतिक गुरु मानते थे। उस समय बंगाल के नेता देशबंधु चितरंजन दास ही थे। सुभाष चंद्र बोस ने श्री रासबिहारी बोस की अध्यक्षता में 'आजाद हिंद सेना' का नेतृत्व किया।

सन् १९४३ के मध्य वे जर्मनी से जापान पहुँचे। सुदूर पूर्व में बसनेवाले भारतीयों को सुसंगठित अंग्रेजों और अमरीकियों के विरुद्ध युद्ध की घोषणा कर दी तथा बर्मा की ओर से भारत के पूर्वी सीमांत पर आक्रमण कर दिया। इस सेना में रानी लक्ष्मीबाई के नाम से भारतीय वीरांगनाओं की भी टुकड़ी थी। उस रण-कुशल वीर का सैनिक संगठन अपूर्व था। इसमें लगभग ५० हजार सशस्त्र सैनिकों की एक सुसंगठित पलटन थी। उस सेना के सैनिक गोलों की बौछारें करते हुए शत्रुओं के टैंकों के मार्ग में लेटते हुए तनिक भी भयभीत नहीं होते थे। इस मोर्चे के सम्मुख अंग्रेजी सैनिकों के प्राण सूख गए और भारतीयों का हौसला बुलंद हो गया। किंतु कालचक्र उलटा चला, जर्मनी पराजित हो गया तथा अमेरिका के अणु बम से जापानियों को आत्मसमर्पण करना पड़ा। इसी बीच सुभाष चंद्र बोस भी अंतर्धान हो गए।

सुभाष चंद्र बोस जितने बड़े देशभक्त थे, उतने ही बड़े पितृभक्त भी। वे इंटर की परीक्षा दिए बिना आजादी की लड़ाई में कूद पड़े थे। जिसके कारण इनके पिताजी नाराज रहने लगे थे। एक दिन इनकी माताजी ने इनसे कहा, ''तुम्हारे पिताजी तुम्हारे व्यवहार से तुम पर

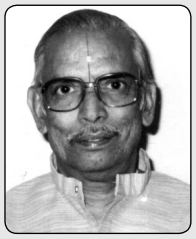

सुपरिचित लेखक। २९ पुस्तकें एवं लगभग १५० लेख प्रकाशित। अनेक राष्ट्रीय-अंतरराष्ट्रीय संस्थाओं द्वारा सम्मानित। कई प्रतिष्ठित सामाजिक-सांस्कृतिक संस्थाओं से संबद्ध। मानस संगम कानपुर के संस्थापक अध्यक्ष।

क्षुब्ध रहते हैं, सुभाष। पढ़ना-लिखना छोड़कर नेतागिरी करते फिरते हो, जिसके कारण उनके हृदय में तुम्हारे प्रति आक्रोश होना और भी उचित है।'' यह संवाद सुनते ही उनका हृदय अपने पिता के प्रति न सिर्फ श्रद्धा और भक्तिभाव से भर गया, बल्कि उनसे मिलने की जिज्ञासा भी जाग गई।

एक दिन सुभाष अपने पिता को अकेले में बैठे देखकर उनके निकट चले गए और सानिष्ठ प्रणाम प्रस्तुत कर अपने प्रति नाराजगी का कारण जानना चाहा। इस पर उनके पिताजी ने डाँटते हुए कहा, ''तुम इस बात को नहीं जान पाओगे सुभाष, कि पुत्र के जन्म के समय पिता को कितनी खुशी होती है और उसके प्रति वह क्या-क्या अरमान सजा लेता है। मैंने भी तुम्हारे जन्म के समय कुछ अरमान सँजोए थे, जो सब मिट गए और पुत्र भी कुपुत्र निकल गया। ऐसे में उस दु:खी पिता के मन में उस पुत्र के प्रति आक्रोश के सिवाय और क्या हो सकता है?''

तब सुभाष ने बहुत विनम्रतापूर्वक उनकी बात जानने की जिज्ञासा जाहिर करते हुए कहा, ''कौन-कौन से अरमान मेरे जन्मकाल में सँजोए थे, पिताजी! मुझे बताने की कृपा करें; मैं उसे पूरा करने का पुरजोर प्रयास करूँगा।'' ''अब तुम लीक से हट गए हो, सुभाष! नेतागिरी में तुम सबकुछ समाप्त कर चुके हो। अब तुमसे वह काम संभव नहीं है। लेकिन जानना चाहते हो तो सुनो, तुम्हारे जन्म काल के समय समाचार-पत्र में किसी लड़के के इंग्लैंड जाकर आई.सी.एस. की परीक्षा पास किया था, वह छपा था, जिसे पढ़कर मेरे मन में भी तुम्हें इंग्लैंड भेजकर आई.सी.एस. बनाने का सपना सँजोया था और तुम्हें बी.एस-सी. की परीक्षा पास कराकर इंग्लैंड भेजना चाहता था, जिससे तुम भटक गए हो।'' तब बड़े विश्वासपूर्व सुभाष ने अपने पिता का पैर स्पर्श करते हुए कहा, ''मैं संकल्प लेता हूँ पिताजी! बी.एस-सी. की परीक्षा पास कर इंग्लैंड अवश्य जाऊँगा और आई.सी.एस. की डिग्री प्राप्त कर आपके श्रीचरणों पर अर्पित करूँगा। आप मुझे केवल आशीर्वाद देकर अनुगृहीत करें।''

''अब यह संभव न होगा सुभाष! क्योंकि तुम इंटर की परीक्षा दिए बिना पढ़ाई छोड़ चुके हो। अब नेतागिरी छोड़कर पुन: पढ़ने की ओर जाना असंभव लगता है।'' ''नहीं पिताजी! दुनिया में कुछ भी असंभव नहीं होता। मनुष्य अगर किसी काम को करने के लिए दृढ़ संकल्प कर ले तो उस काम को किए बिना उसे चैन नहीं मिलता; भले ही भीषण-से-भीषण बाधाएँ भी उसके राह में रोड़े बनकर आ जाएँ। लेकिन वह मंजिल पाकर ही दम लेता है। मैं देश को आजाद कराना अवश्य चाहता

हूँ पिताजी! लेकिन देशभक्ति से अधिक बड़ी पितृभक्ति होती है। देश पुत्र का भरण-पोषण करता है, परंतु पिता पुत्र को जन्म देता है। अतएव देशभक्ति से पितृभक्ति अधिक महत्त्वपूर्ण है। अत: मैं पहले पिता को प्रसन्न करने के बाद देश की सेवा करूँगा।''

सुभाष ने अपने पिता को आश्वस्त कर पुन: महाविद्यालय में नामांकन करा लिया और बी.एस-सी. की परीक्षा पास करने के पश्चात् इंग्लैंड चले गए। वहाँ से आई.सी.एस. की डिग्री प्राप्त कर अपने घर लौट आए। सुभाष के पिता जानकीनाथ बोस को जब इसकी जानकारी हुई तो वे काफी खुश हुए तथा पुत्र को बुलाकर आशीर्वाद दिया और डिग्री प्राप्त करने के लिए बधाई भी दी। सुभाष ने भी आई.सी.एस. की डिग्री पिताश्री के चरणों पर चढ़ा दी और विनम्रतापूर्वक चरण स्पर्श करते हुए कहा, ''पिताजी! अब तो आप हमसे प्रसन्न हैं न? क्योंकि आपका सपना और मेरा संकल्प दोनों साकार हो गए।'' ''हाँ सुभाष! अब मैं प्रसन्न हूँ। तुमसे कोई शिकायत नहीं है। मेरी समझ में यह बात भी आ गई कि दृढ़ संकल्प के सहारे मनुष्य असंभव को भी संभव बना सकता है, जैसा कि तुमने आज करके दिखा दिया है।''

इस पर विनम्रतापूर्वक सुभाष ने कहा, ''आपके आदेश का अनुपालन तो हो गया, पिताजी! अब मेरा अरमान देश को आजाद कराने का है, जिसका मैं हृदय से संकल्प ले चुका हूँ। अत: इसकी सफलता के लिए आशीर्वाद दीजिए।'' यह कहते हुए सुभाष चंद्र बोस पुन: स्वतंत्रता संग्राम में कूद पड़े। यह नेताजी सुभाष चंद्र बोस की देशभक्ति के साथ-साथ पितृभक्ति भी थी।

सुभाष चंद्र बोस ने मृत्युपर्यंत देशभक्ति और पितृभक्ति दोनों मर्यादा का एक साथ निर्वहन किया। यह महान् उदाहरण आज के पिता-पुत्र के बीच टूटते रिश्तों के लिए न केवल प्रेरक है, अपितु अनुकरणीय भी। इस प्रकार अपने बलबूते अद्‌भुत साहस प्रदर्शित करनेवाले नेताजी सुभाष चंद्र बोस वास्तव में अभिमन्यु थे। अभिमन्यु की तरह छोटी अवस्था में ही उनका शौर्य दिखने लगा था।

अंत में विदेशी शिक्षण काल में उन्होंने अनुभव कर लिया था कि स्वाधीनता के बाद यदि देश को एक सूत्र में बाँधकर रख सकता है तो वह राष्ट्रभाषा हिंदी ही है। हिंदी में देश के एकसूत्र में बाँधने की क्षमता है। इसलिए विदेश में 'आजाद हिंद फौज' की स्थापना में यह अनुभव किया कि जो भारतीय अंग्रेजों की फौज से पकड़े गए विभिन्न प्रदेशों के भाषा-भाषी हैं। एक सूत्र हिंदी में ही रखा। इसका प्रमाण रेखांकित प्रयाण गीत—

कदम-कदम बढ़ाए जा खुशी के गीत गाए जा,
यह जिंदगी है कौम की तो कौम पे मिटाए जा।

वर्तमान नवयुवक अनुभव करें कि शिक्षा का वास्तविक अर्थ मात्र धन कमाना है, साथ ही माता-पिता तथा देश के प्रति निष्ठा में बाँधने के लिए भी। नेताजी ने आजाद हिंद फौज के सैन्य 'कॉशन' तथा प्रयाण गीत (मार्च पास्ट) जनभाषा हिंदी को ही मान्यता दी। ऐसे थे दूरदर्शी नेताजी। उनके जन्मदिवस पर नेताजी को शत-शत नमन!

साअ
मानस संगम
महाराजप्रयाग नारायण मंदिर
(शिवाला) कानपुर-२०८००१
दूरभाष : ०५१२-२३५५६२९

कविता

अब भोजन है, मनुहार नहीं

• कुश चतुर्वेदी

अम्माँ थीं तो घर घर था,
सबकुछ उन पर निर्भर था।
घुलकर चूल्हा जलता था,
सुख से जीवन चलता था॥

भरी दाल से रही पतीली,
सचमुच होती बड़ी रसीली।
तरकारी से भरा कठौता,
ब्यालू में आकर्षण होता॥

थाली ले बैठें सब भाई,
रोटी नंबर से ही आई।
घर में पली हुई थी गैया,
भरी दूध से तचे कढ़ैया॥

जादू था अम्माँ के हाथ,
मन से खाते झोर-भात।
जबसे हम कुछ बड़े हुए,
भोजन बनता खड़े हुए॥

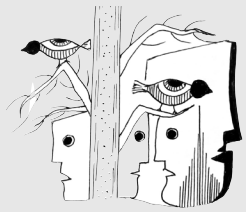

गई फूँकनी और कठौरता,
मिट्‌टी का चूल्हा भी सोता।
मेहमान अब कम आते हैं,
बड़ी व्यस्तता बतलाते हैं॥

जल्दी में अब खाना भी,
कम है आना-जाना भी।
अब तो किचेन चमाचम है,
घर क्या होटल से कम है॥

अब भोजन है मनुहार नहीं,
एक और का प्यार नहीं।
अम्माँ भूख भाँपती थीं,
चेहरा देख नापती थीं॥

सबको ऐसी कला कहाँ?
अम्माँ सा सुख भला कहाँ?

साअ
३ रंगरेजन टोला, छिपेटी
इटावा (उ.प्र.)

नई जिंदगी

● तारा मंगल

भीड़-भाड़ से बचने के लिए मैं अकसर महीने के तीसरे सप्ताह में ही बैंक जाती हूँ, लेकिन नोटबंदी के कारण मुझे आज पहले सप्ताह में ही बैंक जाना पड़ा। बैंक की भीड़ देखकर मेरा सिर चकराने लगा, लेकिन फिर भी मैं हिम्मत करके लाइन में खड़ी हो गई। थोड़ी देर बाद बैंक का पिओन मेरे पास आकर बोला कि मैडमजी, आपको मैनेजर साहब बुला रहे हैं। मैं बोली कि क्यों? वह बोला, यह तो पता नहीं। ठीक है, साहब से बोलना कि मैं अभी लाईन में खड़ी हूँ, उनसे बाद में मिल लूँगी।

थोड़ी देर बाद पिओन वापस आया और बोला, मैडमजी! आपको अभी चलना है। मैं बोली, अभी कैसे जा सकती हूँ, मेरा नंबर चूक जाएगा। उसने सिक्योरिटी गार्ड से कहा कि मैडम के नंबर का ध्यान रखना। गार्ड बोला, ठीक है। मैं पिओन के साथ मैनेजर साहब के कैबिन में घुसी, वहाँ घुसते ही बोली कि आपने मुझे बुलाया, कृपया जल्दी बताइए क्या काम है? मेरे प्रश्न का उत्तर दिए बिना मैनेजर साहब अपनी कुरसी से उठे और मेरे पैर छूकर मुझे सामने की कुरसी पर बैठने का संकेत किया। मैं कुरसी पर बैठते हुए बोली कि मैंने आपको पहचाना नहीं, शायद आपको कोई गलतफहमी हुई है। मैनेजर साहब ने कहा कि कोई गलतफहमी नहीं हुई है, आप हमारी पूजनीय हैं। यह सुनकर मुझे बहुत आश्चर्य हुआ। वे बोले, आप रतना आंटी ही हैं ना, सुरेशजी अंकल की मिसेज। इतना कहकर पिओन को बुलाकर दो कप चाय लाने को कहा।

मैं बोली कि मैं चाय-वाय कुछ नहीं पीऊँगी, अभी मेरा नंबर आनेवाला है, आप कृपया बताइए, मुझे क्यों बुलाया है। मैनेजर साहब बोले, आप तसल्ली से बैठिए, मैं अभी आपका भुगतान मँगवा देता हूँ। मैंने पर्ची व पास-बुक उनको दे दी। उन्होंने पिओन से मेरा भुगतान मँगवा दिया। मैं रुपए व पास-बुक पर्स में रखकर, मैनेजर साहब को धन्यवाद देकर, जैसे ही कुरसी से उठी कि चाय आ गई, मुझे विवश चाय पीने बैठना पड़ा। अभी कप हाथ में लिया ही था कि मेरा असमंजस देखकर वे बोले कि आंटी, आपने मुझे पहचाना नहीं क्या? मैं बोली, नहीं पहचाना, तो वे बोले कि आंटी मैं वही हूँ कामवाली बाई लीला का बेटा नंदू हूँ। यह मैनेजर लीला का बेटा नंदू है। थोड़ी देर मैंने पुरानी स्मृतियों पर जोर डाला तो १८-२० वर्ष पुराना लीला व नंदू का धुँधला सा चेहरा स्मृति में तैरने लगा और मैं पुरानी स्मृतियों में खो गई।

उस समय मेरे पति का स्थानांतरण जयपुर हुआ था, घर के काम

सुपरिचित इतिहासकार व लेखिका। विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में रचनाएँ प्रकाशित। पूर्व विभागाध्यक्ष इतिहास एवं पूर्व अधिष्ठाता (डीन) कला संकाय, जयनारायण व्यास विश्वविद्यालय जोधपुर (राजस्थान)।

में हाथ बँटाने के लिए मैंने लीला को रख लिया। लीला समय पर अपना काम निपटाकर चली जाती थी। इस तरह छह महीने बीते गए। दिसंबर की सर्दी में लीला ने बिना सूचना दिए चार दिन की छुट्टी कर ली। मुझे लीला पर बहुत गुस्सा आ रहा था कि बिना सूचना दिए छुट्टी क्यों ली? पाँचवें दिन लीला काम पर आई तो मैं उस पर गुस्सा हुई, तो वह बोली कि मैडमजी, मेरा बच्चा बहुत बीमार था और देखभाल करनेवाला घर पर कोई नहीं है, इतना कहते-कहते वह फूट-फूटकर रोने लगी। मैंने उसे प्यार से पुचकारा और पूछा कि तुम्हारे पति उसकी देखभाल कर लेते। लीला बोली, मेरे पति इस दुनिया में नहीं हैं।

वह बोली, मैडमजी, मैं बहुत अभागिन हूँ, मेरे पति दिहाड़ी पर काम करते थे, एक ही बच्चा नहीं है, हम उसे पढ़ा-लिखाकर कुछ बनाना चाहते थे, लेकिन हाय री किस्मत, दो साल पहले नंदू व उनके पिताजी बाजार से लौट रहे थे कि पीछे से आए एक ट्रक ने उन्हें टक्कर मार दी, जिससे मौके पर ही उनकी मृत्यु हो गई और नंदू की एक टाँग इतनी कुचल गई कि उसे घुटने के नीचे से काटना पड़ा। ओ-हो लीला की कहानी सुनकर मुझे बहुत दुःख हुआ। मैंने लीला से पूछा कि नंदू की उम्र क्या है? यही कोई छह-सात बरस। लीला बोली। क्या तुमने उसे स्कूल में भरती कराया है? नहीं मैडमजी, खाने को ही पूरा नहीं होता है, स्कूल का खर्चा कहाँ से उठाऊँ? लीला बोली। मैंने कहा, अच्छा तू नंदू को कल यहाँ लाना। अगले दिन लीला के साथ एक दुबला-पतला सा लड़का था, दाएँ हाथ में बैसाखी थी। मुझे उसे देखकर बहुत दुःख हुआ। मैंने नंदू से पूछा—क्या तुम स्कूल जाओगे? उसने कोई जवाब नहीं दिया। मैंने उसे समझाया कि तुम्हारे पैर की तकलीफ के कारण तुम कोई भारी काम नहीं कर सकते हो, तुम्हारे लिए पढ़ना बहुत जरूरी है। नंदू मेरी बात मानकर स्कूल जाने को तैयार हो गया।

मैंने उसे पास के सरकारी स्कूल में भरती करवा दिया। जहाँ १२वीं कक्षा तक गरीब छात्रों को निशुल्क शिक्षा दी जाती थी। स्कूल पास होने

से लीला भी खुश थी। इस तरह तीन साल गुजर गए और नंदू ने तीसरी कक्षा तक की पढ़ाई कर ली। चौथी कक्षा में उसके साथ कुछ दादा टाईप लड़के थे, जो उसको बहुत तंग करते थे, कभी उसे धक्का दे देते तो कभी उसकी बैसाखी छीन लेते। उसे लँगड़ा-लँगड़ा कहकर चिढ़ाते थे। एक दिन उन्होंने नंदू को बहुत जोर से धक्का दिया, जिससे उसका सिर फट गया, लीला जब उसको स्कूल लेने गई तो वह एक कोने में बैठा रो रहा था, उसके सिर पर पट्टी बँधी थी। नंदू ने सारी बात अपनी माँ को बताई और कहा कि अब वह कभी स्कूल नहीं जाएगा। यह सुनकर लीला बहुत चिंतित हो गई।

अगले दिल लीला जब काम पर आई तो उसने सारी बात मुझे बताई। सुनकर मुझे प्रिंसिपल साहब और उन लड़कों पर बहुत गुस्सा आया। मैं लीला व नंदू को लेकर उसके स्कूल गई व प्रिंसिपल साहब से मिली। प्रिंसिपल साहब ने उन लड़कों को बहुत डाँटा और कहा कि आगे से ऐसी शिकायत आई तो स्कूल से निकाल दिए जाओगे। हम स्कूल से संतुष्ट होकर घर आ गए। लेकिन नंदू की स्कूल नहीं जाने की जिद बकरार थी, वह किसी भी कीमत पर स्कूल जाने को तैयार नहीं था, तो लीला उसे लेकर मेरे पास आई। मैंने देखा कि नंदू की आँखें रो-रोकर सूज गई हैं, आँखों में एक दर्द व दहशत है। मैंने उसे प्यार से समझाया था कि नंदू, अगर तुम स्कूल नहीं जाओगे तो क्या करोगे? तुम कोई भारी काम नहीं कर सकते हो, कौन तुम्हें जिंदगी भर रोटी खिलाएगा, क्या तुम सड़क पर खड़े होकर भीख माँगोगे? मेरी बात सुनकर उसकी आँखों में आँसू आ गए, वह रोने लगा। वह बोला, मैडमजी, वो लड़के जब लँगड़ा-लँगड़ा कहकर चिढ़ाते हैं तो मुझे बहुत बुरा लगता है, अब आप ही बताएँ, मैं क्या करूँ? मैंने उसे कहा कि अगर तुम्हारा नया पैर लग जाए, तो क्या तुम स्कूल जाओगे? नंदू खुश होकर बोला, मैडमजी, जरूर जाऊँगा। अच्छा तो तू कल से स्कूल जा, मैं जल्दी ही तुम्हारा नया पैर लगवा दूँगी। नंदू पर उस बात ने जादू का असर किया, वह अगले दिन से स्कूल जाने लगा। नंदू तो खुश हो गया, लेकिन मुझको चिंता में डाल दिया। मैं सोचने लगी कि मैंने नंदू को कह तो दिया कि नया पैर लगवा दूँगी, परंतु कहाँ से लगवाऊँगी, क्या करना पड़ेगा, कुछ भी समझ में नहीं आ रहा था।

इत्तेफाक से दो दिन बाद मेरी नजर अखबार में एक विज्ञापन पर पड़ी, जिसमें लिखा था कि सेठी अस्पताल जयपुर में कृत्रिम पैर लगाया जाता है। मैं बहुत खुश हुई और अस्पताल जाकर सारी जानकारी प्राप्त कर ली। अगले दिन मैं, लीला व नंदू अस्पताल गए। वहाँ सब चैकअप करके डॉ. साहब बोले कि वैसे तो सब ठीक है, लेकिन अभी पैर नहीं लगवाएँ तो अच्छा रहेगा, क्योंकि अभी बच्चे का शरीर व लंबाई दोनों बढ़ेंगी। मैंने डॉ. साहब को सब स्थिति से अवगत कराया और कहा कि डॉ. साहब पैर तो अभी ही लगाना है। नंदू बड़ा होगा तब मैं दूसरा पैर लगवा दूँगी। ठीक है, डॉ. साहब ने कहा, और नंदू के पैर का नाप लेकर पैर बना दिया। थोड़े दिनों में नंदू उस पैर से चलने लगा, उसकी बैसाखी छूट गई, उसका आत्मविश्वास लौट आया।

नंदू के पैर लगने के कुछ समय पश्चात् हमारा जयपुर से स्थानांतरण हो गया। हमारे जाने की बात सुनकर नंदू व लीला बहुत उदास हो गए, तो मैंने कहा कि चिंता मत करो, तुम मुझे फोन कर लेना, मैं डॉ. साहब से बात कर लूँगी। मेरे पति का अलग-अलग जगहों पर तबादला होता रहा, कब इतना समय निकल गया, पता ही नहीं चला। समय के साथ-साथ नंदू व लीला की स्मृतियाँ भी धुँधली पड़ती गईं।

अभी हम लोग जयपुर में ही रहने लग गए हैं, और आज अचानक नंदू से मिलना हो गया। मैं विचारों में खोई थी कि नंदू की आवाज सुनकर चौंक गई। वह बोला, मैडमजी, कहाँ खो गईं? आपकी तो चाय ही ठंडी हो गई है। मैं वर्तमान में लौट आई, मैं बोली, अच्छा अब मैं चलती हूँ, बहुत देर हो गई है। नंदू ने मेरा पता व फोन नंबर ले लिया और बोला, अगले संडे को घर आऊँगा। मैंने घर आकर अपने पति को नंदू की सब बात बताई तो वे बहुत खुश हुए।

संडे को नंदू सपरिवार घर आया। लीला मुझे देखते ही मेरे पैर पकड़कर रोने लगी और कहने लगी कि मैडमजी, आपने मुझे व नंदू को नई जिंदगी दी, वरना आज हम सड़कों पर भीख माँग रहे होते। हम आपका यह एहसान हमेशा याद रखेंगे। मैंने कहा, यह सब तुम्हारी व नंदू की मेहनत का परिणाम है, जो आज इस मुकाम पर पहुँचे हो, मैंने तो जरा सा सहयोग किया था।

नंदू बोला, अंकलजी, आपको यह जानकर खुशी होगी कि मेरा चयन विकलांग व जाति कोटे से नहीं अपितु मेरिट आधार पर हुआ। मैं सभी परीक्षाओं का टॉपर रहा हूँ। मेरे पति बोले, नंदू, तुमने बहुत मेहनत की है, आगे भी करते रहना। थोड़ी देर बाद नंदू ने जाने की अनुमति माँगी औरे बोला, मैडमजी, कभी भी कोई भी काम हो, अपने नंदू को जरूर याद करना। लीला बोली, मैडमजी, मैं आपकी सेवा करना चाहती हूँ। मैं बोली, नहीं लीला, तुमने बहुत कष्ट देखे हैं, अब तुम्हारी उम्र भी हो गई है। तुम आराम करो। लौटते वक्त नंदू व उसके परिवार के चेहरों पर अद्भुत खुशी थी, इतने वर्षों बाद नई जिंदगी देनेवालों से मिलने का अवसर जो मिला। मैंने और मेरे पति ने सोचा कि मदद का एक छोटा सा हाथ भी इनसान को नई जिंदगी देकर कहाँ-से-कहाँ पहुँचा देता है।

प्लॉट नं. ३२ए, गणेश विहार
रिद्धी-सिद्धी स्वीट होम के पीछे
गोपालपुरा बाईपास, जयपुर (राजस्थान)
दूरभाष : ०९४१४१३००२२

तलाश

मूल : **नीलकंठ नांदुरवर**
अनुवाद : **सुशीला दुबे**

सुबह छह बजे फोन की घंटी बजी। मैं बिस्तर पर लेटा हुआ था। वैजू ने फोन उठाया। बेडरूम के दरवाजे पर आकर उसने कहा, ''नागेश भैया का फोन है।'' मैं झट से उठ खड़ा हुआ। ''हैलो सुमंत, पूरे जागे हो या अभी भी नींद में हो?'' नागेश उत्साह में बोल रहा था।

''हैलो नागेश, कब आए?''

''अभी-अभी एक घंटा पहले।''

''क्या खोज पूरी हुई?''

''अरे, पूरी हुई, मतलब? राज्यपाल से स्पेशल गोल्ड मेडल प्राप्त पुलिस अफसर हूँ। हारकर आ सकता हूँ भला!'' नागेश की आवाज सुनकर लग रहा था कि वह बहुत खुश है। सीधी सी बात है, उसका काम सोलह आने पूरा हुआ होगा।

''बधाई हो!''

''धन्यवाद! पर क्या तुम्हें विस्तार से सब जानने की इच्छा नहीं है?''

''यह तुम क्या कह रहे हो? सबकुछ जानने के लिए मैं बहुत उत्सुक हूँ।''

''तुम्हारी बातों से लगता है कि तुम्हें कहानी लिखने के लिए विषय मिलेगा, इसकी खुशी हो रही है।''

''अब तुम चाहे जो समझो, पर बताओ, कब आऊँ?''

''आज किसी भी समय आ सकते हो। वैसे भी मैं छुट्टी पर हूँ। ऐसा करो, भोजन के लिए आ जाओ, ठीक बारह बजे। कोई बहानेबाजी नहीं। मैं प्रतीक्षा कर रहा हूँ।'' उसने फोन रख दिया।

चाय पीकर मैं अखबार देख रहा था। पहले पन्ने पर समाचार छपा था—'पैसों के लिए माँ का खून!' पेठ ताल्लुके में किसी शराबी ने माँ पैसे नहीं देती, इसलिए उसके सिर पर पत्थर मार दिया था। मैंने अखबार तिपाई पर रखा और सोफे पर आराम से बैठ गया। मुझे आठ दिन पहले की घटना याद आ रही थी।

ऐसे ही सुबह-सुबह नागेश मेरे घर आया था। 'कुछ जरूरी बात करनी है।' कहकर मुझे छत पर ले गया था। पहले ही दिन उसकी माँ की तेरहीं हुई थी। माँ के जाने से वह बहुत दुःखी था। और क्यों न होगा! वह पाँच साल का था, तब उसके पिताजी का देहांत हो गया था। नागेश इकलौती संतान था। माँ ने उसे बड़े दुःख से पाला-पोसा था। उसे भी माँ की तकलीफों का एहसास था। उसने माँ की इच्छा पूरी की। राज्यपाल के हाथों बेटे का सम्मान हुआ, यह देखकर वृद्धा ने खुशी से आँखें मूँद लीं। नागेश की पत्नी, हमारी नंदा भाभी भी स्वभाव से ममतामयी हैं। उन्होंने सास को माँ समझकर उनकी सेवा की थी। नागेश मातृ-विरह से व्यथित है, यह तो मैं जानता था, लेकिन अब उसे अपना गम भुलाकर दुनियादारी की ओर ध्यान देना चाहिए। ऐसा मैं उसे समझाने जा रहा था। नागेश ने एकदम बम विस्फोट कर दिया। ''सुमंत, पहले मुझे वचन दो, अब मैं जो कुछ तुम्हें बताऊँगा, वह तुम किसी को नहीं बताओगे। अपनी पत्नी को भी नहीं!''

''ठीक है, दिया वचन!''

नागेश सामने के गुलमोहर वृक्ष की ओर देखते हुए बोला, ''सुमंत, मैं भोंडे की जायज संतान नहीं हूँ।''

''ऐं? यह क्या बकवास है? होश में तो हो?''

''चीखो मत, वैजू, भाभी ऊपर आ जाएगी।''

''नागेश, तुम जो कुछ कह रहे हो, उस पर मुझे विश्वास नहीं हो रहा है।''

''मुझे भी नहीं हो रहा। लेकिन यह सत्य है शत-प्रतिशत! इसलिए मैं परेशान हूँ।''

''लेकिन तुम्हें कैसे पता चला?''

''आखिरी समय में माँ ने बताया।''

''तुम्हें, अकेले को?''

''नहीं, मैं और नंदा दोनों थे; और कोई नहीं था। तुम तो जानते हो न कि माँ को कैंसर था। आखिरी समय में साँस लेना मुश्किल हो रहा था, लेकिन वह होश में थी। मेरा हाथ अपने हाथ में लेकर उखड़े शब्दों में उसने कहा, 'नागेश, एक सत्य बताती हूँ। अगर मैंने यह नहीं बताया तो मैं चैन से मर नहीं सकूँगी। मुझे वचन दो कि मैं जो कुछ बताऊँगी, वह सुनने के बाद तुम मुझसे नाराज नहीं होगे!'

'नहीं होऊँगा, बताओ!'

'तुम्हें···तुम्हें हमने···गोद लिया था।'

'क्या?' मैं चीखा था।

'हाँ बेटे, आखिरी समय में मैं झूठ नहीं बोलूँगी। सच कह रही हूँ। सच बताकर मेरे मन का बोझ हलका हो गया है। तुम्हें मैंने अपने बेटे की तरह पाला है। उसी रिश्ते से मेरा अंतिम संस्कार करो तो मुझे सद्‌गति मिलेगी।' उसकी अवाज धीमी होती जा रही थी।

'मुझे कहाँ से गोद लिया था? माँ, बताओ!'

'अनाथ आश्रम वात्सल्य···'

'कौन से गाँव से?'

'श्री···श्रीराम···' और उसकी साँस रुक गई।

पलभर को हम दोनों चुप हो गए। फिर मैंने पूछा, ''नागेश, आखिरी पल माँ के मुँह में श्रीराम नाम था। वह भगवान् का नाम ले रही थीं या तुम्हें गाँव का नाम बता रही थीं?''

''वही समझ में नहीं आ रहा है।''

अब समझ में आया कि नागेश इतना परेशान क्यों था। अचानक यह सत्य सामने आने के बाद कोई भी परेशान होगा ही!

''नागेश, नाराज मत होना, लेकिन मैं जानना चाहता हूँ कि इस पर नंदा भाभी की क्या प्रतिक्रिया थी?''

''उसने इस बात को ज्यादा अहमियत नहीं दी, बल्कि गत तेरह-चौदह दिनों से वह मेरा समर्थन कर रही है। वह कहती है कि अब तुम इस बात पर सोचो मत। भूल जाओ सब! सुमंत, कैसे भूल जाऊँ? मेरे लिए यह जानना जरूरी है कि मैं किस जाति का, कौन से खानदान का, मेरे माता-पिता कौन हैं?''

''नागेश, नंदा भाभी ठीक कह रही हैं। तुम बहुत किस्मतवाले हो, इसलिए तुम्हें नंदा भाभी जैसी पत्नी मिली। और कोई होती तो हंगामा मचाती।''

''तुम ठीक कह रहे हो, लेकिन सुमंत, तलाश किए बिना मुझे चैन नहीं आएगा। मेरे माँ-बाप ने मुझे अनाथ आश्रम में क्यों रखा? गरीबी के कारण या नाजायज··· ?''

''अब तुम कुशंकाएँ मत निकालो।''

''कैसे न निकालूँ? एक नहीं, हजार कुशंकाएँ मन में आती हैं और मेरी परेशानी बढ़ाती हैं।''

''देखो नागेश, तुम्हारी छुट्टियाँ समाप्त हो गई हैं। अब तुम ड्यूटी पर हाजिर हो जाओ। काम में मन लगेगा तो सबकुछ भूल जाओगे।''

''नहीं सुमंत, यह सब इतना आसान नहीं है। मैंने एक महीने की छुट्टी बढ़वाई है।''

''यह भला किसलिए?''

''मैं कौन हूँ? इस सत्य की खोज के लिए कल ही निकल पड़ूँगा।''

''लेकिन नागेश, यदि यह सत्य कटु हुआ तो?''

''जैसा भी हो, मैं स्वीकार करूँगा।''

''अच्छा, अब चलता हूँ।''

''अरे, तुम लेखक हो, एक बात बताओ, अंत में माँ ने वात्स··· वात्स कहा था। ठीक से कह नहीं पा रही थीं।''

''वात्स से शुरू होनेवाले दो-चार शब्द मैं जानता हूँ। 'वात्सल्य' मूल संस्कृत शब्द, अर्थ—प्यार, ममता। दूसरा 'वात्सक' यह भी संस्कृत शब्द है, जिसका मतलब है—बछड़ों का झुंड! 'वात्सी' संस्कृत, मतलब—ब्राह्मण और शूद्र की बेटी। चौथा शब्द 'वात्सायन', कामसूत्र के लेखक। यहाँ 'वात्सल्य' शब्द ही सही होगा। इस शब्द का अनाथ आश्रम से संबंध दिखाई देता है। अनाथ बच्चों की प्यार से, ममता से परवरिश करनेवाली संस्था। ठीक है न!''

''तुमने ठीक ही कहा। धन्यवाद! तुमने धागे का छोर हाथ में दिया है। उससे अब गुत्थी सुलझाऊँगा। चलता हूँ!''

''महान् लेखक सुमंतजी आइए।'' नागेश ने मेरा स्वागत किया। मैं घर में गया। हॉल में टी.वी. के सामने सोफे पर एक बुजुर्ग महिला बैठी थी। वह गोरी थी। उसने लाल किनारेवाली सफेद नौ गज की साड़ी बाँधी थी।

''सुमंत, मेरी माँ से मिलो, और माँ, यह मेरा खास दोस्त है—सर देशमुख, बड़ा लेखक है।''

मैंने उन्हें प्रणाम किया।

''अरे-अरे! मुझे क्यों प्रणाम कर रहे हो?'' उन्होंने संकोच से कहा। फिर आशीर्वाद दिया, ''आयुष्मान भव!''

''आप नागेश की माँ हैं, मतलब मेरे लिए माँ समान ही हैं। जैसा नागेश, वैसा ही मैं, आप मुझे 'आप' मत कहिए।'' कुरसी पर बैठते हुए मैंने कहा।

नागेश की माँ की ओर देखते ही मुझे एहसास हुआ कि नागेश मातृमुखी है। वैसा ही चेहरा, नीली आँखें, सीधी नाक, फर्क इतना ही था कि उनकी चिबुक पर तिल था और कपाल पर गोदना।

''सुमंत, खाने में अभी समय है, तब तक चाय तो पीयोगे न?'' मैंने 'हाँ' कर दी।

''मैं जानता था। माँ इसे बीच-बीच में घूँट-घूँट चाय पिलाती है। नंदा, सुमंत आया है।'' उसने रसोई की ओर देखकर कहा।

''मैंने भी चाय का पानी चढ़ा दिया है।'' नंदा भाभी ने अंदर से जवाब दिया और मुसकराती हुई बाहर आईं। ''बारा, मतलब ठीक बारह बजे आ पहुँचे, सुमंत भैया!'' फिर उस बुजुर्ग महिला की ओर देखकर पूछा, ''माँजी, आप भी थोड़ी चाय पीयोगी न? भैया को अदरकवाली चाय पसंद है। आप भी थोड़ी लीजिए। आपको जुकाम हो गया है। अदरकवाली चाय से कम होगा।''

''ले लूँगी आधा कप।'' बहू का अपनापन देखकर महिला का कंठ भर आया था। नंदा भाभी की बातें सुनकर लगा कि उन्होंने अपनी नई सास को स्वीकार कर लिया है। नागेश की खोज-मुहिम सुनने के लिए मैं बेताब था। चाय पीने के बाद हम छत पर गए। वहाँ बैठने के बाद नागेश ने कहा, ''सुमंत, सुबह मेरा फोन सुनकर तुम्हें लगा होगा कि मेरा अभियान सौ प्रतिशत सफल हुआ, लेकिन ऐसा नहीं है। उसमें एक बेचैनी, एक टीस है, जैसे गुलाब का फूल चुनते हुए काँटा लग जाए।''

''अब सीधे-सीधे बताओ भी!''

''ठीक है, उस दिन तुमसे वात्सल्य शब्द का क्ल्यू लेकर निकला, लेकिन सवाल यह था कि कौन से गाँव जाऊँ? तुम्हारी दूसरी आशंका से प्रेरणा मिली। अंत समय में माँ ने श्रीराम भगवान् का नाम लिया था या गाँव का नाम बताया था! तुमने पूछा था। सोचने पर लगा कि गाँव का ही नाम होगा। नंदा ने भी समर्थन दिया। उसने कहा, ''माँजी सबकुछ बताना चाहती थीं। आपने पूछा था कि गाँव कौन सा था? तो उन्होंने यही बताना था, लेकिन पूरा नाम लेने से पहले ही वे चली गईं। फिर मैंने श्रीराम मतलब श्रीरामपुर तय किया। फिर भी सवाल था। भारत में रामपुर और श्रीरामपुर नाम के डेढ़ सौ गाँव हैं। अब कहाँ से शुरू करूँ? चलिए, करीब के गाँव से शुरू करते हैं। यह सोचकर अहमदनगर जिले के श्रीरामपुर गया। पुलिस डिपार्टमेंट का एक फायदा है कि किसी भी गाँव के पुलिस स्टेशन से संपर्क करके हम तलाश कर सकते हैं। हर गाँव में पुलिस के मुखबिर रहते हैं। उनसे सही जानकारी मिलती है।

''श्रीरामपुर पुलिस स्टेशन पर वात्सल्य अनाथ आश्रम खोजने लगा। वहाँ का सब इंस्पेक्टर भोसले बहुत तत्पर आदमी है। उसने मेरे सामने सामाजिक संस्थाओं की सूची रख दी। उसमें कहीं भी वात्सल्य नाम नहीं था। पर भोसले इतनी जल्दी पीछे हटनेवाला नहीं था। उसने कहा, ''सर, यहाँ काकासाहब काके नाम के पुराने सामाजिक कार्यकर्ता हैं। उनकी उम्र नब्बे के करीब है, फिर भी वे एक्टिव हैं। वे मेरे अच्छे परिचित हैं। हम उनसे मिलेंगे, चलिए!''

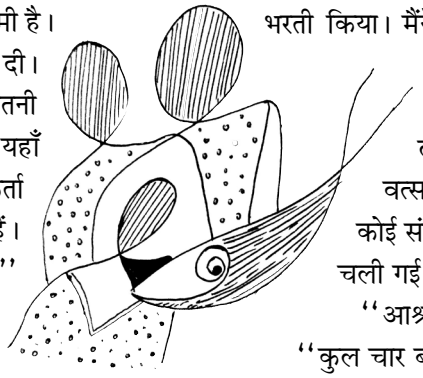

''सर, पास-पड़ोस के लोगों को गलतफहमी न हो, इसलिए हम साधारण ड्रेस में जाएँगे।''

''ठीक है।''

एक पुराने मकान में काके का कमरा था। उन्होंने शादी नहीं की थी। समाज-सेवा में जीवन समर्पित किया था। पड़ोस की एक महिला उनके लिए खाना बना देती थी। श्रावण बाघमारे नाम का एक आधी उम्र का आदमी उनके सब काम करता था। बाघमारे ने ही दरवाजा खोला। सामने खाट पर काकासाहब बैठे थे। कटोरे में चम्मच से कुछ खा रहे थे। बुढ़ापे से चेहरे पर झुर्रियाँ पड़ गई थीं, लेकिन जवानी में प्रभावशाली व्यक्तित्व रहा होगा!

''आइए भोसलेजी, कैसे आना हुआ?'' उन्होंने कहा। श्रावण ने दो कुरसियाँ लाकर रख दीं। भोसले ने काकासाहब को प्रणाम किया। मेरा परिचय करवाया और पूछा, ''क्या वे किसी वात्सल्य अनाथ आश्रम के संबंध में कुछ जानते हैं?'' काकासाहब याद करने का प्रयास करने लगे। ''वात्सल्य···वात्सल्य···अनाथ···आश्रम!'' वे बुदबुदाने लगे। फिर कहा, ''वात्सल्य न! याद आया, इस नाम का एक अनाथ आश्रम था, लेकिन वह केवल पंद्रह दिन में ही बंद हो गया था।''

''बंद हो गया? क्यों? कैसे?''

''बताता हूँ।'' उन्होंने पानी पिया।

''काकासाहब, पहले आप नाश्ता कर लीजिए।''

''नहीं, ऐसी कोई बात नहीं है। खाने में थोड़ी देरी होने से कोई फर्क नहीं पड़ता। लेकिन अब याद आया है तो भूलने से पहले बता देता हूँ। श्रावण, इनके लिए दूध ले आओ! हाँ, तो अनाथ आश्रम यहाँ से चार-पाँच घर आगे चाल में था। वत्सला बहन डोंगरे नाम की एक समाजसेविका थीं। आंबेवाड़ी में उनकी खेतिबारी थी। उनका इकलौता बेटा खेती देखता था। वत्सला बहन बहुत करुणामयी थीं। गरीबों के लिए उनके मन में आत्मीयता थी। मुझे वह गुरु मानती थी। एक बार उसने कहा, ''काकासाहब, मैं अनाथ बच्चों के लिए आश्रम खोलना चाहती हूँ, अच्छा सा नाम बताइए?''

''वत्सला, तुम यह बहुत नेक काम करने जा रही हो। 'वात्सल्य' नाम रखो। वत्सला का वात्सल्य! उसे पसंद आया। मेरे ही हाथों औपचारिक उद्घाटन हुआ। वात्सल्य अनाथ आश्रम लिखे हुए बोर्ड पर माला चढ़ाई। नारियल चढ़ाया। दो-चार दिन बाद रास्ते पर भीख माँगनेवाले दो लड़कों को आश्रम में रख लिया। एक हफ्ते बाद एक लड़की आई। फिर एक महिला ने गरीबी के कारण एक छोटा बच्चा भरती किया। मैंने कहा था कि वत्सला, तुम्हारा आश्रम रजिस्टर करवा देते हैं। आगे-पीछे जब काम बढ़ेगा तो सरकारी अनुदान के लिए अरजी दी जा सकेगी। लेकिन उससे पहले ही आश्रम बंद हो गया। वत्सला का बेटा हार्ट अटैक से चल बसा। उसकी कोई संतान नहीं थी। आश्रम बंद करके वत्सला आंबेबाड़ी चली गई।''

''आश्रम के बच्चों का क्या हुआ?''

''कुल चार बच्चे ही तो थे। वत्सला उन्हें साथ ले गई।''

''क्या वत्सला बहन अब हैं?''

''शायद होगी! मेरी उससे फिर मुलाकात नहीं हुई, क्योंकि मैं पंद्रह-बीस साल विनोबाजी के 'भूदान यात्रा' में शामिल हुआ था। भारत भर पैदल घूमा था। आगे चलकर चुनाव भी जीता। काम का विस्तार हुआ था। अब अगर वह होगी तो करीब-करीब सत्तर साल की होगी। देखिए, मिलने का प्रयास कीजिए और अगर मिल जाए तो मेरी पहचान बताइएगा।''

''धन्यवाद, बाबासाहब।'' हमने उन्हें प्रणाम किया और निकल गए। फिर जीप से आंबेवाड़ी गए। गाँव से बाहर पच्चीस-तीस किलोमीटर दूर वत्सला बहन की खोली थी। खेत के करीब पुराना घर था। तुलसी चौरे के चबूतरे पर एक वृद्धा बैठी थी। आँखों पर मोटे काँच का चश्मा था।

भोसले ने परिचय करवाया। पुलिस के आदमी देखकर वह थोड़ी घबरा गई थी। मैंने कहा, ''वत्सला बहन, आप घबराइए नहीं, आपने कोई अपराध नहीं किया है। हमें वात्सल्य अनाथ आश्रम के बारे में जानकारी चाहिए। काकासाहब ने आपके बारे में बताया, इसलिए हम आए हैं।''

''काकासाहब!'' कहकर उसने हाथ जोड़ दिए। ''बहुत बड़े

आदमी हैं। वे ठीक से हैं न?''

''ठीक ही हैं। उम्र के हिसाब से तबीयत भी ठीक है।''

''अब हमें बताइए, आपके आश्रम में कितने बच्चे थे?''

''केवल चार, तीन लड़के और एक लड़की।''

''उनके बारे में कोई जानकारी?''

''जरा रुकिए। काकासाहब के कहने पर मैंने उनकी जानकारी एक नोटबुक में लिखकर रखी थी। आप बैठिए, मैं वह नोटबुक ढूँढ़ती हूँ। आप क्या लेंगे, चाय या दूध?''

''हमें कुछ नहीं चाहिए। आप नोटबुक ढूँढ़ लो।''

दस-पंद्रह मिनट में वत्सला बहन एक नोटबुक लेकर आईं। मोटे कागज का हाथ से सिलाई किया हुआ नोटबुक मेरे हाथ में दिया। नोटबुक पुराना था, इसलिए कागज पीले पड़ गए थे। पहले पृष्ठ पर लाल स्याही से बड़े-बड़े अक्षरों में लिखा था—'वात्सल्य' अनाथ बच्चों के लिए आश्रम। दूसरे पृष्ठ पर जानकारी थी—(१) लड़का, नाम—बंडा, उम्र—पाँच साल। भिखारी का बेटा, माँ-बाप का पता नहीं। भरती की तारीख १५.८.१९६०।

(२) लड़का, नाम—चंदा, उम्र—चार साल, भिखारी, माँ-बाप का पता नहीं। भरती की तारीख—१५.८.१९६०।

(३) लड़की, नाम—जनी, उम्र—तीन साल, माँ का नाम लक्ष्मीबहन, व्यवसाय-मजदूरी, गाँव-देहरे, गरीबी के कारण आश्रम में भरती किया। तारीख—२०.८.१९६०

(४) लड़का, नाम—नागनाथ (चि. नागनाथ की याद में मैंने ही यह नाम रखा था।) उम्र—१५ दिन, माँ का नाम—कुंता बहन, खरोटे (गुमराह की गई), गाँव—राहाटा, भरती—२५.८.१९६०।

''बस्स···! इतनी की जानकारी?'' भोसले ने पूछा।

''हाँ, इतनी ही साहब। इसके बाद मेरे परिवार का आधार-स्तंभ ढह गया! सबकुछ समाप्त हो गया।'' वत्सला बहन की आँखें भर आईं। हमें भी बुरा लगा।

''वत्सला बहन, हम आपका दुःख समझ सकते हैं। शांत हो जाइए। कुछ बातें अपने हाथ में नहीं होतीं। भगवान् की मर्जी समझकर सहनी चाहिए।''

''बहनजी, उन बच्चों का क्या हुआ?''

''बंडा और चंदा को मेरे भाई ने नगर के अनाथ आश्रम में भेजा। जनी को मैंने अपने पास रखा और नागनाथ को दत्तक दिया।''

''किसने दत्तक लिया था?'' मैंने पूछा।

''नासिक के कोई भोंडे थे। पति-पत्नी नेवासे आए थे। वहाँ उनकी मेरे भाई से पहचान हुई।''

भोंडे कहते ही भोसले ने चौंककर मेरी ओर देखा। मैंने समय सूचक दिखाते हुए कहा। हमारे चचेरे चाचा थे। उन्हें संतान नहीं थी, इसलिए दत्तक लिया। संपत्ति के लिए कोर्ट में केस चल रहा है, इसलिए यह जानकारी चाहिए।'' मेरी दी हुई सफाई से भोसले का समाधान हुआ। मैंने पूछा, ''वत्सला बहन, कुंता बहन के बारे में कुछ जानकारी हो तो कृपया बताइए।''

''उसके बाद उससे मुलाकात नहीं हुई। उसने रोते-रोते जो जानकारी दी, उससे पता चला कि उसे किसी सिपाही से प्यार था। वे दोनों शादी करनेवाले थे। पता नहीं क्या हुआ कि सिपाही गायब हो गया। उसके साथ धोखाधड़ी हुई थी। वह बच्चा लेकर मेरे पास आई थी। मुझपर तो आसमान टूटा था। भाई भोंडे पति-पत्नी को लेकर आया। बातचीत से अच्छे लोग लगे। बच्चा गोद लेने के बारे में कहा और मैंने दे दिया।''

''क्या कुंता बहन अब जहान में होंगी?''

''यह तो मैं बता नहीं सकती, लेकिन अगर होगी तो मेरी ही उम्र की होगी। मुझे ठीक से याद है साहब, वह बहुत खूबसूरत थी। उसके चिबुक पर तिल था और भौंहों के बीच त्रिशूल का गोदना था।''

''ठीक है, वत्सला बहन, आपने जो जानकारी दी, उसके लिए धन्यवाद।''

''साहब, आपने चाय-वाय कुछ नहीं लिया। जरा रुकिए न।''

''नहीं वत्सला बहन, हम जरा जल्दी में हैं। बहनजी, उस लड़की का क्या हुआ?''

''मैंने उसे पाल-पोसकर बड़ा किया और उसकी शादी कर दी। अब वह नेवासा में रहती है। उसका पति, बाल-बच्चे सब अच्छे हैं।''

''अपका दिल बड़ा है, बहन। अच्छा, अब हम चलते हैं। वहाँ से हम राहाटा पुलिस स्टेशन गए। वहाँ पूछताछ करने पर एक सिपाही ने बताया कि गाँव की सीमा के पास कुंता बाई नाम की वृद्धा रहती है। लेकिन वह बस्ती अच्छी नहीं है। गुंडे-शोहादों का एरिया है।''

''रहने दो, हमारे पास पिस्तौल है। सादा ड्रेस में एक सिपाही हमारे साथ दे दो।''

सचमुच वह गंदी बस्ती थी। सिपाही को हमने दूर खड़ा किया। हम आगे बढ़े। एक घर के सामने रुके, ईंट की दीवारें और ऊपर टीन डाले हुए थे। वहाँ चबूतरे पर एक आदमी बैठा था। ''क्या यहाँ कोई कुंता बहन नाम की महिला रहती है?'' भोसले ने पूछा। उसने अनसुनी कर दी। शायद उसे ऊँचा सुनाई देता होगा, ऐसा सोचकर मैंने ऊँची आवाज में सवाल दोहराया। उस आदमी ने पच्च से थूक दिया और बोला, ''वह रांड!'' भोसले ने एक जोरदार थप्पड़ उसकी कनपटी पर जमा दिया। वह लड़खड़ाया। फिर अपने आपको सँभालकर उठ खड़ा हुआ और जेब से रामपुरी चाकू निकालकर भोसले की ओर दौड़ा। मैंने फौरन उसका हाथ पकड़कर मरोड़ दिया। चाकू गिर गया। भोसले ने दूसरा थप्पड़ लगाया, तब तक सिपाही दौड़ा-दौड़ा चला आया। पीछे से दो-तीन गुंडे आ रहे थे। मैंने पिस्तौल निकाला और दहाड़ा, ''अगर किसी ने आगे आने की कोशिश की तो गोली मार दूँगा। हवलदार, इस कमीने को पुलिस स्टेशन ले जाओ। इसने पुलिस पर हमला करने की कोशिश की है। इसे पुलिस का झटका दिखाओ।'' भोसले चरिया पुलिस का नाम सुनते ही गुंडे भाग खड़े हुए। एक बुजुर्ग खाँसते-खाँसते आगे आया और नम्रतापूर्वक बोला, ''माफ कीजिए साहब, आपको किसकी

तलाश है ?''

''कुंता बहन की।''

''इसी घर में रहती हैं साहब!'' बंद दरवाजे की ओर इशारा किया। ''लेकिन वह बीमार है। आप नाराज मत होइए साहब! लेकिन क्या कुंता बहन से कोई अपराध हुआ है ?''

''नहीं भाई! अपराध-वपराध कुछ नहीं। थोड़ी सी जानकारी लेनी है।'' फिर भोसले को अलग ले जाकर कहा, ''भोसले, आपने अब तक मेरी बहुत मदद की, इसके लिए जितना भी धन्यवाद दिया जाए, वह कम है। अब मैं अकेला ही अंदर जाना चाहता हूँ। कुछ व्यक्तिगत सवाल पूछने हैं। आप साथ रहे तो वह महिला बात करने में हिचकिचाएगी, इसलिए आप बाहर ही···''

''रुक जाता हूँ न सर, इसमें कौन सी बड़ी बात है ? उधर उस पेड़ के नीचे चबूतरे पर बैठता हूँ।''

दरवाजा भिड़ा हुआ था। अंदर गया तो सामने ही खाट पर कुंता बहन लेटी थीं। दरवाजे की आवाज सुनकर उसने आँखें खोलीं। ''कौन है ?'' उन्होंने पूछा। सुमंत, मैं केवल देखता ही रह गया। उस समय मन में क्या-क्या सवाल उठ रहे थे, बता नहीं सकता ? खून की कशिश कहो या कुछ और, मुँह से शब्द निकाला—'माँ'! वह चौंककर उठने का प्रयास करने लगीं तो उन्हें सहारा देकर बिठाया। उन्हें थोड़ा बुखार था।

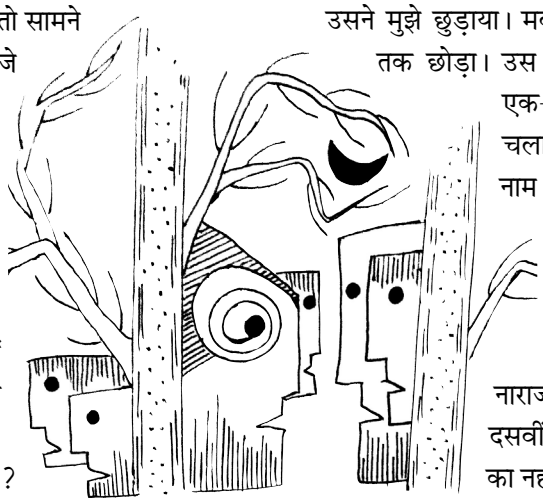

''आप कौन हैं ? मुझे माँ क्यों कहा ? आपका नाम ?''

''माँ, मैं तुम्हारा बेटा हूँ, नागेश।'' वह सर से पाँव तक थरथराई। ''बेटा! मेरा बेटा ?'' वह चक्कर खाकर गिरने लगी तो मैंने उसे सहारा दिया।

''हाँ माँ! होश में आओ माँ, मैं चाहे जिसकी सौगंध खाकर कहता हूँ, मैं तुम्हारा बेटा हूँ।'' वह सँभलकर बैठ गई। ''पानी···'' मैंने उसे पानी दिया। पानी पीकर वह बोली, ''मेरा बेटा! मेरा बच्चा!'' उसके झुर्रियाँ पड़े हाथ मेरा चेहरा सहलाने लगे।

''हाँ माँ, तुमने मुझे श्रीरामपुर के वात्सल्य अनाथ आश्रम में छोड़ा था।''

''हाँ बेटे!'' अब उसकी आँखें भर आईं। ''मैंने, मैंने, चुड़ैल ने अपना बेटा वहाँ दिया था। क्या करती, दूसरा कोई चारा नहीं था।'' मेरे कंधे पर मस्तक रखकर वह आँसू बहाने लगी। मेरा भी दिल भर आया। मैंने उनकी पीठ सहलाते हुए कहा, ''माँ, रो मत, अब तुम मिल गई तो मुझे सबकुछ मिल गया। चलो माँ, अब तुम अपने घर चलो। मैं तुम्हें लेने आया हूँ।''

वह झट से परे हट गई। रोते-रोते बोली, ''नहीं बेटे, मैं कैसे आ सकती हूँ।''

''क्यों ? क्यों नहीं आ सकतीं ?''

''मैं पापी हूँ। अभी मैंने शोरगुल सुना था। किसी ने रांड कहा था। भागमभाग, पुलिस का नाम सब सुना था। मैं डर रही थी। किसी ने कहा, वह झूठ नहीं है। मैं सचमुच वेश्या हूँ।''

वह फिर से आँसू बहाने लगी। मैं भी सुन्न हो गया।

''देखा, तुम भी चुप हो गए। यह शब्द ही ऐसा है, सुनते ही नरक में गिरने जैसा लगता है। मैंने उस नरक में तीस साल बिताए हैं। अब तुमसे क्या छिपाना ? अपनी माँ का अतीत जान लो। फिर निर्णय लेना कि घर ले जाना है या नहीं।''

''मेरा नाम शकुंतला खरोटे, जात—सुनार, नवमी कक्षा में पढ़ती थी, उम्र सतरा साल, एक बार घर जाते समय एक मवाली ने मेरा हाथ पकड़ा। मैं चीखी! बाजू की गली से एक जवान सिपाही आया और उसने मुझे छुड़ाया। मवाली को पीटा, उसके दाँत तोड़ दिए। मुझे घर तक छोड़ा। उस दिन से हमारी जान-पहचान बढ़ती गई। हम एक-दूसरे से कब प्यार करने लगे, पता ही नहीं चला। वह बहुत खूबसूरत और रोबदार था। उसका नाम सोमनाथ कुलकर्णी था। मैं उसे नाथ कहती थी और वह मुझे कुंता। हमने एक-दूसरे को शादी करने का वचन दिया था। उसके घर में उसकी माँ थी। उसने कहा था कि तुम्हें लड़की पसंद है तो मुझे कोई आपत्ति नहीं है। मेरे माता-पिता नाराज थे। लड़का खूबसूरत है तो क्या हुआ ? पढ़ाई दसवीं तक, नौकरी सिपाही की, अपनी जात-बिरादरी का नहीं। एक पुराना घर, यही कुल संपत्ति। लेकिन मेरा इरादा पक्का है। ऐसी ही एक मुलाकात में वह हुआ, जो नहीं होना चाहिए था। मेरा पाँव भारी हुआ, तब मैंने कहा कि हमें जल्द-से-जल्द शादी कर लेनी चाहिए। उसने कहा कि रजिस्टर्ड मैरेज करेंगे। नियमानुसार नोटिस दी। उसके तीसरे दिन किसी अपराधी की तलाश में पाथर्डी गया, वहाँ उसका खून···।'' जिस मवाली से उसने मुझे बचाया था, उसी ने रंजिश में सुपारी देकर उसे मरवाया। मेरा सबकुछ लुट गया। नाथ की माँ हिम्मत हारकर पंद्रह दिन में चल बसी।''

''मेरे माता-पिता मुझसे कहने लगे कि अबॉर्शन करवा लो। मैंने इनकार किया। मुझे मेरे नाथ के प्यार की निशानी सँभालनी थी। मुझे कुलकलंकिनी कहकर घर से निकाल दिया गया। नाथ के घर से जाते हुए भावनाएँ उमड़ पड़ीं। उसी समय घर में से एक वृद्धा बाहर आई। चेहरे से ममतामयी लग रही थी। मुझे बुलाकर कहा कि आओ मेरी बच्ची! तुम मेरे सोमनाथ की पत्नी होनेवाली थीं न ? मैं कमला बुआ, सोमनाथ के पिता की चचेरी बहन। अब शांत हो जाओ। भगवान् की मर्जी के आगे किसी का कुछ नहीं चलता। खैर, अब इतनी धूप में कहाँ जा रही हो ?''

''सहारा ढूँढ़ने!'' मैंने कहा।

''मैं तुम्हें सहारा दूँगी। मेरा भी इस दुनिया में कोई नहीं है। मेरे

साथ नेवासा चलो, वहाँ मैं घरेलू भोजनालय चलाती हूँ। मुझे तुम्हारी मदद मिलेगी।'' बुढ़िया इतने प्यार से कह रही थी कि मैं न नहीं कर सकी और उसके साथ नेवासा चली गई।

बुआजी ने मेरी अच्छे से देखभाल की। उनके भोजनालय में तुम्हारा जन्म हुआ। तुम्हारे जन्म के आठ दिन बाद बुआजी ने कहा, ''शकुंतला, कामगाँव टोके के भगवंत राव आए थे। वे तुमसे शादी करने के लिए तैयार हैं।''

''क्या···शादी?'' मैंने चौंककर पूछा था।

''हाँ, अभी तुम्हारी पूरी जिंदगी पड़ी है। मैं कबतक रहूँगी, तुम अकेली कैसे जिंदगी गुजारोगी? भगवंतराव मेरे जान-पहचान के हैं। बड़े जमींदार हैं। विपुल संपत्ति है। रानी जैसी रहोगी। लेकिन उनकी एक शर्त है। वे कहते हैं कि बच्चे के साथ स्वीकार नहीं करेंगे। बच्चे को अनाथाश्रम···''

''यह नहीं हो सकता।'' मैं चीखी थी।

''चीखो मत! मेरी जबरदस्ती नहीं है। तुम्हारी जिंदगी सँवर जाए, इसलिए कहा था। मुझसे गलती हो गई।''

''नहीं बुआजी, आपने कोई गलती नहीं की। आपने मेरी भलाई के लिए ही कहा था। लेकिन मुझे सोचने के लिए समय दो।''

''सोच लो। अच्छे से सोच-समझकर निर्णय ले लो। भगवंत राव परसों आनेवाले हैं।''

मेरी बदकिस्मती से दूसरे ही दिन बुआजी जलकर मर गईं। चूल्हे पर से कड़ाही उतारने गई और चक्कर आकर चूल्हे पर गिर पड़ीं। सब तरफ तेल फैल गया और बुआजी बुरी तरह झुलस गईं। तुम्हें झूले में रखकर मैं नहाने गई थी। रोटी बनानेवाली बहन बुआजी को बचाने गईं तो वह भी झुलस गई। शोर मचा तो मैं साड़ी लपेटकर बाहर आई। दोनों को अस्पताल ले गई। रोटी बनानेवाली बच गई, पर बुआजी चली गईं। मैं फिर से निराधार हो गई। भगवंतराव आए। 'हाँ' कहने के सिवा मेरे पास कोई विकल्प नहीं था। वे मुझे श्रीरामपुर ले गए। और बेटे, मैंने तुम्हें वत्सलाबाई के आश्रम में···'' माँ की हिचकी बँध गई।

''नाम भगवंत, लेकिन करतूत राक्षस की। उसने मुझसे शादी तो की नहीं, लेकिन धंधे पर लगा दिया। उसका चकला था। आगे का नरकवास बयान नहीं करूँगी। बाद में पता चला कि कमला बुआ सोमनाथ की रिश्तेदार नहीं थी। सोमनाथ के माँ की सहेली थी। मीठी-मीठी बातें करके लड़कियों को बहला-फुसलाकर भगवंतराव के चकले में भेजती थी। लेकिन दुनिया में अच्छे लोग भी होते हैं। जनु भैया के रूप में मुझे देवदूत मिला। उसने मुझे भाई जैसा सहारा दिया। अब वह भी थक गया है।''

''इसी घर में रहता है। कहनेवाला बुजुर्ग ही तुम्हारा भाई है न?''

''हाँ, वही।''

''सुमंत, मैं सुन्न हो गया था। क्या कहें, क्या करें? कुछ समझ में नहीं आ रहा था। मन में तूफान उठा था। अंत में खून की कशिश प्रभावी सिद्ध हुई। मन में विचार आया कि जो भी हो, जैसी भी हो, उसने मुझे जन्म दिया है। बदकिस्मती से आज उसकी यह हालत हुई है। उसे इस हालात में छोड़कर नहीं जाना चाहिए।'' मैंने माँ को गले लगाया और कहा, ''जो हुआ, उसे भूल जाओ। अब घर चलो। तुम्हारी बहू बहुत ममतामयी और दिलवाली है। दो पोते और एक पोती है। उनके साथ खुशी से रहो।''

''ऐसी कोई भी चीज साथ मत लेना, जो तुम्हारे अतीत की याद दिलाए। उठो, तुम थोड़ा चल सकोगी न? मैं गाड़ी मँगवाता हूँ।''

मैंने बाहर आकर भोसले से कहा, ''भोसले पुलिस स्टेशन फोन करके जीप भेजने के लिए कहो, मैं कुंता बहन को साथ ले जा रहा हूँ।''

''ओ.के. सर!''

मैं माँ को लेकर बाहर आया। बूढ़ा जनु भैया दूर खड़ा था। माँ ने इशारे से उसे बुलाया। हाथ जोड़कर भरे गले से कहा, ''जनु भैया, मैं मेरे बेटे के साथ जा रही हूँ। आशीर्वाद दीजिए।''

''जाओ बहन, कहीं भी जाओ, सुखी रहो!'' फिर आँसू पोंछकर, हाथ जोड़कर मुझसे कहा, ''मेरी बहन का खयाल रखना, बेचारी ने बहुत कुछ सहा है।'' आगे कुछ कह नहीं पाया।

मैंने कहा, ''जनु मामा, आप चिंता मत कीजिए। मैं माँ की हैसियत से ले जा रहा हूँ।'' जीप आई। माँ को बिठाया। भोसले से कहा, ''गाड़ी डॉक्टर के पास ले चलो। उससे पहले कोई कपड़े की दुकान देखो तो···'' दुकान नजदीक ही थी। वहाँ से शॉल खरीदी, माँ को ओढ़ाई। दवाखाने में ले गया। डॉक्टर ने बताया कि चिंता की कोई बात नहीं है, फ्लू है। दवाई देता हूँ। दो दिन में आराम मिलेगा।

भोसले आग्रह कर रहा था। दो-चार दिन श्रीरामपुर मेरे घर चलिए और माँजी की तबीयत ठीक होने के बाद जाइए। लेकिन चर्चा न हो, इसलिए बँगले पर रहा। भोसले दिलदार आदमी था, दिन में दो बार आता था। दवाइयाँ, फल ले आता था। तीन दिन में माँ ठीक हो गई और मैं मेरी सगी माँ को ले आया। नंदा ने अपनी माँ जैसा उसका स्वागत किया। माँ उसे गले लगाकर रो पड़ी थी।

''नागेश, नंदा भाभी ने जिस तरीके से माँ को चाय के लिए पूछा था, उससे मैं समझ गया था कि सत्य कटु होता है। लेकिन बड़े दिल से और दृढ़ निश्चय से स्वीकारने पर उसकी कड़वाहट कम हो जाती है। उसमें ममता की मिठास आ जाती है।''

''फिर भी एक टीस है। मैंने जो किया, क्या वह सही है?''

''तुमने बिल्कुल सही किया, नागेश। मैं तुम्हारी मुँहदेखी तारीफ नहीं कर रहा हूँ। फिर भी इतना जरूर कहूँगा कि तुम्हारे जैसा दिलवाला दोस्त मुझे मिला, इसकी खुशी है। नागेश, आई एम रियली प्राउड ऑफ यू···!''

फ्लैट नं. ३०३, बिल्डिंग डी-२
शिवसागर को.ऑप. सोसाइटी
माणिक बाग, सिंहगढ़ रोड
पुणे-४११०५१
दूरभाष : ९९२३०११६१३

छायावाद के सौ वर्ष

● वेद प्रकाश

साहित्य अतीत, वर्तमान तथा भविष्य की कड़ियों को जोड़ता है। आज जब भारतवर्ष का जनमानस नए संकल्पों के साथ 'नए भारत' की ओर अग्रसर हो रहा है, ऐसे में समृद्ध साहित्य सरणियों का अवगाहन नई ऊर्जा देने का काम करेगा। हिंदी साहित्य की समृद्धता तथा उसका विविध आयामी अवदान सर्वविदित है। हिंदी साहित्य के आधुनिक काल का तीसरा महत्त्वपूर्ण कालखंड सन् १९१८ से १९३८ तक माना जाता है, जिसे विद्वानों ने 'छायावाद' के नाम से अभिहित किया। इसके बाद भी कई साहित्यिक वादों का सिलसिला जारी रहा, क्योंकि साहित्य भी समय की गति के साथ-साथ गतिमान रहता है। छायावाद का आविर्भाव ऐसे समय में हुआ, जब स्वतंत्रता आंदोलन निरंतरता तथा निर्णायक दिशा की ओर बढ़ रहा था। गांधीजी इस आंदोलन में सक्रियता से आगे बढ़ रहे थे, विभिन्न क्रांतिकारियों तथा समाज-सुधारकों के प्रयासस्वरूप जन-जागरण के स्वर फूट रहे थे। १८५७ के पहले स्वतंत्रता संग्राम के पश्चात् चहुँमुखी बदलाव तथा क्रांति फैलती जा रही थी। साहित्यिक दृष्टि से भारतेंदु युग का नवजागरण, द्विवेदी युग के जागरण सुधार से होते हुए जन-आंदोलन का रूप ले रहा था। ऐसे में छायावाद का रचनाकार युग विशेष की विभिन्न परिस्थितियों को अपने व्यक्तित्व तथा कृतित्व से वाणी दे रहा था। भारतेंदुयुगीन रचनाकार युगीन समस्याओं पर समस्या उद्घाटन तथा विलाप करता दिखाई देता है—

रोवहु सब मिलि, आवहु भारत भाई।
हा! हा! भारत-दुर्दशा न देखी जाई।

वहीं द्विवेदी युग का रचनाकार युगीन समस्याओं पर गहन चिंतन का वातावरण निर्माण करता है—

हम कौन थे, क्या हो गए हैं और क्या होंगे अभी,
आओ, विचारें आज मिलकर ये समस्याएँ सभी।

किंतु छायावाद का रचनाकार तद्युगीन समस्याओं पर 'विजयी भाव' से आगे बढ़ने का आह्वान करता है। वह जन-सामान्य को बताता है—

बनो संसृति के मूल रहस्य, तुम्हीं से फैलेगी वह बेल
विश्व भी सौरभ से भर जाए, सुमन के खेलो सुंदर खेल।
और यह क्या तुम सुनते नहीं, विधाता का मंगल वरदान
शक्तिशाली हो, विजयी बनो, विश्व में गूँज रहा जय-गान।
डरो मत, अरे अमृत संतान! अग्रसर है मंगलमय वृद्धि
पूर्ण आकर्षण जीवन केंद्र खिंची आवेगी सकल समृद्धि।

सुपरिचित लेखक। अब तक चार पुस्तकें प्रकाशित। तथा विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में शोध लेख प्रकाशित। मध्यकालीन साहित्य के अध्ययन-अध्यापन में विशिष्ट अभिरुचि। संप्रति हिंदी विभाग, हंसराज महाविद्यालय, दिल्ली में असिस्टेंट प्रोफेसर।

छायावाद के व्यापक साहित्य पर सूक्ष्मता से विचार करने पर हम पाते हैं कि छायावाद युग भारत के लिए अस्मिता की खोज का युग है। सदियों की दासता के कारण भारतीय जनता आत्मकेंद्रित होती हुई रूढ़िग्रस्त हो गई थी। ब्रिटिश साम्राज्यवादियों के आगमन ने देश में निराशा का वातावरण पैदा कर दिया था, जिसके कारण रूढ़ियों में जकड़ी देश की आत्मा पूरी शक्ति और उद्वेलन के साथ जाग उठी थी। पाश्चात्य शिक्षा में, विशेषकर अंग्रेजी ने देश के बुद्धिजीवियों को नए ढंग से विचार करने पर मजबूर कर दिया था। हम पाते हैं कि भारत की आम जनता के मन से पराधीनता के अपमान को भुलाने के लिए छायावाद के रचनाकारों ने अतीत के स्वर्ण युग का सहारा लिया। उन्होंने अतीत के गौरवगान के सहारे सिद्ध किया कि भारतवर्ष किसी भी रूप में कमजोर नहीं है। वर्तमान में छाई निराशा को उन्होंने अतीत के गौरवगान से दूर करने का प्रयास किया, जिसका परिणाम यह हुआ कि इस देश का जन-सामान्य, जो जाति तथा धर्म के अलग-अलग बिंदुओं पर विभाजित था, वह अतीत की पृष्ठभूमि पर एक हो गया। इस प्रकार छायावाद के रचनाकारों ने अतीत के गौरवगान से संपूर्ण देश में एकता तथा राष्ट्रीयता के भाव का सूत्रपात किया—

वही है रक्त, वही है देह, वही साहस है, वैसा ज्ञान।
वही है शांति, वही है शक्ति, वही हम दिव्य आर्य संतान।
जिएँ तो सदा, उसी के लिए, यही अभिमान रहे यह हर्ष।
निछावर कर दें हम सर्वस्व, हमारा प्यारा भारतवर्ष।

इस भाव को लेकर छायावाद का रचनाकार एक नई निर्मिती की ओर बढ़ता है। छायावाद की महत्त्वपूर्ण उपलब्धि है इस काल की राष्ट्रीय-सांस्कृतिक कविता है। इस काल के कवियों ने भारत की आंतरिक विसंगतियों और विषमताओं को दूर करने के लिए जन-सामान्य का आह्वान किया और दूसरी ओर जनता को विदेशी शासन से मुक्ति पाने के लिए स्वाधीनता संग्राम में कूद पड़ने की प्रेरणा दी। माखनलाल चतुर्वेदी, रामनरेश त्रिपाठी, बालकृष्ण शर्मा नवीन, सुभद्राकुमारी चौहान

आदि महत्त्वपूर्ण रचनाकारों ने इस देश की जनता में आत्मविश्वास का संचार किया। जयशंकर प्रसाद, सूर्यकांत त्रिपाठी निराला, महादेवी वर्मा तथा सुमित्रानंदन पंत छायावाद के आधार-स्तंभ हैं। इस काल की कालजयी रचनाओं में जयशंकर प्रसाद की झरना, आँसू, लहर तथा कामायनी महत्त्वपूर्ण हैं, इसके साथ-साथ सूर्यकांत त्रिपाठी निराला की अनामिका, परिमल, तुलसीदास, सरोज स्मृति और राम की शक्तिपूजा विशेष महत्त्व रखती हैं। इसके अतिरिक्त सुमित्रानंदन पंत, जिनकी वीणा, उच्छ्वास, ग्रंथि तथा गुंजन विशिष्ट काव्य कृतियाँ हैं। महादेवी वर्मा की नीहार, रश्मि, नीरजा तथा सांध्य गीत महत्त्वपूर्ण काव्य कृतियाँ हैं। कविता के साथ-साथ इस कालखंड में नाटकों का भी विशेष महत्त्व है, जिसमें जयशंकर प्रसाद का अजातशत्रु, चंद्रगुप्त, स्कंदगुप्त तथा ध्रुवस्वामिनी। हरिशंकर प्रेमी का स्वर्ण विहान, रक्षाबंधन, पाताल विजय तथा प्रतिशोध। लक्ष्मी नारायण मिश्र का अशोक, संन्यासी, मुक्ति का रहस्य, सिंदूर की होली आदि।

विभिन्न क्षेत्रों में राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय स्तर पर भारत ने अपनी नई पहचान स्थापित की है, जिसके मूल में जन-जागृति अथवा जनभागीदारी ही कही जा सकती है। आज जब छायावाद के १०० वर्ष पूरे हो चुके हैं तो आवश्यकता है उस महत्त्वपूर्ण तथा समृद्ध साहित्य के विवेचन-विश्लेषण करने की। क्योंकि इस साहित्य में मानव जीवन के लिए एक महत्त्वपूर्ण संदेश है, इसमें वसुधैव कुटुंबकम् तथा बहुजन हिताय बहुजन सुखाय का भाव भी निहित है।

छायावाद में उपन्यास विधा का भी काफी विकास मिलता है, जिसमें उपन्यास सम्राट् मुंशी प्रेमचंद का सेवासदन, प्रेमाश्रम, रंगभूमि, कायाकल्प, निर्मला, गबन, कर्मभूमि तथा गोदान आदि महत्त्वपूर्ण हैं, इसके अतिरिक्त इस युग में विश्वंभरनाथ शर्मा कौशिक, चतुरसेन शास्त्री, प्रताप नारायण श्रीवास्तव तथा शिवपूजन सहाय, बेचन शर्मा उग्र, भगवतीचरण वर्मा आदि महत्त्वपूर्ण उपन्यासकार भी सामने आए। कहानी विधा की दृष्टि से इस युग में मुंशी प्रेमचंद की सैकड़ों कहानियाँ सामने आईं, जिनमें पूस की रात, कफन, ईदगाह, नशा, आप बीती तथा परीक्षा महत्त्वपूर्ण हैं। जयशंकर प्रसाद का कहानी संग्रह प्रतिध्वनि, आकाशदीप तथा आँधी में विभिन्न कहानियों का संग्रह मिलता है। इसी प्रकार जैनेंद्र कुमार की भी अनेक कहानियाँ छायावाद की पृष्ठभूमि में लिखी गईं। निबंध साहित्य की दृष्टि से आचार्य रामचंद्र शुक्ल, पदुमलाल पुन्नालाल बख्शी, शांतिप्रिय द्विवेदी, शिवपूजन सहाय, बेचन शर्मा उग्र तथा गुलाब राय आदि ने अनेक महत्त्वपूर्ण निबंध लिखे। छायावाद की एक महत्त्वपूर्ण विशेषता यह भी कही जा सकती है कि इस काल में कविता, उपन्यास, कहानी और निबंध आदि के साथ-साथ जीवनी साहित्य आत्मकथा, यात्रा-वृत्तांत, संस्मरण, रेखाचित्र आदि का भी एक विपुल भंडार मिलता है। छायावाद के रचनाकारों के व्यक्तित्व का एक महत्त्वपूर्ण पक्ष यह भी है कि वे क्रांतिकारी, समाज-सुधारक तथा साहित्यकार के साथ-साथ पत्रकार के रूप में भी विख्यात हुए। उस युग की प्रमुख पत्र-पत्रिकाओं में चाँद, प्रभा, माधुरी, सुधा, कल्याण, आदर्श, साहित्य संदेश, समन्वय, मतवाला, जागरण, भारत, कर्मवीर, देश, हिंदू पंच, श्रीकृष्ण संदेश, हिंदी नवजीवन, आज तथा कोलकाता समाचार आदि विशेष रूप से प्रसिद्ध हैं।

छायावाद की संकल्पना के मूल में मुकुटधर पांडे द्वारा लिखित श्री शारदा पत्रिका में छपे 'हिंदी में छायावाद' निबंधों का विशेष महत्त्व है। वे लिखते हैं, ''छायावाद की आवश्यकता हम इसलिए समझते हैं कि उससे कवियों को भाव प्रकाशन का एक नया मार्ग मिलेगा। इस प्रकार के अनेक मार्गों, अनेक रीतियों का होना ही उन्नत साहित्य का लक्षण है।'' छायावाद की विपुल साहित्य राशि का अवलोकन और विश्लेषण करने के उपरांत हम पाते हैं कि यह पूरा कालखंड साहित्यिक दृष्टि से बहुत महत्त्वपूर्ण है। इस काल में प्रकृति चित्रण, नारी की नए रूप में प्रतिष्ठा, विज्ञान का प्रसार, अतीत का गौरव गान आदि अनेक प्रयासों से भारत के लिए अस्मिता की खोज करने का प्रयास किया गया।

यह देश अपनी परंपराओं में कभी भी हीन नहीं रहा, लेकिन ब्रिटिश शासन ने इस देश के जनमानस में हीनता के बीज गहरे डाल दिए थे, हिंदी साहित्य के इस महत्त्वपूर्ण काल में उस खोई हुई अस्मिता को गौरवशाली अतीत के माध्यम से पुनः स्थापित करने का प्रयास किया गया। अनेक विद्वानों का मानना है कि १८५७ के बाद भारत में आधुनिकीकरण की प्रक्रिया का आरंभ हुआ। जब हम विचार करते हैं तो पाते हैं कि इस कालखंड में, यानी १८५७ के बाद उपजा आधुनिकीकरण का यह दौर विदेशी शासन के प्रभाव से अधिक प्रभावित है, किंतु आज जब हम वर्ष २०१८ में 'नए भारत' अथवा 'न्यू इंडिया' की संकल्पना के स्वर मुखर होते पाते हैं तो हम देखते हैं कि यह नया भारत वर्तमान परिस्थितियों में उपजा है। जैसे १८५७ के बाद जनमानस की सक्रिय भागीदारी का आह्वान, विचार तथा चिंतन प्रस्तुत किया गया और उसके जागरण की बात को महत्त्व दिया गया, उसी प्रकार आज पुनः जन-भागीदारी के द्वारा नए भारत के निर्माण की संकल्पना उभरकर सामने आई है। विभिन्न क्षेत्रों में राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय स्तर पर भारत ने अपनी नई पहचान स्थापित की है, जिसके मूल में जन-जागृति अथवा जनभागीदारी ही कही जा सकती है। आज जब छायावाद के १०० वर्ष पूरे हो चुके हैं तो आवश्यकता है उस महत्त्वपूर्ण तथा समृद्ध साहित्य के विवेचन-विश्लेषण करने की। क्योंकि इस साहित्य में मानव जीवन के लिए एक महत्त्वपूर्ण संदेश है, इसमें वसुधैव कुटुंबकम् तथा बहुजन हिताय बहुजन सुखाय का भाव भी निहित है। आज जब 'सर्वे भवन्तु सुखिनः' की कामना तथा भावना की आवश्यकता महसूस की जा रही है, ऐसे में छायावाद की रचनाएँ अथवा छायावाद का चिंतन बहुत महत्त्वपूर्ण तथा प्रासंगिक है।

९८, पॉकेट-सी,
सरिता विहार, नई दिल्ली-११००७६
दूरभाष : ९८१८१९४४३८

संस्मरण

···किसी से अब क्या कहना

● कुमार अनिल

कुछ ही दिन तो शेष बचे हैं इस साल को बीतने में। कई महान् साहित्यकारों, कलाकारों का शताब्दी वर्ष, जो याद किए गए, वे भी धन्य थे, जो नहीं याद किए गए, वे भी। 'तुम्हें याद न मेरी आई किसी से अब क्या कहना' हिंदी फिल्म का यह चालू टाइप गीत आचार्य शिवनाथ के बारे में सोचते हुए आज बहुत याद आ रहा है। अपनी समझ की न्यूनता के कारण भी इस गीत को मैं क्लासिक नहीं समझ पा रहा, ऐसा भी हो सकता है। हिंदी के किसी सुविज्ञ या चालू टाइप रचनाकार को ही आचार्य शिवनाथ की याद क्यों नहीं आई? यह प्रश्न हृदय को मथ रहा है। मैं क्या कम चालू हूँ? मैं भी तो बैठा था त्रिलोचन पर लिखने, उसी उपक्रम में पत्र-पत्रिकाओं में छपे पत्र, साक्षात्कार, कुछ लेखों को उलट-पुलट रहा था कि अचानक मेरी नजर पड़ी सन् '९५ में साक्षात्कार पत्रिका में छपे शिवनाथजी के एक साक्षात्कार पर, प्रश्नकर्ता थे डॉ. शैलेंद्र कुमार त्रिपाठी।

स्व. आचार्य शिवनाथजी

देख रहा हूँ विष्णुचंद्र शर्मा के बिखरे हुए कई पत्रों को, जो शैलेंद्र को लिखते हुए निर्देश देते हैं—''शिवनाथजी पर सामग्री भेजो, शिवनाथजी के पास पड़े महत्त्वपूर्ण लोगों के पत्र भेजो, शिवनाथजी से साहित्य के उठते प्रश्नों पर बात करो और 'सर्वनाम' के लिए भेजो!'' आखिर यह जिद शिवनाथजी के लिए क्यों और यह जिद शांतिनिकेतन में केवल शैलेंद्र से ही क्यों? शांतिनिकेतन, शिवनाथ, शैलेंद्र कुछ दिन गुत्थमगुत्था रहे साहित्य के निकेतन में, रतनपल्ली में, फिर लिया गया उनका आखिरी साक्षात्कार, जिसके बाद उनके बोलने-सुनने की शक्ति भी जाती रही और फरवरी '९८ में वे हमसे विदा हो गए। काशी से ही आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के संपर्क में आए आचार्य शिवनाथ शांतिनिकेतन में भी आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के सहयोगी रहे। आचार्य शिवनाथ के सिवाय यह कौन बता सकता था कि उनको कक्षा में पढ़ानेवाले हिंदी आलोचना के मेरुदंड आचार्य शुक्ल 'रामचंद्रिका' में थोड़ा-बहुत खुलते थे और यहाँ खुलने की गुंजाइश भी तो थी। असल में बात यह है कि शुक्लजी ने अधिक न पढ़ा हो, यह कहा जा सकता है या हो सकता है, पर किसी वस्तु को सही रूप में पकड़ लेने की जो क्षमता उनके पास है—हिंदी में कम-से-कम मैं नहीं जानता कि किसी के पास है···किसी सामग्री को किस तरह संयोजित किया जाए कि उसका साहित्यिक मूल्य अक्षुण्ण रहे, उसका साहित्यिक मूल्यांकन बरकरार रहे, यह उनसे सीख ली जा सकती है।

कक्षा में पीतांबर दत्त बड़थ्वाल और आचार्य शुक्ल से पढ़ने के बारे में वे बताते थे कि कक्षा में 'कामायनी' मैंने शुक्लजी से ही पढ़ी है। एक विशेषता थी उनमें, कुछ लोग यह समझते थे कि वे आधुनिक काव्य के विरोधी हैं, किंतु ऐसी बात नहीं है। आधुनिक काव्य को समझने और समझाने का जो विवेक उनके पास था, उससे सीखा जा सकता है। वे और बड़थ्वालजी, दोनों ने मुझे पढ़ाया है। बड़थवालजी का क्लास बड़ा ही जिज्ञासा से भरा हुआ होता था। उनकी प्रत्येक क्लास में कोई-न-कोई नई बात मालूम होती रहती थी। असल में वे रिसर्चर थे, जिसे 'शोधक' कहा जाता है, इसलिए एक-एक शब्द पर नई-नई बातें उठा करती थीं। आचार्य शुक्ल का क्लास बहुत ही संक्षिप्त और सीमित हुआ करता था। वे जानते थे कि किस क्लास को कितना समय देना चाहिए। पात्रता पर उनकी दृष्टि रहती थी।

आचार्य शुक्ल की दृष्टि तो पात्रता पर रहती थी, पर क्या आचार्य शुक्ल और आचार्य द्विवेदी जैसे मनीषियों ने यह कल्पना की होगी कि रामचंद्र शुक्ल जैसे मनीषी पर पहला ग्रंथ लिखनेवाले साधक के शताब्दी वर्ष में एक आलेख तक नजर नहीं आएगा। यहाँ तो 'विश्व का सर्वाधिक प्रसारवाला दैनिक' और 'तरक्की को चाहिए नया नजरिया' जैसे वाक्यों को टैगलाइन बनाए हुए बड़े-बड़े समाचार-पत्र और उनके साहित्य संपादक को 'किस पर लिखवाना है और किससे लिखवाना है' की सूची अपने यहाँ टाँग चुके हैं। इस काकस में शिवनाथजी जैसे लोग नहीं घुस सकते। आचार्य त्रिलोचन, जिनके शताब्दी वर्ष पर उन्हें याद किया गया, वे शिवनाथजी को याद करते हुए कहते हैं कि शिवनाथजी चेतना के उदयकाल से ही लेखक जाने जाते थे और सामान्य पाठकों में भी उनकी मर्यादा बनती जा रही थी। लेखन का यह ढंग उन्होंने जीवन भर जारी रखा। बनारस में रहते हुए उन्होंने रामचंद्र शुक्ल पर एक पुस्तक लिखी और यह पुस्तक बहुत महत्त्व की है। यह बनारस में ही प्रकाशित हुई थी और बनारस के पाठकों में इस पुस्तक के प्रति बराबर सम्मान रहा। शांतिनिकेतन में रहते हुए उन्होंने अच्छी तरह से बँगला पढ़ी और रवींद्रनाथ के काव्य पर एक बढ़िया पुस्तक तैयार की। यह पुस्तक अत्यंत उपयोगी है।

'आलोचना' पत्रिका के संपादक और मार्क्सवादी आलोचना के दिग्गज शिवदान सिंह चौहान शिवनाथजी को पत्र लिखकर कहते हैं कि ''जिन व्यापक उद्देश्यों को सामने रखकर 'आलोचना' का जन्म हो रहा है, उनकी पूर्ति के लिए आप जैसे मेधावी और विचारशील आलोचक का सहयोग अवश्य मिलेगा, क्योंकि मेरा विश्वास है कि आज के दिन

हम सब का यह सम्मिलित कर्तव्य है कि हिंदी में गंभीर 'आलोचना' साहित्य के निर्माण में अपना भरपूर योग दें। इसलिए 'आलोचना' पत्रिका के माध्यम को आप अपना ही जानकर अपनाएँ, मेरा यह आग्रह है!''

यह एक समर्पित संपादक का आग्रह था एक मेधावी और विचारशील आलोचक के लिए, जिसका भरपूर निर्वहन शिवनाथजी द्वारा किया गया। और जीवन की सांध्य वेला में 'आलोचना' के करीब सैकड़ों अंक (अठारह जिल्द) अपने स्नेहभाजन डॉ. शैलेंद्र को पढ़ने को दे दिए। पर हाय रे विधि का विधान! शांतिनिकेतन के विश्वभारती के हिंदी विभाग का यह नवारूढ़ विभागाध्यक्ष असमय कालक्षेप के कारण हिंदी के द्रोणाचार्यों से अपने कमरे में रखी उस व्यक्तिगत निधि की रक्षा नहीं कर सका।

तीन पत्र, तीनों हिंदी के महारथी—शिवदान सिंह चौहान, नामवर सिंह, नंददुलारे वाजपेयी शिवनाथजी से क्रमशः 'आलोचना' में लिखने की बात, थीसिस देखे जाने की बात और उनकी पुस्तक 'मीमांसिका' एवं 'हिंदी नाटक' पढ़ने की बात सन् १९५१ में करते हैं तो यह लगता है कि जिस मेधावी और विचारशील समालोचक को ऐसे महारथी सम्मान देते थे, चालू और सत्ता के गलियारों वाले बड़े नाम इन्हें याद करने की भी जरूरत नहीं समझते।

सुपरिचित लेखक। पत्र-पत्रिकाओं में आलेख प्रकाशित। आकाशवाणी से दर्जनों वार्त्ताएँ प्रसारित। 'सरयू-धारा' साहित्यिक लघु-पत्रिका का दस वर्षों तक सहयोगी संपादक। संप्रति उ.प्र. राज्य सेवा में अधिकारी।

शिवनाथजी चले गए, असमय शैलेंद्र भी। शांतिनिकेतन स्थित रतनपल्ली में दोनों की बातें गूँज रही होंगी, पर सुननेवाला कौन? मैं देख रहा हूँ—डॉ. शैलेंद्र द्वारा लिया गया उनका आखिरी साक्षात्कार और उन्हीं को लिखे करीब दर्जनों पत्र, जिनकी लिखावट मेरी समझ से परे ठीक उसी तरह, जैसे उन्हें याद न करना।

अपने शताब्दी वर्ष में एक अदद लेख के लिए तरसनेवाले इस आचार्य के लिए कौन पूरी करेगा? त्रिलोचनजी की यह साध—'शिवनाथजी के विषय में शांतिनिकेतन में ही रहनेवाला कोई उनकी जीवनी लिखने के लिए आए तो यह अच्छी बात होगी और पाठक जानेगा कि उनके साहित्यकार कैसे थे और क्या कर गए!' सा.अ.

६४-जी, खरैया पोखरा बशारतपुर
गोरखपुर-२७३००४
दूरभाष : ०९४५२२१२०५८

जीवन को संगी बना लो

गीत

• गौतम अरोड़ा 'सरस'

भव प्रत्यय

अक्षर ज्ञान नहीं कुछ मुझको कवि कैसे बन पाऊँगा,
चयन बिना मधुरिम शब्दों के कैसे गीत बनाऊँगा;
अक्षर ज्ञान नहीं कुछ मुझको कैसे कवि बन पाऊँगा?

भाव उमड़ते हैं दिल में पर व्यक्त नहीं कर सकता हूँ,
शब्दों की ही खोजबीन में व्याकुल नित्य भटकता हूँ,
कहाँ मिलेंगे शब्द सलोने कैसे उन्हें सजाऊँगा;
नहीं पता पथ शब्दों का फिर क्या कविता गढ़ पाऊँगा,
अक्षर ज्ञान नहीं कुछ मुझको कैसे कवि बन पाऊँगा?

ध्रुव रचना संसार है मन यह कैद है घने अँधेरे में,
लगता यह जीवन है नीरस, बिना शब्द के पहरे में,
जोड़ के आखर-आखर कैसे गीत सृजन कर पाऊँगा;
ज्ञान मिलेगा कैसे, लेखन धारा 'सरस' बहाऊँगा,
अक्षर ज्ञान नहीं कुछ मुझको कैसे कवि बन पाऊँगा?

शब्द कोई ऐसे चुभते जो अनुभव हमें कराते हैं,
आलोकित होगा अंतस यह हमको धैर्य दिलाते हैं,
रोम-रोम है पुलकित सारा कवि मैं अब बन जाऊँगा;
शब्द सार को आत्मसात् कर फिर नवगीत बनाऊँगा,
अक्षर ज्ञान नहीं कुछ मुझको कैसे कवि बन पाऊँगा?

किलकारी

मटक-मटककर मुनिया बोली
मैं मोटर में जाऊँगी,
घूमूँगी बाजार में पूरे
और खिलौने लाऊँगी।

खेलूँगी सखियों के संग मैं
उनको सब दिखलाऊँगी,
बड़े प्यार से पापा ने
दिलवाया है बतलाऊँगी।

रोज सुबह अपनी गुड़िया को
साबुन से नहलाऊँगी,
सुंदर कपड़े पहनाकर
फिर काजल उसे लगाऊँगी।

बोलूँगी फिर मम्मी से मैं
गुड़िया भूखी है मेरी,
जल्दी से इसको दो खाना
नहीं करो कुछ तुम देरी।

खेल-खेल में गुड़िया को मैं
पढ़ना भी सिखलाऊँगी,
रोज रात को अपने संग
बिस्तर पर उसे सुलाऊँगी।

गीतामृत

शब्द-शब्द सँजोकर देखो
मन के भाव पिरोकर देखो,
होगा जीवन मधुमय-रसमय
गीत में हृदय डुबोकर देखो।

गीत नई ऊर्जा देता है
पीड़ा मन की हर लेता है,
स्वस्थ मनुज मस्तिष्क यह करता
नव जीवन संबल देता है।

गीत की पावन उज्ज्वल धारा
निर्मल करती मन चौबारा,
गीतों में है मंदिर-मसजिद
गीत में गिरजा और गुरुद्वारा।

गीत में जीवन की अभिलाषा
मानव की आशा-प्रत्याशा,
अर्थ समाहित इसमें कितने
गीत में जीवन की परिभाषा।

जैसे मलय-समीर सुहावन
जैसे गंगा-यमुना पावन,
एक अलौकिक सुख देता है
गीत 'सरस' मधुरिम मनभावन।

गीत को जीवन मीत बना लो
जीवन को संगीत बना लो,
गीत से जन-मन को मोहित कर
द्वेष-घृणा को प्रीत बना लो।

सा.अ.

के ६१/१०३-६७,
आर्य समाज भवन
बुलानाला, वाराणसी-२२१००१
(उ.प्र.)
दूरभाष : ९४१५३०३२२४

प्रथम प्रवृत्ति

मूल : **एहसान मुसलिफ बजुर्ग**

अनुवाद : **भद्रसैन पुरी**

तूरीरी बगदाद का धनी नागरिक था। वह अपने भले कामों के कारण हर जगह प्रसिद्ध था। वह निर्धनों की केवल इस हद तक सहायता नहीं करता था कि उनके विलासितापूर्ण जीवन की संभावनाएँ कम हों और वे सादा जीवन व्यतीत करें, बल्कि जो भी दुखिया उसके पास आता था, उसकी शिकायतों को उत्कट और विनीत भाव से सुनता, अच्छे शब्दों में सांत्वना देता और हर संभव तरीके से सहायता करता था।

उसने एक हजार एक छोटे-बड़े दु:खों को, जो मानव जीवन का बहुत बड़ा हिस्सा बनाते हैं, ईश्वरीय इच्छा से सहन किया। वह अति सहनशील था और यह जानकर कभी क्रुद्ध नहीं हुआ था कि सब लोग एकमत नहीं हैं। चूँकि वह स्वयं कठिन और अतुल्य सदाचारी था और चूँकि प्रत्येक व्यक्ति की हार्दिक इच्छा होती है कि बाकी मानव जाति उससे तुच्छ है, वह चाहता था कि सभी लोग उस जैसे हो जाएँ।

झगड़ालू स्त्री से विवाहित वह उसके प्रति विश्वसनीय रहा; उसके बुरे स्वभाव को क्षमा करता रहा और उसे कभी महसूस नहीं होने दिया कि वह न तो युवा थी और न ही सुंदर। लेखक और कवि होते हुए वह अपने विरोधियों की सफलता से प्रसन्न होता था और नम्र एवं ईमानदार भावों से उनके प्रति मंगलकामना और मित्रता दिखाता था।

एक वाक्य में कहा जाए तो उसका जीवन पूर्ण करुणा, मधुरता, अनुराग एवं निस्स्वार्थता से भरा था और वह एक ही समय में संत और भद्र पुरुष माना जाता था।

फिर भी उसके चेहरे पर वह स्थिरता नहीं थी, जो प्राय: संत लोगों की आकृति का गुण माना जाता है। वह उस आदमी के चेहरे की तरह पंक्तिबद्ध था, जिसे तीव्र उत्कंठा ने हिलाकर रख दिया हो अथवा किसी गुप्त मानसिक वेदना ने कष्ट दिया हो। वह प्राय: आँखें झुकाए खड़ा देखा जाता था, ताकि वह अपने आपको केंद्रीभूत कर सके अथवा लोगों को अपने विचार जानने से रोक सके, परंतु कोई भी इस ओर ध्यान नहीं देता था।

बगदाद के निकट ही मैत्रया नामक एक चमत्कारी फकीर रहता था, जिसके स्थान पर उपासना करने के लिए कई तीर्थयात्री आते थे। मैत्रया अपने आपको सामान्य मानव स्थितियों से ऊपर उठाकर इस अचलता से रहता था कि चिड़ियों ने उसके कंधों पर घोंसले बना लिये थे। पवित्र गायों की दुम की तरह उसकी दाढ़ी अपवित्र थी और उसकी कमर तक पहुँचती थी; उसका शरीर सूखे वृक्ष के तने की तरह था। अपने लक्ष्यानुसार वह नब्बे वर्ष तक जीवित रहा।

एक दिन उसने एक तीर्थयात्री को कहते सुना—

''तूरीरी ओरमुज का अवतार मालूम पड़ता है, वह कितना अच्छा है। यदि ऐसा आदमी जो कुछ वह करना चाहता है, करे तो पृथ्वी से तमाम दु:ख समाप्त हो जाएँ।''

मैत्रया की अचलता और कठोर हो गई। यह प्रत्यक्ष था कि पवित्र आदमी ने अपना ध्यान सीधा ओरमुज से लगा लिया था। कुछ क्षणों तक सोचने के उपरांत उसने तीर्थयात्री से कहा—

''मैं ओरमुज से यह नहीं माँग सकता कि वह तूरीरी को उसकी समस्त इच्छाएँ पूरी करने की शक्ति दे, क्योंकि तब वह स्वयं परमात्मा बन जाएगा, परंतु ओरमुज ने अपनी कृपा से आज्ञा दे दी है कि कल से उसके जीवन की समस्त परिस्थितियों में उसकी प्रथम प्रवृत्ति पूरी हो जाएगी।''

''यह तो एक ही बात है!'' तीर्थयात्री ने कहा, ''तूरीरी की अन्य इच्छाओं की तरह उसकी प्रथम प्रवृत्ति भी उदार और दयालु होगी। पूज्य मैत्रया, तुमने मुझे वह तथ्य बताया है, जो बहुत से मनुष्यों की प्रसन्नता का कारण बनेगा और मैं तुम्हें अपना धन्यवाद देता हूँ।''

यदि मैत्रया की दाढ़ी कम घनी होती तो तीर्थयात्री उसके पथरीले होंठों पर मुसकराहट की छाप देख सकता, परंतु फकीर शीघ्र ही अपनी अनंत पूजा के स्वप्न देखने लगा।

उन दयालुतापूर्ण कामों की बाबत, जिनको बुद्धिमान तूरीरी की शक्ति से कल से शुरू करेगा, सोचता हुआ तीर्थयात्री शहर को लौट आया।

अगली प्रात: तूरीरी अपनी पत्नी से पहले जागा और एक क्षण के लिए उसकी ओर देखा। किसी दुर्बोध शक्ति से गतिमान वह एकाएक उठी, खिड़की तक गई, देहली के ऊपर से कूद गई और पैदलपथ के पत्थरों से सिर फोड़ लिया।

घर से जाने के बाद, भिखारियों की भीड़ ने भीख के लिए उसे पुकारा। उसने उन्हें कुछ नहीं कहा और उसका हाथ स्वत: उसकी जेब में गया, परंतु इसके पूर्व कि वह जेब से हाथ निकाले, सारे भिखारी उसके सामने मर गए।

आगे चलकर वह सुंदर मंदानकी से मिला—बुद्धिमान् और नेक तूरीरी—उसके सामने झुका और उसके घर तक उसका पीछा किया। वहाँ जब वह अपने जीवन की कहानी सुना रही थी, वह इसके हाथों में ही मर गई। इसने उसे कोमलता से अपनी छाती से लगा लिया।

मंदानकी का घर छोड़ने के पश्चात् चौराहे पर उसको कई गाड़ियों ने रोक लिया, जो भीड़ में फँस गई थीं; यह अपना धैर्य खोने लगा। तत्पश्चात् तमाम कोचवान अपनी सीटों से गिर गए और घोड़ों की पेशियाँ कट गईं, जैसे कोई गुप्त दराँती चल गई हो!

सायंकाल वह थिएटर गया; वह विद्वान् सर्वीलाका से एक कविता पर झगड़ पड़ा। सर्वीलाका का मत था कि वह निसमी की लिखी हुई थी, जबकि तूरीरी को विश्वास था कि उसे गुलाबों के कवि सादी ने लिखा था। एकाएक विद्वान् सर्वीलाका अपनी सीट पर पीठ के बल गिर गया और काले रक्त का वमन किया। सुखांत नाटक, जो उस रात खेला गया, वह अत्यंत सफल रहा और अभिनेताओं को एकमत से सराहा गया। फिर भी जब तूरीरी नाटककार की श्रेष्ठता को सरहाने जा रहा था, नाटककार ने अप्रत्याशित ढंग से अपनी आत्मा को उसके बनानेवाले के पास भेज दिया।

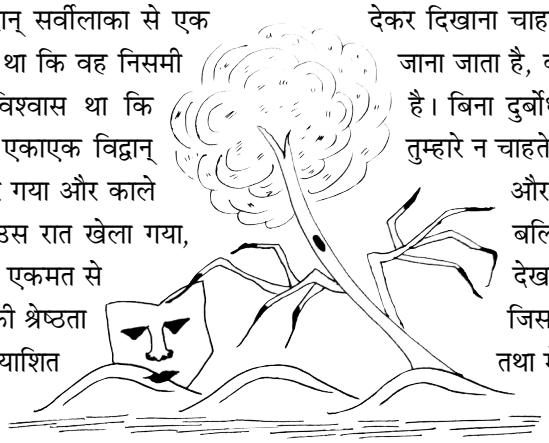

इस संपूर्ण मनुष्य संहार से भयभीत हुआ तूरीरी घर लौटा और अपने आपको यह जानने में असमर्थ पाकर कि यह सब कैसे हुआ, उसने अपने हृदय में कटार घोंपकर आत्महत्या कर ली।

पवित्र फकीर मैत्रया भी उसी रात इसी प्रकार मर गया।

दोनों एक ही समय बुद्धिमान् ओरमुज के सम्मुख पेश हुए। फकीर सोच रहा था, 'यदि इस झूठे संत को, जिसकी नेकियों की प्रशंसा ने फारस के लोगों को मूर्ख बनाया, दंड मिलता है तो मैं नाराज नहीं होऊँगा, परंतु एक दिन, जो इसे यह दिखाने के लिए दिया गया था कि वह कैसा था, ये अनगिनत पाप और अपराध कैसे कर पाया?'

परंतु बुद्धिमान् ओरमुज ने कहा, ''भला तूरीरी, वास्तव में अच्छा और दयालु व्यक्ति, मेरा आज्ञाकारी और भक्त सेवक अनंत शांति को प्राप्त होता है।''

''यह वास्तव में अच्छा मजेदार मजाक है।'' फकीर ने कहा।

''मैं अपने जीवन में इतना गंभीर कभी नहीं हुआ हूँ।'' ओरमुज ने उत्तर दिया—''तूरीरी, तुमने अपनी पत्नी को इसलिए मिटाना चाहा कि वह दयालु नहीं थी और सुंदर भी नहीं रही थी; और भिखारियों की मृत्यु इसलिए चाही, क्योंकि वे दृढ़ाग्रही थे और तुम्हारे लिए कष्टकारी थे; तुम्हारी प्रेमिका मंदानकी मूर्ख थी—कोचवानों और घोड़ों की मृत्यु इसलिए हुई कि उन्होंने तुम्हारा रास्ता रोका, जब तुम जल्दी में थे। तुमने विद्वान् सर्वीलाका की मृत्यु इसलिए चाही, क्योंकि वह तुमसे सहमत नहीं था और सुखांत नाटककार की इसलिए कि उसे तुमसे अधिक सफलता मिली थी। ये समस्त इच्छाएँ पूर्णतया स्वाभाविक थीं। जितनी भी हत्याएँ तुमने कीं और जिनके लिए मैत्रया तुम्हें दोषी मान रहा है, बिना तुम्हारी जानकारी और प्रथम प्रवृत्ति के कारण थीं; प्रथम प्रवृत्ति जिसपर किसी का नियंत्रण नहीं है। व्यक्ति हर उस चीज से घृणा करता है, जो उसके लिए रुकावट बनती है और जो रुकावट बनती है, वह उसे मिटा देती है। प्रकृति स्वार्थी है और स्वार्थ का नाम है विनाश! अत्यंत भला आदमी दिल से दुरात्मा बनकर शुरू होता है और यदि उसे प्रथम प्रवृत्ति और अनचाही इच्छा का साक्षात्कार कराया जाए तो मानव जीवन के बिना संसार मरुस्थल बन जाए। तूरीरी यही था, जो तुम्हें उदाहरण देकर दिखाना चाहता था। आदमी को उसकी द्वितीय प्रवृत्ति से जाना जाता है, क्योंकि वह उसके संकल्प पर आधारित होती है। बिना दुर्बोध उपहार के, जिसने तुम्हारे श्रेष्ठ दिन को, तुम्हारे न चाहते हुए भी हत्यारा बनाया, तुम्हारा जीवन भलाई और उदारता में व्यतीत होता। यह प्रकृति नहीं बल्कि तुम्हारा संकल्प है, जिसको मैं तुम्हारे अंदर देखता हूँ, जो सदा अच्छाई के लिए था और तुमने जिसका प्रयोग प्रकृति को ठीक करने में किया तथा मेरे अधूरे काम को पूरा किया। इसलिए, प्यारे साथी! मैं तुम्हारे लिए आज अपने स्वर्ग के द्वार खोलता हूँ।''

''यह उत्तम है।'' मैत्रया ने कहा, ''इस मामले में तुम मेरे लिए क्या करना चाहते हो? मेरे लिए क्या प्रतिफल है?''

''वही कुछ,'' ओरमुज ने उत्तर दिया—''भले ही तुमने इसे अपूर्णता से कमाया है। तुम संत थे, परंतु यदि तुम्हें अहंकार न होता तो केवल मनुष्य से अधिक न होते। तुमने प्रथम प्रवृत्ति पर विजय प्राप्त कर ली है, परंतु यदि तमाम आदमी तुम्हारी तरह रहें तो पृथ्वी से मानव जाति का इससे भी जल्दी सफाया हो जाएगा, जितनी जल्दी दुर्बोध, परंतु सांघातिक शक्ति से एक दिन में हुआ, जिसकी जानकारी मैंने अपने सेवक को दी थी। मैं चाहता हूँ कि मानवजाति चलती रहे, क्योंकि इससे मुझे प्रसन्नता होती है और चूँकि जो दृश्य यह प्रस्तावित करती है, वह अत्यंत प्रभावशाली है। दु:खी संन्यासी, तुम्हारे प्रयास एक सुंदरता से बिल्कुल शून्य नहीं थे। इसलिए मैं तुम्हारी कठोर गलती को क्षमा करता हूँ। परिणामस्वरूप तूरीरी के लिए मैं स्वर्ग के द्वार खोलता हूँ और उसका अपने हृदय से स्वागत करता हूँ, क्योंकि मैं न्यायी हूँ और मैत्रया! मैं तुम्हें प्रवेश की आज्ञा देता हूँ, क्योंकि मैं कृपालु हूँ।''

''परंतु···'' मैत्रया ने कहा।

ओरमुज ने अपना कठोर चेहरा उठाया—''मैंने कह दिया, बस।''

यात्रा श्रीनाथ धाम की

● नरेंद्र 'मगन'

वैष्णव मत के पुष्टि मार्ग या बल्लभ संप्रदाय के भक्ति योग के इष्ट भगवान् श्रीनाथजी के विषय में मान्यता है कि भगवान् श्रीकृष्ण बाल्यावस्था में ब्रजधाम स्थित गिरिराज गोवर्धन जतीपुरा, मथुरा (उ.प्र.) से नाथद्वारा (राजस्थान) में पधारे थे। १५ सितंबर, २०१७ को ऐसी शुभ घड़ी आई कि मुझे भगवान् श्रीनाथजी के दर्शन प्राप्त हुए।

डॉ. चंद्रपाल मिश्र 'गगन', जो मेरे गुरु हैं, ने हाल ही में एक काव्यकृति 'हम ढलानों पर खड़े हैं' का प्रकाशन कराया था। इसी दौरान डॉ. गगनजी के एक अन्य शिष्य की माताश्री श्रीमती मधूलिका एवं पिताश्री श्री सुबोध कुमार गर्गजी ने उन्हें सुझाव दिया कि आप नाथद्वारा (राज.) के भारत विख्यात मंच साहित्य-मंडल से अपनी पुस्तक का लोकार्पण कराएँ, वहाँ देश-विदेश के साहित्यकारों का प्रतिवर्ष महाकुंभ लगता है। रचनाओं को विद्वानों तक पहुँचाने के लिए मधुलिकाजी ने दो महानुभावों से संपर्क करने का सुझाव दिया, पहला राव मुकुल मानसिंहजी और दूसरा वरिष्ठ पत्रकार डॉ. श्रीकृष्ण 'शरद' का। डॉ. शरद भगवान् श्रीकृष्ण की जन्मस्थली मथुरा ब्रजभूमि के साथ-साथ भगवान् बराह की अवतार भूमि आदिवराह क्षेत्र स्थित संत तुलसीदास तथा उनके भ्राता अष्टछाप के कवि नंददास की जन्मभूमि सूकरक्षेत्र (सोरों) कासगंज में रहकर समाज-सेवा एवं पत्रकारिता तथा साहित्यिक क्षेत्र में अपना महत्त्वपूर्ण योगदान निरंतर देते रहते हैं। इकहत्तर वर्ष की आयु में भी उनके अंदर अद्‌भुत फुरती है, बात करने का अंदाज एकदम निराला है, लगता है कि हम रेडियो ही सुन रहे हैं। डॉ. गगनजी भी समीप में ही रहते हैं, मधूलिकाजी के मन की बात डॉ. गगनजी ने डॉ. शरदजी से साझा की।

मैं भी इस महान् व्यक्तित्व से मिलने के लिए काफी समय से उत्सुक था। नाम तो बहुत पहले से सुन रखा था, पर मिलने का अवसर मिल रहा था तो उत्सुकता कई गुना बढ़ गई। डॉ. शरदजी के घर के सामने खड़े होकर जोर से आवाज लगाई 'पंडितजी' तो डॉ. शरदजी तत्काल मकान की पहली मंजिल से दौड़ते हुए नीचे आए। उनके मुख-मंडल पर खुशी की रश्मियाँ सहज ही पढ़ी जा सकती थीं। हमने उनको सादर अभिवादन किया। हृदय से मिले डॉ. शरदजी, बातों से गुलाब झर रहे थे। मैं बहुत प्रभावित हुआ। डॉ. शरदजी की बातों से लगा कि डॉ. गगनजी की पुस्तक का लोकार्पण नाथद्वारा में सौ फीसदी सुनिश्चित है तो मन-ही-मन मैंने भी डॉ. गगनजी के साथ जाने का निर्णय कर ही लिया।

नवोदित रचनाकार। आकाशवाणी, आगरा एवं दिल्ली से काव्य-पाठ। टू मीडिया चैनल के जनपद ब्यूरो चीफ; संस्था 'अक्षरा' के सह-सचिव। अध्यायन कार्य। एक गजल-संग्रह, गीत-संग्रह तथा संस्मरण प्रकाशनाधीन।

साहित्य के क्षेत्र में मेरी गहरी रुचि थी। कच्छप गति से मेरी कलम भी चल रही थी। डॉ. गगनजी के काव्य-संग्रह 'हम ढलानों पर खड़े हैं' का लोकार्पण साहित्य मंडल श्रीनाथद्वारा का साक्षी बनने का सौभाग्य मिलना मुझे अंदर से रोमांचित कर रहा था। साहित्य मंडल श्रीनाथद्वारा के प्रधानमंत्री श्री श्याम प्रकाश देवपुराजी का आदेश पाते ही डॉ. गगनजी ने कहा, ''अगर तुमको कोई परेशानी न हो तो चलो कुछ नया सीखने को मिलेग।'' इतना सुनते ही मैं खुशी से झूम उठा, प्रत्युत्तर में 'हाँ' कहने के लिए भी मैं निःशब्द था। फिर मैंने अपनी प्रबल इच्छाओं पर नियंत्रण करते हुए १० अगस्त, २०१७ तक के लिए बात टाल दी, यह कहकर कि धर्मपत्नी श्रीमती अर्चना से पूछ लूँ। श्रीनाथजी के दर्शन के साथ-साथ झीलों की नगरी उदयपुर, अकबर व महाराणा प्रताप के युद्ध स्थल, हल्दी घाटी व मेवाड़ की धरती के पर्यटन का लालच भी धर्मपत्नी को दे दिया। मुझे संदेह था कि कहीं केवल नाथद्वारा का प्रस्ताव धर्मपत्नी को पसंद न आए और श्रीनाथजी की नगरी देखने के अवसर पर ग्रहण न लग जाए। थोड़ा ना-नुकुर के बाद धर्मपत्नी ने हाँ कह दी, जैसा कि आम तौर पर महिलाओं की आदत होती है। डॉ. गगनजी को तत्काल दूरभाष पर पत्नी के भी साथ चलने की बात बताई तो प्रसन्नता व्यक्त कर बोले, ''श्रीनाथजी जिसको बुलाएँगे, यदि वह स्वयं भी चाहे तो रुक नहीं पाएगा।'' डॉ. गगनजी ने धर्मपत्नी मंजूलता मिश्र के साथ अपनी बेटी तुल्य रेखा और उनके पति गगनेशजी को भी तैयार कर लिया था। टेंशन एक ही था कि निमंत्रण-पत्र में दावत एक आदमी की थी और चल दिए सात। इस विषय पर जब डॉ. शरदजी से चर्चा हुई तो उन्होंने हर्ष व्यक्त करते हुए कहा कि अच्छा है, सब लोग जाओ, श्रीनाथजी के दर्शन करो और प्रसाद पाओ। उन्होंने बताया कि 'बी' पार्ट में परिवारीजन रुक सकते हैं। 'ए' पार्ट में साहित्यकारों के ठहरने का इंतजाम रहता है। हमारे सपनों को उड़ने के लिए मानो पंख मिल गए। भगवान् श्रीनाथजी के दर्शन की आस मन में लिये १४ सितंबर, २०१७ यानि हिंदी दिवस की हमने उलटी गिनती गिनना शुरू कर दिया।

सब लोग निश्चिंत थे, चिंता की लकीरें मेरे माथे पर थीं, क्योंकि मैं अपने विद्यालय का हेडमास्टर हूँ और मेरे हिसाब से उत्तर प्रदेश बेसिक शिक्षा परिषद् में हेडमास्टर का मतलब होता है 'हेडेक मास्टर'। सोमवार को फलों की दुकान सजाओ, बुधवार को दूधिया बन जाओ, हलवाई तो रोज बनना ही है। घर पर साग-सब्जी, तेल-मसाला न हो तो चलेगा, पत्नी तकलीफ समझ सकती है; लेकिन विद्यालय में किसी कमी के लिए माफी शब्द विभागीय अधिकारियों के शब्दकोश में नहीं है। ड्रेसवाला विधायकजी की धमकी देकर ड्रेस पटक गया, ''यही बँटेगी, नहीं तो भुगतना।'' छोटे-बड़े नाप के चक्कर में बच्चे जान खा रहे हैं, बैग वितरण भी अभी होना है, किताबें तो पूरे सत्र में तीन-चार बार बँटती हैं। फिर भी आपूर्ति पूरी नहीं होती, अभी भी कुछ बाँटने को शेष बची हैं। मध्याह्न भोजन कैसे बने, राशन बीस दिन पहले ही खत्म हो गया, उधार लेकर काम चलाया जा रहा है। शिक्षा मित्रों का टिकट माननीय उच्चतम न्यायालय ने जल्दी ही काटा है। सारी जिम्मेदारी हेडमारटर के सिर पर है, अकेला चना क्या भाड़ फोड़ेगा! १० सितंबर का ही रात्रि ९ बजे मेवाड़ एक्सप्रेस में रिजर्वेशन था। कासगंज से मथुरा की यात्रा कार से तय करनी थी। १० सितंबर से १६ सितंबर तक कुल आठ दिन का सफर था। लगेज भारी होना स्वाभाविक था, जैसे-तैसे विद्यालय की व्यवस्थाएँ करके भगवान् श्रीनाथजी का स्मरण करते हुए विद्यालय की चिंता छोड़कर मैंने लक्ष्य की ओर ध्यान केंद्रित किया।

डॉ. गगनजी ने ९ सितंबर को ही डॉ. शरदजी से आवश्यक जानकारियाँ हासिल कर सारे संपर्क-सूत्र डायरी में लिख लिये। कार द्वारा हम सभी ने मथुरा के लिए प्रस्थान किया। धर्मपत्नी की उत्सुकता का अनुमान इसी से लगाया जा सकता है कि घर से निकलते वक्त नाश्ते के सामानवाला थैला घर पर ही भूल आई थीं। श्रीनाथजी की कृपा कहिए कि कासगंज पार नहीं हुआ था कि याद आ गई। उनकी उत्सुकता की कीमत शहर के जाम से बचने के लिए बीस रुपए रिक्शावाले को अदा कर और धूप झेलकर चुकानी पड़ी मुझे। खैर, सफर शुरू हुआ, बातचीत में मथुरा कब आ गया, पता ही नहीं चला। गंतव्य समय से पूर्व प्लेटफॉर्म संख्या १ पर थे हम, जैसे ही घड़ी में ८:५५ बजे गाड़ी का प्लेटफॉर्म बदलने की घोषणा होने लगी, सुनते ही हाथ-पाँव फूल गए, इतना सामान लेकर तीन नंबर प्लेटफॉर्म पर कैसे जाएँ? एक बार मन हुआ कि पटरी पार कर बदल लें, किंतु बच्चे और महिलाओं का खयाल आते ही साहस बटोरकर उपरिगामी पुल से प्लेटफॉर्म नंबर ३ पर पहुँच गए। भारतीय रेलवे विभाग भी कमाल का है। गाड़ी ३ नंबर पर उद्घोषित हो रही थी, किंतु आई २ नंबर पर। जैसे-तैसे भाग-दौड़कर गाड़ी में स्थान लिया। जैसे ही गाड़ी ने रफ्तार पकड़ी, हमने भी कल्पनाओं के पंख लगाकर उड़ना शुरू किया। प्रातः ६ बजे उदयपुर स्टेशन पर थे हम लोग।

भारतीय इतिहास में मेवाड़ साम्राज्य का जिक्र आते ही शरीर के रोम-रोम में हलचल सी पैदा हो जाती है। मेवाड़ ही एकमात्र साम्राज्य था, जिसने तत्कालीन आततायियों की दासता स्वीकार नहीं की। अपने बलिदान, स्वाभिमान और सम्मान के लिए मेवाड़ साम्राज्य इतिहास में याद किया जाता है। भक्ति की पर्याय भगवान् श्रीकृष्ण की दिवानी मीराबाई का नाम, अपने पुत्र का बलिदान मेवाड़ की रक्षार्थ करनेवाली पन्ना धाय को इतिहास भुला दे, यह संभव नहीं। मेवाड़ के अनेक राजाओं की वीर-गाथा जानने के लिए सर्वप्रथम हमने होटल के कमरे में सामान रखने के बाद सिटी पैलेस की ओर रुख किया। इस पैलेस में महाराणाओं की वीरता, पराक्रम का यशगान सुनाई देता है, उनके रण-कौशल, शानो-शौकत व जीने के रंग-ढंग दिखाई पड़ते हैं। गणेश चौक से प्रारंभ होकर मानक महल, भीम विलास, कृष्ण विलास, मोती महल (पर्ल पैलेस) शीश महल, चीनी चित्रशाला, दिलकुश महल, बड़ी महल, रंग भवन (मोर चौक) एवं लक्ष्मी विलास सभी एक से बढ़कर एक थे। सिटी पैलेस भ्रमण के उपरांत हमने जगदीश मंदिर के दर्शन किए और गुलाब बाग होते हुए पिछौला झील पहुँचे।

दूर बादलों में लुका-छिपी करता छिपता हुआ लाल-गोल सूर्य बार-बार अपनी सूरत उस झील के प्रतिबिंबी पानी में निहारता, फिर रुई जैसे बादलों के बिस्तर में छुप जाता। लाल-लाल किरणें नावों के आवागमन से उठ रही तरंगों से अठखेलियाँ कर रही थीं। झील के किनारे बैठकर हमने झील के शांत पानी की चंचल लहरों में मचलती किरणों का प्रेमालाप देखा। सज्जनगढ़ का किला के लिए दुर्गम पहाड़ी रास्ता था। जैसे-जैसे टैक्सी से ऊपर की ओर जा रहे थे, नीचे का दृश्य देखकर साँसें अटक रही थीं। ऊँचे-ऊँचे पहाड़ों और गहरी-गहरी खाइयों के बीच यात्रा रोमांचकारी थी, पर डर क्या होता है, उस रास्ते ने बताया। इस किले से बादलों को अपने नजदीक ही पाते हैं अधिक ऊँचाई पर होने के कारण। इनके अलावा फतेह सागर झील का भ्रमण भी हमने किया।

सभी राज्य सरकारें यदि राजस्थान की तरह ही महिलाओं को परिवहन निगम के किराए में छूट दें तो महिलाओं के उत्थान के लिए उपयोगी होगा। समाज में लैंगिक भेदभाव की जो आग फैली है, इस प्रकार की राहतें पानी की बौछार का काम करेंगी उस पर। शिक्षा व रोजगार के लिए दूर-दराज यात्रा करनेवाली माँ-बहनों को प्रोत्साहन आवश्यक है। महिला सशक्तीकरण के यज्ञ में राजस्थान सरकार द्वारा दी गई आहुति से हमारी सरकार अगर सीख लें तो महिलाओं के विकास के साथ-साथ सरकार का भी कम फायदा नहीं होगा। उत्तर प्रदेश में ब्रज क्षेत्र तो पर्यटन का केंद्र है, यहाँ भी इस तरह की सुविधाएँ होनी चाहिए।

हम लोग १३ सितंबर, २०१७ को जब उदयपुर रोडवेज बस स्टैंड पहुँचे तो नाथद्वारा की एक टिकट पुरुषों के लिए ६० रुपए, जबकि महिलाओं के लिए मात्र ४५ रुपए की थी।

बस में बैठते ही सूर्यदेव की तपन कम करने के लिए इंद्रदेव ने बादलों का आदेश दिया, थोड़ी देर में देखते-ही-देखते काली घटाएँ घिर आईं। दोनों ओर पहाड़ियों के बीच जैसे-जैसे बस का एक्सीलरेटर दब रहा था, घटाओं की घनघोरता तीव्र होती जा रही थी। पहाड़ों के ऊपर भूरे-काले रुई जैसे बादल खेलने लगे। बारिश होने लगी, बादलों और पहाड़ों के प्रेम-अलाप हुआ, परणति सुखद स्वाभाविक थी। भीगे पहाड़, भीगी वनस्पतियाँ, मानो गगन के घन! धरा का जलाभिषेक करते हुए आनंदित हो रहे थे। बादल भी दूर नहीं थे, पहाड़ भी नजदीक थे। सड़क पर जगह-जगह पानी का भराव हो गया था, जैसे ही बस तेज रफ्तार से पानी के ऊपर से गुजरती, पानी फव्वारे की तरह एक लय में दूर छिटक जाता था, मन बस से उतरकर भीगने का कर रहा था। बस की रफ्तार भी कम हो गई थी, मौसम के आनंद ने यह अहसास ही नहीं होने दिया कि कब नाथद्वारा का बसस्टैंड आ गया। ऑटो द्वारा साहित्य मंडल के लिए निकले, सड़कें जलमग्न थीं, गलियों-कूचों में निहारा तो आँखों में निराली सी चमक थी, लगने लगा कि हम साक्षात् ब्रज में आ गए हैं। गौ-माता गलियों में विचरण कर रही थीं। कान्हा की नगरी की प्रतिलिपि था नाथद्वारा। ब्रज में नाथद्वारा और नाथद्वारा में ब्रज, वही कुंज गलियाँ वैसे ही लोग। ब्रज की गंध अनायास ही तन और मन दोनों को प्रसन्न कर रही थी। श्री का अर्थ राधा और नाथ का मतलब श्रीकृष्ण अर्थात् जब राधा और कृष्ण का वास है, यहाँ तो समानताएँ भी तो स्वाभाविक थीं। साहित्य मंडल के कार्यक्रम में शामिल होनेवाले अतिथियों के लिए आरक्षित स्थान पर पहुँचकर अपना सामान जमाया।

साहित्य मंडल के प्रधानमंत्री श्री श्याम प्रकाश देवपुराजी से मिलने मैं और डॉ. गगनजी सामने की विशाल इमारत में बने ऑफिस में पहुँचकर 'श्याम प्रकाश देवपुराजी से भेंट करनी है' कुरसी पर बैठे व्यक्ति ने पूछा। उस व्यक्ति ने कुरसी पर बैठने को कहा, ''कहिए मैं ही श्याम देवपुरा हूँ।'' हमने इस उत्तर की उम्मीद ही नहीं की थी। हमारे खयाल में श्याम प्रकाश देवपुरा बहुत सशक्त कदकाठी के रोबदार व्यक्ति होंगे। इतना सरल व्यक्ति इतने बड़े पद पर, आसानी से गले उतरनेवाली बात वास्तव में थी ही नहीं। ऑफिस में अलमारी, मेज, बैड़ इधर-उधर जिधर भी दृष्टि गई किताब-ही-किताबें थीं। ''फेसबुक के प्रोफाइल पर तो कोई और ही फोटो है'', डॉ. गगनजी ने प्रश्न किया, सहज भाव से अपने पूज्य पिताजी की दीवार पर टँगी तसवीर की ओर इशारा करते हुए बाऊजी का है सारा काम, उन्हीं के नाम से, उन्हीं के आशीर्वाद से है। डॉ. गगनजी ने बताया, ''मैं डॉ. गगन कासगंज से, डॉ. शरदजी ने फोन किया होगा, पुस्तक लोकार्पण हेतु आपका निमंत्रण था।'' डॉ. शरदजी नाम सुनते ही मानो उनके हृदय और मुखमंडल के कमल-दल खिल गए। तुरंत पीछे अलमारी से 'हम ढलानों पर खड़े हैं' काव्यकृति की पाँचों प्रतियाँ उठाकर दिखाते हुए, ''यह देखो, डॉ. शरदजी का फोन आते ही मैंने पुस्तकें निकालकर अलग रखी हैं।''

डॉ. शरदजी ने चलते समय कहा था कि जहाँ ठहरोगे, उसी के सामने हरी भाई चायवाले की दुकान है, मेरा परिचय देना, चाय अच्छी मिलेगी। जैसा बताया, वैसा ही पाया। बाजार एकदम नजदीक था तो सोचा कि बाजार की रौनक देखी जाए, खूब घूमे। बाजार दुलहन की तरह सज रहा था। देखते ही बनता था, निगाह जहाँ रुकी, रुकी ही रह गई। मेरा बेटा बड़ा प्रसन्न था, खिलौनों की दुकान पर अड़ गया। कभी गेंद-बल्ला, कभी दूरबीन कहता, कभी टैक्टर, कभी क्रेन तो कभी खिलौनों में ही खो जाता, नाम तक नहीं जानता था कुछ खिलौनों के। पत्नी कपड़ों व पर्सों की दुकानों में व्यस्त दिखीं। सब अपने-अपने मतलब का सामान तलाश रहे थे। मैं भगवान् श्रीनाथजी की एक तसवीर लेना चाहता था। डॉ. गगनजी ने बताया कि डॉ. शरदजी ने चलते समय बताया था कि नाथद्वारा में पंडितजी दूधवाले हैं। वहाँ दूध पीना। काफी तलाश के बाद पंडितजी मिले। बड़ी-बड़ी मूँछोंवाले, काफी लंबे-चौड़े, दूध फेंट रहे थे—एक हाथ कंधे से ऊपर खूब ऊँचा, एक जाँघ से नीचे, दोनों में बरतन ऐसे, जैसे दूध की धार एक बरतन से दूसरे को जोड़े थी। ऊपर-नीचे, नीचे-ऊपर दूध फेंटने के कार्य से मुक्त होकर हमारी सुध ली। डॉ. शरदजी का परिचय देते ही पंडितजी ने ''वही मथुरा आकाशवाणीवाले शरदजी! आइए-आइए!'' कहकर विनम्रतापूर्वक सत्कार किया। गऊ-दूध पिया, मन भर गया, मानो अमृत पी लिया हो।

भगवान् श्रीनाथजी के दिव्य दर्शन के लिए हम लोग मंदिर की ओर बढ़े, पर भक्तों की भारी भीड़ में चलना मुश्किल था, द्वार पर पहुँचकर अपने जूते-चप्पल उतारकर मंदिर परिसर में दाखिल हुए। महिलाएँ अलग गेट से प्रवेश पा रही थीं, इसलिए पत्नी और हम अलग-अलग हो गए, बेटा मेरे साथ था। कपाट बंद थे और सीढ़ियों पर ही बैठकर लोग इंतजार कर रहे थे, जैसे ही कपाट खुले तो भगवान् श्रीनाथजी की छवि दूर से दिखने लगी, कुछ ही सेकेंड में हमको पीछे से दर्शनार्थियों का सैलाब इतना था कि बेटा भीड़ में दबा जा रहा था, छोटा था ऊँचे कद के लोगों के सामने होने के कारण वह श्रीनाथजी को निरख नहीं पा रहा था। मैंने कंधों पर उसे उसके दोनों पैर आगे की ओर निकालते हुए बैठा लिया, अब हम दोनों आराम से भगवान् की श्री विग्रह का दर्शन कर रहे थे, धीरे-धीरे हम श्रीनाथजी के सम्मुख थे। भव्य मूरत नख से सिर तक सुंदरता-ही-सुंदरता, आँखों में बस गए श्रीनाथजी। भीड़ के रैले में पाँव स्थिर न रह सके, जितनी देर भी वहाँ रहे, कभी आगे, कभी पीछे, कभी दाएँ तो कभी बाएँ। शरीर ने कितनी गतियाँ कीं, गिनना मुमकिन न था, परंतु मन और आँखें श्रीनाथजी के साथ एक डोर की तरह बँधे रहे। दिव्य मूर्ति बोल-बोल पड़ेगी, ऐसा प्रतीत होता था।

श्री नाथद्वारा से २२ कि.मी. की दूरी पर हल्दीघाटी है, जहाँ महाराणा प्रताप और अकबर के बीच युद्ध लड़ा गया। यहाँ एक अत्याधुनिक संग्रहालय देखा, जिसमें महाराणा प्रताप के जीवन से संबंधित दृश्य लाइट्स और साउंड के माध्यम से दिखाए गए। पास ही एक पार्क भी है जिसमें महाराणा स्मारक है।

नाथद्वारा की दो ही शान हैं, जहाँ तक मैंने अनुभव किया—पहली भगवान् श्रीनाथजी और दूसरी उनके परम भक्त साहित्य व समाजसेवी भगवती प्रसाद देवपुराजी, इन्होंने अपना संपूर्ण जीवन साहित्य-सेवा को समर्पित कर दिया। इनकी मेहनत और लगन का ही परिणाम था कि प्रभात फेरी में जिस भाव से पूरा नगर अपनी सहभागिता कर रहा था, वह दर्शनीय था। मैं उस पल का साक्षी बना, ये मेरे लिए सौभाग्य के क्षण थे। बाजार में दुकानदार और ग्राहक दोनों अपनी सुधियाँ खोकर प्रभात फेरी के आँखों से ओझल होने तक मूर्तिवत् देख रहे थे। आगे-आगे बैंड बाजा, हिंदी का जयगान करते स्कूली बच्चे और थिरकते साहित्यकारों का अभिनंदन करने पूरा नगर उमड़ पड़ा था।

प्रभात फेरी के बाद देश-विदेश की जानी-मानी पत्रिकाओं, पुस्तकों की प्रदर्शनी लगी। डॉ. भगवती प्रसाद देवपुरा की अमूल्य धरोहर पुस्तक 'सूरसागर' और संपादित पत्रिका 'हरसिंगार' को देखकर मैं धन्य हो गया। ब्रजभाषा और हिंदी के उत्थान की साधना जो डॉ. देवपुराजी की पुस्तकों एवं पत्र-पत्रिकाओं में अमिट स्याही से सदैव अंकित रहेगी तथा शोधार्थियों को प्रेरणा एवं एक नई ऊर्जा प्रदान करती रहेगी।

डॉ. भगवती प्रसाद देवपुरा द्वारा स्थापित पुस्तकालय अनूठा है, मैंने अपने जीवन में हिंदी साहित्य का इतना बड़ा संग्रह, वह भी व्यक्तिगत रूप से किया गया, कभी नहीं देखा। साधारण व्यक्ति के वश का काम नहीं था यह। अष्टछाप कक्ष निर्माण में ब्रजभाषा के प्रति उनका सहज समर्पण प्रतिबिंबित था। स्वरचित पांडुलिपियाँ मोती जैसे अक्षरों में थीं। साहित्यकार कक्ष भी अवलोकनीय था।

साहित्य मंडल परिवार द्वारा देश के विभिन्न कोनों से आमंत्रित किए गए माँ भारती के सपूत हिंदी और ब्रजभाषा के सेवक अग्रणी साहित्यकारों का सम्मान डॉ. देवपुराजी की शुरू की हुई परंपरा भी अपनी आँखों से देखी। 'टू मीडिया' के संपादक श्री ओम प्रकाश प्रजापति, पूर्व डी.जी.पी. डॉ. महेश चंद्र द्विवेदी, डॉ. नीरजा द्विवेदी, डॉ. विक्रम सिंह, डॉ. अनिल गहलौत 'भैयाजी', डॉ. आग्नेय एवं श्री वीरेंद्र लोढ़ा आदि साहित्यकारों का सम्मान उत्तरी पहनाकर, मंदिर का प्रसाद, श्रीनाथजी की मनमोहक तसवीर और प्रशस्ति-पत्र भेंट कर किया गया। हिंदी के विकास के संदर्भ में विभिन्न दृष्टिकोण भी पत्रों के माध्यम से विभिन्न साहित्यकारों द्वारा प्रस्तुत किए गए।

'टू मीडिया' चैनल की पत्रिका के अंक का लोकार्पण साहित्य मंडल के भव्य मंच से हुआ, जिसमें श्री ओम प्रकाश प्रजापति ने 'हिंदी भाषा उत्थान' एवं 'साहित्यकार सम्मान' के प्रणेता डॉ. देवपुरा के विषय को उकेरा है। डॉ. चंद्रपाल मिश्र 'गगन' की मनोवैज्ञानिक कसौटी पर खरी रचनाओं एवं ब्रजभाषा के छंदों से परिपूर्ण काव्य-संग्रह 'हम ढलानों पर खड़े हैं' का लोकार्पण भी डॉ. अमर सिंह वधान, विट्ठल पारीक, हरीलाल मिलन, डॉ. अमी आधार 'निडर' एवं करतार योगी की गरिमामयी उपस्थिति में हुआ। दोनों शाम कवि-सम्मेलनों से रंगीन रही, जिसमें काव्य-प्रेमी, साहित्यकारों ने अपनी सहभागिता की। डॉ. उमाशंकर 'साहिल' अजीम अंजुम, देवी प्रसाद पांडेय, डॉ. गगन आदि ने अपनी रचनाओं से मंत्रमुग्ध किया।

साहित्य मंडल परिवार के मुखिया श्री श्याम प्रकाश देवपुराजी के प्रबंधन की प्रशंसा करनी पड़ेगी, क्योंकि इतना भव्य आयोजन निर्विघ्न और बड़ी सहजता से संपन्न करा देना, उनकी क्षमता का द्योतक है, अपने पद का घमंड उनको कहीं से स्पर्श नहीं कर पाया था और विनम्रता के सुगंधित पुष्प उनके अंग-अंग से झरते थे। श्री श्याम प्रकाश देवपुरा के इस प्रबंधन रथ के सारथी डॉ. विट्ठल पारीक कहे जा सकते हैं, जिनके अनूठे संचालन से कार्यक्रम अपने चरम बिंदु तक गया। साहित्यकारों के सम्मान में सुबह का नाश्ता, दोपहर व रात का भोजन एवं शाम की चाय, सबमें उनके मृदुल व्यवहार एवं मेवाड़ तथा मारवाड़ी महक घुली हुई थी। ऐसा प्रसाद और श्रीनाथजी की कृपा हम सबको हमेशा मिलती रहे, इसी आशा एवं विश्वास के साथ हम लोग श्रीनाथद्वारा से मावली जंक्शन को रवाना हुए और मधुर स्मृतियों में डूबते-उछलते ब्रजधाम स्थित गृह नगर कासगंज आ गए।

सा.अ.

मोहल्ला मंडी, कस्बा बिलराम
जनपद-कासगंज-२०७१२४ (उ.प्र.)
दूरभाष : ९४११९९९४६८

इस अंक की चित्रकार

अनुभूति गुप्ता

नवोदित लेखिका एवं चित्रकार। हिंदी की पत्र-पत्रिकाओं में रेखाचित्र, कविता, लघुकथा आदि प्रकाशित। कविता कोश में ६० से अधिक कविताएँ संकलित। बाल-काव्य तथा कहानी-संग्रह एवं कुछ काव्य-संग्रह शीघ्र प्रकाशित। 'नारी गौरव सम्मान', 'साहित्यश्री', 'प्रतिभाशाली रचनाकार सम्मान', 'नवांकुर रत्न सम्मान' तथा 'संपादक शिरोमणि' आदि सम्मानों से समादृत।

सा.अ.

संपर्क : १०३ कीरत नगर, निकट डी.एम. निवास
लखीमपुर खीरी-२६२७०१ (उ.प्र.)

निराली है राजस्थान की संस्कृति

● कृष्णचंद्र टवाणी

'म्हारो रंग-रंगीलो राजस्थान···,' इन पंक्तियों को सुनते ही राजस्थान की सतरंगी संस्कृति की तसवीर हमारे मस्तिष्क में उभर आती है। हर संस्कृति की अपनी पहचान होती है, जिसमें समाहित होता है—पूरा परिवेश, आदर्श परंपरा एवं लोकभाव। राजस्थान की संस्कृति अपने आप में अनोखी है, जो दुनिया भर में अपनी विशेषताओं के लिए पहचानी जाती है। यहाँ के रहन-सहन, वेश-भूषा, स्वादिष्ट भोजन, अतिथि-सत्कार, मेले, नृत्य-संगीत आदि सभी अपने आप में बेमिशाल हैं। राजस्थान का व्यक्ति स्वदेश में रहे, चाहे विदेश में, वह अपनी राजस्थानी संस्कृति को कभी नहीं भूलता है। खान-पान, शादी-विवाह में राजस्थानी वेश-भूषा व रीति-रिवाजों को ही अपनाता है।

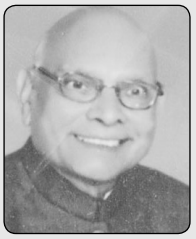

सुपरिचित कवि-लेखक। विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में लेख व कविताओं का निरंतर प्रकाशन। 'अमृत कलश', 'सत्संग सुधा', 'कर्म सिद्धांत' पुस्तकें प्रकाशित। कुल मिलाकर छोटे-बड़े ५० से अधित सम्मान प्राप्त। कई संस्थाओं के संरक्षक, अध्यक्ष आदि।

शक्ति और भक्ति की महान् संस्कृति

शौर्य और बलिदान की भूमि भक्तों और संतों का प्रदेश है राजस्थान। यहाँ महाराणा प्रताप, पृथ्वीराज चौहान, अमर सिंह राठौड़, राणा सांगा जैसे शूरवीर उत्पन्न हुए हैं, वहाँ अनेक सूफी संत, दादू, पीपा, चरणदास, भक्तिमति मीरा भी अवतरित हुई हैं। राजस्थान की रत्नगर्भा भूमि ने जिन वीरों को पैदा किया है, यदि उनके नामों की माला पिरोकर भारत माँ के गले में पहना दी जाए तो माँ का सिर गर्व से ऊँचा हो जाए। यहाँ के वीरों ने चीन व पाकिस्तान के सैनिकों को नाकों चने चबवा दिए थे। यहाँ की वीरांगनाओं का जौहर की ज्वाला में अपने आप को समर्पित करना इतिहास के पृष्ठों में स्वर्णाक्षरों में अंकित है।

अतिथि सत्कार की अद्वितीय परंपरा

भारतीय संस्कृति में 'अतिथि देवो भव' माना गया है। इसका प्रत्यक्ष उदाहरण राजस्थान के प्रत्येक परिवार में देखने को मिलता है। जब यहाँ के ढाणी, गाँव या नगर में बस रहे लोगों के यहाँ जाने का अवसर मिलता है तो राजस्थानी परंपरा के अनुसार अतिथि को आदर सहित बैठक में बिठाया जाता है तथा पीने के लिए तत्काल शुद्ध पानी या छाछ का गिलास पेश किया जाता है। यह है यहाँ के स्वागत की परंपरा। फिर आने का कारण पूछा जाता है तथा घर आए मेहमान की पूरी तरह आवभगत की जाती है। भोजन के समय भोजन और नाश्ते के समय नाश्ते के लिए आग्रह किया जाता है, जो राजस्थानी संस्कृति का परिचायक है। यहाँ का भोजन भी अपने ढंग का निराला ही होता है। यहाँ के मुख्य भोजन में बाजरे की रोटी, मक्खन, दही, छाछ, रबड़ी, दाल-बाटी, चूरमा एवं बाजरे का खिचड़ा आदि रहता है। राजस्थान की मिठाइयाँ व नमकीन न केवल देश में, अपितु पूरे विश्व में मशहूर है। जैसे बीकानेर के रसगुल्ले व नमकीन (भुजिया) जयपुर का घेवर, सांभर की फीणी, ब्यावर की तिल-पपड़ी, अजमेर का सोहन हलवा, किशनगढ़ की बालूशाही, अलवर का मावा (मिल्क केक), जोधपुर की मावे की कचौड़ी तथा मिर्ची बड़ा इतने स्वादिष्ट होते हैं कि इन्हें बार-बार खाने की अभिलाषा मन में बनी रहती है।

धन कुबेरों की जन्मस्थली

यहाँ के पुरुषार्थी लोगों ने विदेश एवं देश के विभिन्न भागों में जाकर अपने तन-मन-धन से योगदान देकर उसे समृद्ध कर यहाँ का

विकास किया है। निजी क्षेत्रों में कीर्तिमान स्थापित करनेवाले बिड़ला, बजाज, पोद्दार, धूत, बांगड़, खेतान, डालमिया आदि राजस्थान के ही हैं। चूरू के श्री लक्ष्मी निवास मित्तल ने तो विश्व के उद्योगपतियों में अपना प्रथम स्थान बना लिया है। देश के विभिन्न भागों में उद्योगों का महाजाल फैलानेवाले एवं राष्ट्र के विकास में अहम भूमिका निभानेवाले ९० प्रतिशत उद्योगपतियों की जन्मस्थली राजस्थान ही है। न केवल देश के प्रत्येक बड़े नगर में, अपितु विश्व के प्रमुख राष्ट्रों—अमेरिका, ऑस्ट्रेलिया, केन्या, दक्षिण अफ्रीका, यूरोप, सिंगापुर, दुबई इत्यादि सभी जगह राजस्थानियों ने अपनी श्रेष्ठता के झंडे गाड़े हैं।

खनिज संपदा में अग्रणी

राजस्थान की विस्तृत मरुभूमि बंजर होते हुए भी रत्नों से भरी पड़ी है। प्रदेश के आँचल में विपुल खनिज संपदा का भंडार समाहित है। राजस्थान का संगमरमर देश-विदेश में अपनी धाक जमाए हुए है। दुनिया भर में मशहूर ताजमहल राजस्थान के संगमरमर पत्थर से ही बना है। लाईम स्टोन, ताँबा, जस्ता, जिप्सम, फास्फेट, चाँदी, सीसा आदि खनिजों का भंडार है राजस्थान।

राजस्थान के कण-कण में बसी है कला व संस्कृति

जब कला और संस्कृति की बात हो तो रंग-रंगीले राजस्थान की पगड़ी, साफा, चूड़ियाँ, कसीदे व जरी की जूतियाँ, बंधेज की चूनरी, ज्वेलरी, मीनाकारी आदि को सर्वप्रथम याद किया जाता है। जोधपुरी बंधेज के साफे, चूनरी की साड़ी, जूतियाँ, उदयपुर के खिलौने, जयपुर की रजाइयाँ, नाथद्वारा की चाँदी एवं मीनाकारी की वस्तुएँ आदि का पूरे विश्व में निर्यात होता है।

पर्यटकों के आकर्षण का केंद्र

विदेशी सैलानियों के लिए राजस्थान आकर्षण का प्रमुख केंद्र है। यहाँ के किलों, महलों, झीलों, अभयारण्य, दुर्ग, हवेलियाँ, लोककला, चित्रकला को देखने विश्व के ७० देशों के पर्यटक यहाँ आते रहते हैं। राजस्थान में पुष्कर समारोह, जैसलमेर में मरु महोत्सव, आमेर में हाथी समारोह, मारवाड़ समारोह को देखने प्रतिवर्ष लाखों पर्यटकों का यहाँ आगमन होता है। अजमेर में ख्वाजा का उर्स, जयपुर में गणणौर व तीज के मेले, पुष्कर के पशु मेले में विविध मनोरंजक कार्यक्रमों को देखकर विदेशी पर्यटक अपने आपको धन्य समझते हैं। हाथी और ऊँट की सवारी का आकर्षण व आनंद विदेशियों को राजस्थान की ओर बरबस खींच लाता है।

सदाबहार लोकगीत एवं लोकनृत्य

लोकनृत्य, संगीत के क्षेत्र में यहाँ के कलाकारों ने विदेशों में भी अपनी कला का प्रदर्शन कर खूब ख्याति अर्जित की है। यहाँ के लोकगीतों में काग, सूविटया, घुड़ला, मेहँदी, विनायकजी आदि का मार्मिक वर्णन मिलता है। यहाँ के लोकगीतों की यह विशेषता होती है कि ये कभी भी पुराने अथवा मन को उबा देनेवाले नहीं होते हैं। यहाँ के लोकनृत्यों को देखकर तथा राजस्थानी मधुर गीतों को सुनकर विदेशी सैलानी स्वयं भी नर्तकों के साथ-साथ झूमने लगते हैं। युवतियाँ तीज व गणगौर त्योहार पर भाव-विभोर होकर नृत्य करती हैं। यहाँ के घूमर, भवाई, डांडियाँ, कालबेलियाँ, तेराताली, कच्छी घोड़ी, चरी व दीपक आदि नृत्य दर्शनीय हैं। होली के दिनों में डफ, नगारे की ध्वनि के साथ-साथ तथा घेरा बनाकर नाचना तथा छारंडी के दिन बादशाह का मेला राजस्थान के अलावा कहीं नहीं होता है। नृत्य-संगीत ही नहीं, चित्रकला एवं मूर्तिकला के क्षेत्र में भी यहाँ के कलाकारों ने अपनी गौरव-पताका पूरे विश्व में फहराई है।

अनोखे राजस्थानी आभूषण

राजस्थानी संस्कृति की पहचान है यहाँ के विविध आभूषण। जितने प्रकार के आभूषण पहनने की परंपरा राजस्थान में है, उतनी अन्य प्रांतों में नहीं है । यहाँ तक कि पुरुष लोग भी आभूषण पहनते हैं। पुरुषों के आभूषणों में लोग गले की कंठी, अँगूठी आदि प्रमुख हैं। राजस्थान को स्त्रियों के सुंदर-सुंदर आभूषणों का अजायबघर कहें तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी। सिर से लेकर पाँव तक स्त्रियाँ आभूषणों से अलंकृत रहना पसंद करती हैं। वैसे तो स्त्रियों के लिए सैकड़ों आभूषणों का प्रचलन यहाँ है, किंतु अँगूठी, बिछिया, बोरला, माँग-टीके, कड़ी-कांबा, कांकण, कटिमेखला बाजूबंद, पूँची, हार, पायल, पाजेब, बंगफूल, हथफूल, गोखरू, नाक की बाली, झुमका, हार, कंठी, चूड़ा, कड़ी, तगड़ी आदि प्रमुख हैं। किंतु पिछले एक दशक में राजस्थानी संस्कृति में भी समय के बदलाव दृष्टिगोचर हो रहे हैं। राजस्थान की सांस्कृतिक निधियाँ लुप्त न हों तथा उनका पुनरुद्धार हो यह अत्यंत आवश्यक है। राजस्थान लोकसाहित्य संस्कृति अकादमी, बीकानेर आदि कुछ ऐसी संस्थाएँ हैं, जो इस दिशा में महत्त्वपूर्ण कार्य कर रही हैं। आइए, हम भी संकल्प करें कि हम राजस्थानी संस्कृति, सभ्यता एवं भाषा को जीवित रखने हेतु यथासंभव प्रयत्न करेंगे।

ज्ञानमंदिर, सिटी रोड,
मदनगंज-किशनगढ़-३०५८०१
(राजस्थान)
दूरभाष : ०९२५२९८८२२१

बाल-कहानी

एक छोटा सा दीया

• सुनीता

बिन्नू छोटा ही था, पर उसके जीवन में उथल-पुथल मच गई थी। एक बार पैर भटके, तो फिर वे रास्ते पर आते ही न थे। और खुद बिन्नू जैसे लाचार सा था। वह उस रास्ते पर चल पड़ा था, जो गहरे गड्ढों और अँधेरी खाइयों की ओर ले जाता है। कई बार वह खुद को समझाता, ''नहीं-नहीं, यह गलत है। यह ठीक नहीं, लेकिन···!''

उसके पैर बार-बार रपटते थे और उसे कहाँ-से-कहाँ ले जाते थे। घरवाले परेशान, बिन्नू को हुआ क्या है?

वे बिन्नू के लिए ही नहीं, पूरे घर के लिए बड़े दुःख भरे दिन थे। खासकर बिन्नू की माँ विमलाजी के लिए, जिनका सपना था कि बच्चे खूब पढ़ें-लिखें। पढ़-लिखकर आगे बढ़ें। इसके लिए वे कोई भी त्याग करने के लिए तैयार थीं। अपने गहने बेच-बेचकर बच्चों को पढ़ाने-लिखाने का उन्होंने निश्चय कर लिया था। एक-एक कर कई गहने बिक भी चुके थे। पर उन्हें इसका जरा भी मलाल न था।

कई बार रिश्तेदार ताना मारते। समझाते भी, ''विमला, तू ये क्या कर रही है? ऐसे तो तेरे पास एक गहना भी नहीं बचेगा। तो आगे कैसे काम चलेगा तेरा?''

इस पर वे हँसकर कहतीं, ''गहने कहाँ बेच रही हूँ? असली गहने तो मेरे बच्चे हैं। जो बेच रही हूँ, वे तो झूठे गहने हैं। इनसे क्या मिलना है? बच्चे पढ़-लिखकर अपने पैरों पर खड़े हो जाएँ तो मैं समझूँगी, मुझे सबकुछ मिल गया।''

उनकी बड़ी बेटी सुजाता और बेटे हैरानी से ये बातें सुनते। उन्हें गर्व होता था, ''हमारी माँ का दिल कितना बड़ा है!''

विमलाजी ज्यादा पढ़ी-लिखी न थीं, पर पढ़ाई का मोल जानती थीं। अकसर वे बच्चों से कहतीं, ''मेरे बच्चो, सच मानो तो पढ़ाई ही रोशनी है। मैं तो ज्यादा पढ़-लिख न सकी, पर मैंने यह जान लिया है कि इससे कीमती चीज दुनिया में कुछ और नहीं है। संसार को देखने की सही आँखें तुम्हें पढ़ने-लिखने से ही मिलेंगी। तुम पढ़-लिखकर अपना रास्ता बना लोगे तो मुझे लगेगा, मेरी मेहनत बेकार नहीं गई। और वे गहने फिर वापस आ गए हैं!''

कहते-कहते उनकी आँखों में आँसू की बूँदें झलमलाने लगतीं। बेटी-बेटे यह देखते तो मन-ही-मन संकल्प करते कि माँ के सपने को वे पूरा करेंगे। पिता का वेतन ज्यादा न था। और उनका रास्ता ईमानदारी का था। सरकारी दफ्तर। पर वे कड़क थे और काम में पक्के। उनके सहयोगी हँसकर कहते, ''काशीनाथजी तो किसी और ही दुनिया के आदमी हैं।''

सुपरिचित लेखिका। 'नानी के गाँव में' (कहानी-संग्रह); 'खेल-खेल में बातें' (लेख-संग्रह); 'फूलोंवाला घर', 'दादी की मुसकान', 'रिया और दादी' शीघ्र प्रकाशय। महान् युगनायकों पर लिखी जीवनीपरक पुस्तक 'धुन के पक्के' खासी चर्चित हुई। 'आओ, सैर करें भारत की' पुस्तक के अलावा प्रतिष्ठित पत्र-पत्रिकाओं में गंभीर आलोचनात्मक लेख और बच्चों की कहानियाँ, लेख वगैरह छपे।

उन्होंने जो रास्ता चुना, उस पर चले। मगर अपनी इस मामूली तनखा में पाँच बच्चों की पढ़ाई का बोझ उठाना उन्हें मुश्किल लग रहा था। तब माँ आगे आईं। बोलीं, ''मुझे चाहे कितने ही कष्ट उठाने पड़ें, पर मैं अपने बच्चों को हर हाल में पढ़ाऊँगी।''

और वे अपने सारे सुख एक-एक कर छोड़ती गईं। मन में एक ही धुन, बच्चे पढ़ें, पढ़-लिखकर आगे बढ़ें!

विमलाजी बच्चों के दिप-दिप करते चेहरे देखतीं, तो कहीं-न-कहीं उन्हें भीतर तसल्ली होती कि उनकी मेहनत बेकार नहीं जा रही है। सब बच्चे ध्यान से पढ़ते थे, समझदार थे। पर अकेले बिन्नू के कारण वे परेशान थीं। और यह परेशानी दिनोदिन बढ़ती ही जा रही थी। बिन्नू का पढ़ाई से जैसे कोई रिश्ता ही न था। माँ उसे देखतीं और अंदर-अंदर रोतीं कि मेरा एक बेटा ऐसा कैसे निकल गया?

आज सुबह ही बिन्नू की क्लास टीचर ने उन्हें स्कूल में बुलवाया था। फिर सख्त लहजे में कहा था, ''विमलाजी, आप अपने बेटे को समझाती क्यों नहीं हैं? वह कई-कई पीरिएड्स स्कूल से गायब रहता है। बस्ता क्लास में पड़ा रहता है और इसका कुछ पता-ठिकाना ही नहीं। आपसे मैंने पहले भी कहा है, इसे कसकर रखें, वरना लड़का फेल हो जाएगा। फिर आप मेरे पास शिकायत लेकर न आना कि लड़का क्यों फेल हो गया?''

विमलाजी पहले भी दो बार स्कूल जाकर दुःखी मन से लौटी थीं, पर इस बार तो वे बिल्कुल टूट ही गईं। सोचने लगीं, 'हे भगवान्, इतना कुछ मैं कर रही हूँ। क्या यह अकारथ चला जाएगा?'

सचमुच रात-दिन कड़ी मेहनत करके वे बच्चों को पढ़ा रही थीं। खुद भी आसपास के लोगों के कपड़े सीकर वे किसी तरह घर की गाड़ी चला रही थीं। बाकी बच्चे पढ़ने में बहुत अच्छे थे। सभी अपनी क्लास में फर्स्ट आते थे। फेल होने की नौबत आएगी, यह तो कोई सोच भी नहीं

सकता था। तो फिर अकेला बिन्नू ही ऐसा कैसे निकल आया, जिसकी वजह से उन्हें इतना अपमानित होना पड़ा?

घर आकर उन्होंने बिन्नू को काफी समझाया। बोलीं, ''बेटा, आज मुझे तेरी वजह से कितना कुछ सहना पड़ा। पूरी क्लास में मेरी बेइज्जती हुई कि इनका बेटा ऐसा है। सुनकर मुझे कितना दु:ख हुआ होगा, तू सोच सकता है? तू अपनी बहन और भाइयों की ओर देख। वे लोग कैसे हैं और तू कैसा है? तू उनसे क्यों नहीं सीखता? वे अच्छे नंबर लेकर आते हैं तो माँ-बाप का मन कितना खुश होता है! तू भी तो इसी तरह पढ़-लिख सकता है न, क्या कमी है तुझमें? पढ़ेगा तो तेरे भी नंबर अच्छे आएँगे और सबको खुशी होगी। हमें भी लगेगा कि हम बच्चों के लिए इतना कर रहे हैं, तो बच्चों ने भी कुछ करके दिखाया।''

पर बिन्नू चुप, एकदम चुप। जैसे किसी बात का असर ही नहीं।

कई बार विमलाजी गुस्से में डाँटती-फटकारती भी थीं। पर बिन्नू चिकना घड़ा बन गया था। वह चुपचाप डाँट-फटकार सुन लेता, पर अगले दिन से फिर वही हाल। बिन्नू की माँ अंदर-ही-अंदर रोतीं और आँसू पीती रहतीं।

□

असल में बिन्नू की क्लास में काफी ऊधमी और बिगड़े हुए तीन-चार लड़के थे। मस्ती और आवारागर्दी में ही उनका सारा समय जाता था। इनमें से एक तो पिछले तीन साल से फेल होता आ रहा था। बाकी सारे दोस्त भी ऐसे ही थे। एकदम आवारा और लापरवाह। बिन्नू भी उन्हीं के साथ रहने लगा था। उन लड़कों ने बिन्नू को अपनी मंडली में शामिल किया और उसकी मासूमियत का नाजायज फायदा उठाने लगे।

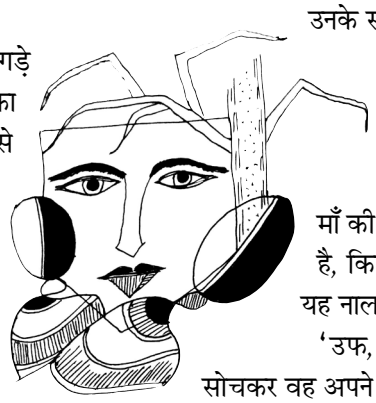

''बिन्नू, आज नई पिक्चर आई है, चलना है?''

''बिन्नू, चल आज केशोराम लाहौरवाले की मशहूर चाट खाने चलते हैं!''

''बिन्नू, आज तो देवानंद की पिक्चर आई है, खूब टनाटन ब्लैक में बिकेंगी टिकटें। चल, आज तो मौज है, यार!''

उस आवारा मंडली की ऐसी ही कारगुजारियों के बीच कहीं गुम हो गया था बिन्नू। और अब उसे रास्ता नहीं सूझ रहा था।

स्कूल से भागकर नई से नई पिक्चरें देखना इस मंडली का पहला शौक था। कोई भी नई पिक्चर किसी सिनेमा हॉल में लगती, तो यह शरारती चौकड़ी सबसे पहले वहाँ मौजूद रहती। ये लोग सबसे पहले लाइन में लगकर इकट्ठी पंद्रह-बीस टिकटें खरीद लेते। फिर वहीं खड़े-खड़े उन्हें ब्लैक में बेचते। नई पिक्चर का पहला शो देखनेवाले शौकीनों की तो कोई कमी थी नहीं। इस तरह ड्योढ़े-दूने दामों में बेचकर उनकी अपनी टिकटों का भी इंतजाम हो जाता।

पैसा जेब में आते ही कभी वे कहीं मटरगश्ती करने निकल जाते, कभी किसी रेस्तराँ में बैठकर चाट-पकौड़ी उड़ाते। कभी-कभार भीड़ का फायदा उठाकर वे किसी का कोई छोटा-मोटा सामान भी उड़ा लेते। किशोर वय की बेफिक्री के पूरे मजे वे उड़ाना चाहते थे, जिसमें कहीं कोई रोक-टोक न हो। और आगे के जीवन या परिणाम पर तो वे शायद सोचते ही न थे।

बिन्नू जब इस चौकड़ी में शामिल हुआ तो वह आठवीं में था। तब तक वह पढ़ाई में ठीक ही चल रहा था, कभी फेल नहीं हुआ था। पर दसवीं तक आते-आते वह बिल्कुल चौपट हो चुका था। किताबों से मानो उसका कोई वास्ता न रह गया हो। हालत यह थी कि किताबें देखते ही उसे डर लगने लगता, जैसे किताबें न हों, कोई भूत हों। लिहाजा परिणाम वही हुआ, जो पहले से ही दिख रहा था। पाँचों भाई-बहनों में वह अकेला था, जो दसवीं में लुढ़क गया था, और वह भी बुरी तरह फेल। किसी भी विषय में उसके सौ में से पंद्रह-बीस से ज्यादा नंबर नहीं थे।

विमलाजी जब स्कूल से उसकी अंकतालिका लेकर आ रही थीं, तो दु:ख और चिंता के मारे उनकी टाँगें काँप रही थीं। बिल्कुल रोने-रोने को हो रही थीं। उधर बिन्नू भी डरकर घर में ही बैठा हुआ था। विमलाजी ने बिन्नू की अंक-तालिका उसके आगे रखते हुए कहा, ''ले बेटा, देख ले अपने नंबर। तूने अपनी माँ की मेहनत और तपस्या का अच्छा सिला दिया।''

कहते-कहते उनका चेहरा आँसुओं से भर गया और वे रो पड़ीं। उनके साथ ही जाने कब बिन्नू भी फूट-फूटकर रो पड़ा।

□

उस दिन बिन्नू ने अपने अंदर-ही-अंदर जैसे एक भूचाल सा महसूस किया। दु:ख के मारे उसका कलेजा फटा जा रहा था। उसे अपने से ज्यादा माँ की चिंता थी। आह, उसने माँ को कितना कष्ट पहुँचाया है, किसलिए भला? माँ भी सोचती होंगी, उनके बच्चों में यह नालायक बेटा कहाँ से आ गया?

'उफ, मैं तो ऐसी माँ का बेटा कहलाने लायक भी नहीं हूँ।' सोचकर वह अपने आपको धिक्कार रहा था।

इस दु:ख के अहसास के साथ ही बिन्नू ने महसूस किया कि जैसे भीतर-ही-भीतर उसे कहीं रोशनी नजर आ रही है। उसे अपना रास्ता दिखाई पड़ रहा है। उसने मन-ही-मन पक्का निश्चय कर लिया कि चाहे जो भी हो, अब वह रात-दिन दुष्टता के कामों में लगे रहनेवाले ऊधमी लड़कों की चौकड़ी छोड़ देगा और अपना अलग रास्ता बनाएगा।

और सचमुच उसने जो फैसला किया था, उस पर अटल रहा। स्कूल में उन बच्चों को देखकर वह पीठ फेर लेता। घर पर भी कई बार वे उसे बुलाने आए, कई तरह का लालच दिया, पर बिन्नू उनके साथ नहीं गया। वह जान गया था कि यह काली राह है, जिस पर चलकर कालिख के सिवा कुछ हासिल नहीं होगा। अगर कभी पुरानी चीजों की ओर उसका मन आकर्षित भी होता, तो माँ का आँसुओं से डबडबाया चेहरा एकाएक उसके सामने आ जाता, जो उसे खबरदार करता था, ''नहीं बेटे, अब भटकना नहीं...नहीं मेरे लाल!''

अब बिन्नू ज्यादातर समय या तो चुप रहता या फिर पढ़ाई में ही लगाता। माँ या पिता किसी काम के लिए कहते, तो वह दौड़कर जाता और झटपट कर लाता। मानो मन-ही-मन उसने तय कर लिया हो कि उसने माँ-बाप को बहुत कष्ट दिए और अब उन्हें सुख देने की पूरी

कोशिश करेगा।

अब बिन्नू अपनी किताबें पढ़ता तो पहले की तरह उसका ध्यान उचटता नहीं था। वह जैसे अपने आप से ही कहता, ''अरे, इतनी मुश्किल तो नहीं है पढ़ाई, जितनी मुझे तब लगती था।'' बल्कि उसे लगता कि किताबें पढ़ने का सच्चा आनंद उसे अब मिल रहा है। ज्ञान की एक नई ही दुनिया मानो उसके आगे खुल रही थी। कोई मुश्किल आती तो बड़ी बहन सुजाता मदद कर देती या फिर भाई शचींद्र, जो रात-दिन पढ़ाई में ही लगा रहता था और खूब होशियार था।

सुजाता भी अब खयाल रखती थी कि बिन्नू पढ़ रहा है या नहीं। कभी-कभी पूछ लेती, ''बिन्नू कोई मुश्किल तो नहीं आ रही न?''

''नहीं दीदी, अब तो अच्छा लग रहा है। सब समझ में आ जाता है।'' बिन्नू जवाब देता।

''तो पहले क्या बात थी? कोई भूत घुस गया था क्या दिमाग में?'' सुजाता पूछती।

''हाँ···!'' बिन्नू धीरे से सिर हिलाते हुए हँसता।

''ओहो, तो अब चला गया भूत कि अभी है थोड़ा-थोड़ा···?'' सुजाता मुसकराते हुए पूछती।

''नहीं, नहीं, अब तो गया, बिल्कुल ही चला गया!'' बिन्नू सिर पर गोल-गोल चकरी की तरह हाथ घुमाते हुए जोर से हँस पड़ता।

साल बीतते न बीतते फिर से परीक्षाएँ आ गईं। इस बार बिन्नू ने अपनी तरफ से पूरी कोशिश की। बहुत मेधावी तो वह नहीं था, फिर भी ठीक-ठाक नंबरों से पास हो गया। उसके पास होने की खुशी घर भर को हुई। माँ ने तुरंत गरमागरम हलवा बनाया और सबको खिलाया। बिन्नू की आँखों में उस दिन सच्ची तृप्ति थी।

यह बिन्नू की छोटी सी सफलता का एक छोटा सा दीया था, जिसके टिम-टिम प्रकाश में उसे आगे की राह नजर आ रही थी।

इसके बाद उसके पैर कभी अटके नहीं, भटके नहीं। दसवीं पास करने के बाद उसने कड़ी मेहनत करके बी.ए. किया। घर के जो हालात थे, उनमें उसको यहीं पढ़ाई रोककर नौकरी ढूँढ़नी थी। उसने नौकरी के लिए कई जगह आवेदन किया, परीक्षाएँ दीं। आखिर उसे एक अच्छी सरकारी नौकरी मिल गई, जहाँ उसे कैशियर का काम करना था।

लेकिन अब एक अजीब सी मुश्किल थी उसके सामने। बिन्नू ने पिछले तीन-चार बरसों में खुद को खासा बदला था, लेकिन बहुतों के मन में उसकी वही पहलेवाली दागदार छवि थी। लिहाजा जो भी बिन्नू की इस नौकरी लगने की बात सुनता, तो वह आश्चर्य प्रकट करता। फिर बड़े ही व्यंग्यात्मक लहजे में कह उठता, ''नौकरी लग गई, यह तो अच्छा है। पर निभा ले, तब जानो।''

एक-दो लोग तो साफ-साफ शब्दों में कहते, ''देखना, इस नौकरी को यह ज्यादा दिन चला नहीं पाएगा। जरूर कोई-न-कोई ऐसा गुल खिलाएगा कि···!''

बिन्नू लोगों की बातें सुनता। कुछ उसके मुँह पर भी कहते तो कुछ पीठ पीछे। वह सिर्फ मुसकराते हुए उन सबके कटु व्यंग्य झेलता। जवाब नहीं देता था। पर भीतर-ही-भीतर वह बदल चुका था। उसके भीतर एक छोटा सा दीया हमेशा टिमटिमाता रहता, जो उसे अँधेरे की काली राहों से बचाता।

उसने दृढ़ निश्चय कर लिया था कि अब उसे एक अच्छा और नेक इनसान बनना है, जो हर दुःखी और परेशान आदमी की मदद करे। और सचमुच बिन्नू का जीवन अब एक अलग ही राह पर चल पड़ा। उसकी सरलता और भलमनसाहत देखकर लोग चकित होते हैं।

उसके साथ काम करनेवाले लोगों का ध्यान पैसा जमा करने पर था। लेकिन बिन्नू की कमाई कुछ और थी। वह हँसकर कहा करता, ''जब मैं किसी सच्चे जरूरतमंद की मदद करता हूँ और उसकी आँखों में मुझे खुशी की झलक मिलती है, तो लगता है, यही मेरी सच्ची कमाई है।'' उसका यह व्यवहार घर पर भी था, घर के बाहर भी और दफ्तर में भी।

दफ्तर में अगर कोई अपनी कोई समस्या लेकर आता, तो बिन्नू सबसे पहले उसकी मदद के लिए आगे आ जाता, ताकि वह शख्स परेशान होकर इधर-उधर न भटके। एक भले मित्र की तरह वह उसकी सहायता करता। जाते समय लोग कृतज्ञ आँखों से उसे धन्यवाद देकर जाते। और बूढ़े-बुजुर्ग तो उसका हाथ पकड़कर कहते, ''बेटा, तेरा यह प्यार हम हमेशा याद रखेंगे। हमें उम्मीद नहीं थी कि आज भी ऐसे नेक और भले लोग हैं।''

इस पर बिन्नू हँसकर कहता, ''नेक लोगों को तो सभी नेक ही लगते हैं। यह आपकी नेकी की खुशबू है कि मैं आपको इतना अच्छा लग रहा हूँ।''

धीरे-धीरे उसकी मशहूरी सबकी मदद करनेवाले बिन्नू के रूप में हो गई। दफ्तर में हर कोई उसे ढूँढ़ता हुआ आता। हर किसी के होंठों पर उसका नाम। उसके अच्छे कामों की खुशबू दूर-दूर तक फैल रही है, तो भला बिन्नू की माँ···यानी विमलाजी तक क्यों न पहुँचेगी? उनके और बेटे बड़े अफसर हैं, पर उनका खुद का सहारा तो यही बेटा है, जिसके कारण बरसों पहले वे एक दिन दुःखी होकर फूट-फूटकर रो पड़ी थीं। रात हो या दिन, पुकारते ही सामने हाजिर। जैसे उसका ध्यान हर वक्त माँ और पिता की ओर ही लगा रहता हो।

कभी-कभी वे कहती भी हैं, ''ऊँची पढ़ाई और डिग्रियाँ तो मेरे घर में सभी ने लीं, पर शिक्षा का सही अर्थ तो सिर्फ बिन्नू ने ही जाना है। यही मेरी आँखों का उजाला है।''

इस पर बिन्नू आँखें झुकाए जवाब देता है, ''माँ, अगर तूने मुझे राह पर लाने की इतनी कोशिश न की होती, तो मैं तो आज राह का कंकड़-पत्थर ही होता। तेरी सीख ने मुझे आदमी बना दिया। तूने मेरे अंदर एक छोटा सा दीया जलाया था माँ, और आज···!''

''चह-चह-चह···!'' उसी समय आँगन में अमरूद के बड़े से पेड़ पर बैठी गौरैयों का झुंड जोर से चहचहा उठता है। मानो बिन्नू की आवाज में आवाज मिलाकर वे कह रही हों, ''हाँ-हाँ, ठीक···यह बिल्कुल ठीक है!''

साअ
५४५ सेक्टर-२९,
फरीदाबाद-१२१००८ (हरियाणा)
दूरभाष : ०९९१०८६२३८०

मूर्ख दौड़ते भ्रम में पड़कर

● बसंता

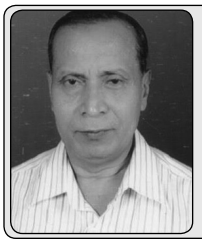

सुपरिचित कवि एवं रचनाकार। विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में रचनाएँ प्रकाशित। संप्रति अंग्रेजी विभाग के प्रोफेसर एवं अध्यक्ष, सरदार वल्लभभाई पटेल महाविद्यालय, कैमूर (बिहार)।

बिखरे मोती

मन के मोती बिखर गए तो, उन्हें पिरोएँ चुन-चुनकर,
विकल वेदना पिघल गई तो, आँसू बनकर गिरे बदन पर।
सागर में यदि उथल-पुथल हो, नाविक चलता सँभल-सँभलकर,
टकराहट की नौबत हो तो, समाधान हम करें पहल कर।

प्यास से व्याकुल पथिक हुआ तो, नीर चाहिए उसे तृप्ति भर,
दुर्गम पथ चाहे जैसा हो, बढ़ते जाएँ हम साहस कर।
अगर कहीं अन्याय दिखे तो, करें विरोध हम उसका डटकर,
अहं से दूर रहें हम निश-दिन, विनम्रता हो अपने अंदर।

हम कैसे इनसान हो गए, स्वार्थ भरा है कूट-कूटकर,
लिप्सा की उत्ताल तरंगें, दहक रही हैं पावक बनकर।
मर्यादाएँ सिसक रही हैं, बिखर रही हैं टूट-टूटकर,
बहुत दूर जाना मुसाफिर, बाँध अपनी गठरी कसकर।

मन में पाप प्रवेश कर जाता, तरह-तरह का रूप बदलकर,
घर में दानव घुस जाता है, कभी-कभी तो देव रूप धर।
मनोकामना पूर्ण हुई तो, खुश होते हैं उछल-उछलकर,
गलत राह पर चलने वाले, गिर जाते हैं फिसल-फिसलकर।

धूप-छाँव जीवन में होता, करेंगे क्या तकदीर को पढ़कर,
सुख-दुख तो कर्मों से होता, करेंगे क्या हम किसी से लड़कर।
लिप्सा ही दुख कारण है, दुखी हो रहे इसमें फँसकर,
सत्यनिष्ठ हम रहें अगर तो, स्वर्ग धरा पर आए चलकर।

प्रेम के धागे टूट गए तो, उन्हें मिलाएँ जोड़-जोड़कर,
सत्य सहज निर्मल होता है, नहीं बिगाड़ें इसे मरोड़कर।
सही राह पर चलने वाले, नहीं भागते राह छोड़कर,
मन से ही सुख-शांति संभव, मूर्ख दौड़ते भ्रम में पड़कर।

मान नहीं यदि मिले जहाँ पर, कूच करें वह जगह छोड़कर,
अगर मुसीबत में कोई हो तो, मदद करें हम त्वरित दौड़कर।
समय बहुत बलवान रे भाई, चलें नहीं हम बहुत अकड़कर,
सत्य मार्ग के पथिक बनें हम, पाँव पढ़ाएँ सोच-समझकर॥

मन का परिचय

गाँव से दूर पहाड़ी पर एक युवा संत एक दिन आया।
देख वहाँ की आकर्षक छवि, ब्रह्मनिष्ठ का मन ललचाया॥
भिक्षाटन को निकल गया वह, द्वार-द्वार जा अलख जगाया।
देर शाम तक क्षुधा-तृप्ति के लिए पूर्ण भोजन पाया॥

गाँव के अच्छे लोगों ने उसके लिए कुटी बनवाया।
लोगों को उसने अपने को एक महायोगी बतलाया॥
सुबह-शाम होता प्रवचन, ज्ञान का उसने दीप जलाया।
धीरे-धीरे सभी लोगों को उसने चमत्कार दिखलाया॥

अंदर से वह प्रमुदित होता, ध्यान योग को सतत बढ़ाया।
ज्ञानयोग का अवलंबन ले, उसने सौम्य रूप दिखलाया॥
खान-पान सुंदर होने से अपने को वह खूब सजाया।
समय बीतता गया वहाँ पर, संत ने सबको ज्ञान बताया॥

जेठ माह की दोपहरी में, वहाँ एक युवती आई।
सुंदरता में अनुपम सुंदर, नैन कटाक्षकर वह मुसकाई॥
ब्रह्मचारी के निकट पहुँचकर, उसने प्रश्न किया बिंदास।
सुना कोई योगी-यती, कुछ दिनों से यहाँ कर रहे प्रवास॥

निरख-निरख उसके यौवन को, अंदर की शुचिता भागी।
विचलित सत्वर हुआ संत वह, देहासक्त हुआ अनुरागी॥
दोनों हाथ उठाकर सत्वर, परम ब्रह्मचारी वह बोला।
यहाँ पर कोई संत नहीं है, पीपल-पात सरिस मन डोला॥

सा.अ.
अध्यक्ष, अंग्रेजी विभाग
सरदार वल्लभभाई पटेल महाविद्यालय
भभुआ-८२११०१ (बिहार)
दूरभाष : ०९४३०५८१२४६

पाठकों की प्रतिक्रियाएँ

'साहित्य अमृत' का दिसंबर अंक हम सबके प्रिय प्रधानमंत्री श्री अटल बिहारी वाजपेयीजी के व्यक्तित्व को समग्रता में समेटे अत्यंत श्लाघनीय है। सभी लेख व संस्मरण वाजपेयीजी के व्यक्तित्व के विभिन्न पहलुओं, प्रखरता, विद्वत्ता, सदाशयता, वाक्पटुता, प्रत्युत्पन्नमति को बड़े भावपूर्ण शब्दों में चित्रित करते हैं। अतीत जीवंत व साकार होता लगता है। 'मुझे कुछ कहना है' में लंबे राजनीतिक घटनाक्रम को वाजपेयीजी की कलम से गहराई से जानने-समझने का अवसर मिला। जहाँ पहले संसद् में वैचारिक मतभेद होते हुए भी देश सर्वोपरि था, वहीं अब येन-केन-प्रकारेण सत्ता हथियाना और राष्ट्र विरोधी तत्त्वों से साँठगाँठ करना प्रत्यक्ष दीखता है। अभी तो बहुत कुछ पढ़ना शेष है। ऐसे उत्तम अंक के लिए समस्त 'साहित्य अमृत' परिवार को हार्दिक बधाई।

—माला श्रीवास्तव, ग्रेटर नोएडा

'साहित्य अमृत' का दिसंबर अंक पढ़कर मन धन्य हो गया। सारे भाजपा नेताओं ने स्वर्गीय अटल बिहारी वाजपेयी के साथ गुजरे पलों को याद कर पत्रिका के माध्यम से पाठकों के समक्ष उड़ेल दिया। इस अंक में बहुत कुछ पढ़ने को मिला, जिसे मैं मरते दम तक भूल न पाऊँगा। अटलजी जैसा नेता सदियों में एक बार पैदा होगा। संपादकीय यादगार बन गया। अटलजी के साथ गुजरे पल को कभी नहीं भूला सकते हैं।

—बद्री प्रसाद वर्मा 'अनजान', गोरखपुर

'साहित्य अमृत' का 'अटल स्मृति विशेषांक' प्राप्त हुआ। यह एक यादगार दस्तावेज के रूप में निधि रहेगा। विशेषांक में संपादक मंडल ने जिस कुशलता के साथ सचित्र सामग्री प्रस्तुतीकरण का सर्वग्राह्य कार्य किया है, वह स्तुत्य है, अनुमेय है। विभिन्न क्षेत्र के ३३ गणमान्य विद्वज्जनों के व्यक्तिगत संस्मरण अटलजी के जीवन के बहुआयामी राजनैतिक, पत्रकार, साहित्यकार, अदम्य राष्ट्रभक्ति, नेतृत्व के गुणों की विशेषता का विशेषांक है। इसे पढ़कर संतुष्टि व सुकून मिला। 'साहित्य अमृत' अपने नाम को सार्थक करता है।

—स्वामी खुशालनाथ 'धीर', बाड़मेर (राज.)

भारत के पूर्व प्रधानमंत्री श्री अटल बिहारी वाजपेयी के विराट् व्यक्तित्व पर केंद्रित 'साहित्य अमृत' का दिसंबर अंक मिला। उनके जीवन, कार्यकलाप, राजनीतिक परिक्षेत्र, साहित्यिक-सांस्कृतिक संबंध में देश के महान् विभूतियों-विद्वानों के मार्मिक संस्मरणों से संपृक्त आलोच्य अंक एक महत्त्वपूर्ण दस्तावेज है। वस्तुत: वाजपेयीजी भारत के ही नहीं, संपूर्ण विश्व के एक महान् नायक थे। उनका कालजयी व्यक्तित्व अपने आपमें बड़ा है। वे राजनीति के भीष्म पितामह तो थे ही, साहित्य और संस्कृति के पुरोधा भी थे। उनकी कविताओं में नया चिंतन, नई सोच, नई दिशा और नई दृष्टि है। कुछ कविताओं में चेतना की ऐसी अद्भुत ऊर्जा है, जो मानवीय, सामाजिक और राष्ट्रीय बोध को जाग्रत् करती है। वे बड़े दृढ़-निश्चयी, सरल, विनम्र, स्पष्टवक्ता थे। उनसे मिलने का मुझे भी सौभाग्य मिला। अंक के उनके भाषण के ७ अंश सप्तर्षि जन-मन को आलोकित करने में सक्षम हैं। उनमें गहरी संप्रेषणीयता है—'आणविक शक्ति के शांतिमय उपयोग में हमारा दृढ़ विश्वास', 'विकास का आधार : जय जवान, जय किसान, जय विज्ञान' और 'आइए, मिलकर काम करें' ये विचार बिंदु हमें सदैव उत्प्रेरित करते रहेंगे। 'पाञ्चजन्य के प्रश्न अटलजी के कालजयी उत्तर' वाकई कालजयी ही हैं। उनके मार्मिक संस्मरणों को माननीय उपराष्ट्रपति एम. वेंकैया नायडु, प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी, सुषमा स्वराज, राम नाईक, ओमप्रकाश कोहली, लालजी टंडन, देवेंद्र स्वरूप, दाऊजी गुप्त, सोनल मानसिंह, वेदप्रताप वैदिक और शाहनवाज हुसैन ने सँजोया है। उनकी प्रस्तुति पत्रिका की थाती है। आलेखों में विद्वानों की अभिव्यक्ति बड़ी ज्ञानवर्धक और वाजपेयीजी को भीतर तक जानने-समझने-देखने का आईना है। 'चित्रों में अटल जी' चार पृष्ठों में भी चित्रावलियाँ उन्हें जीवंत बनाती हैं। ये झाँकियाँ उनकी जीवन-यात्रा की ऐतिहासिक धरोहर के रूप में पत्रिका को संग्रहणीय बनाने में अपनी अहम भूमिका अदा करती हैं। अति उत्तम सार्थक संपादन के लिए साधुवाद।

—डॉ. राहुल, दिल्ली

'साहित्य अमृत' का दिसंबर अंक यथासमय प्राप्त हुआ। राष्ट्रपुरुष अटलजी की स्मृति को समर्पित यह विशेषांक तो अद्भुत है। दो सौ बावन पृष्ठों का और अटलजी के व्यक्तित्व और कर्तृत्व को अपनी संपूर्णता में समेटे यह अंक 'साहित्य अमृत' के विशेषांकों की शृंखला में मुझे श्रेष्ठतम लगा है। साहित्यिक पत्रकारिता जगत् में ऐसे उदाहरण कम ही देखने को मिलते हैं। मुझे विश्वास है अटलजी को जानने और पहचानने में इस अंक की भूमिका अत्यंत महत्त्वपूर्ण सिद्ध होगी। संपादकीय से लेकर साहित्य की महत्त्वपूर्ण विधाओं के माध्यम से अटलजी के व्यक्तित्व को जिस रोचकता और सरलता से इस अंक के माध्यम से उजागर किया है, सचमुच यह आपकी विशिष्ट उपलब्धि है। वैसे भी आज की साहित्यिक पत्रिकाओं में 'साहित्य अमृत' का हस्तक्षेप बेजोड़ है; जितनी प्रशंसा की जाए, कम ही होगी। इस अंक की परिकल्पना और प्रस्तुति के लिए मैं समस्त रचनाकारों तथा संपादक मंडल को हार्दिक बधाई देता हूँ।

—भैरूँलाल गर्ग, भीलवाड़ा (राज.)

'साहित्य अमृत' मेरे नियमित अध्ययन में शामिल है। इसमें लिखता भी रहा हूँ। इसके विशेषांकों को प्राय: सहेजकर रखता हूँ। विशेषांकों की अतुल्य परंपरा में ही अटलजी पर बेहतरीन अंक निकालकर आपने राजनीति की शुचिता के नियामक कवि राजनेता अटल बिहारी वाजपेयी को समुचित रूप से स्मरण किया है। अटलजी संघ व भाजपा के वरेण्य नेता थे, पर प्राय: अन्य विचारधारा व दलों के नेताओं के लिए भी स्वीकार्य थे। उनके गुणों के देश-विदेश में सभी प्राय: प्रशंसक थे। उनकी विचारधारा से असहमत रहनेवाले भी उनके व्यक्तिगत औदार्य, कवित्व, हाजिरजवाबी, आत्मीयता व देशभक्ति के प्रशंसक हैं। यहाँ प्राय: अटलजी विचारधारा के नेताओं के संस्मरण व आलेख हैं, जिनमें

बहुत से बहुत अच्छे हैं। मैंने पत्रिका पाते ही डी.पी. त्रिपाठीजी, मृदुला सिन्हाजी, तरुण विजयजी, बल्देव भाई शर्माजी, सुषमा स्वराजजी आदि के संस्मरण पढ़े, जो अच्छे लगे। स्वयं सुधी विचारक संपादक के रूप में आपका (टी.एन. चतुर्वेदीजी) संस्मरणात्मक संपादकीय अटलजी के सौमनस्य व आपकी अगाध स्मरणशक्ति का परिचायक है। आप जो भी लिखते हैं, रमकर लिखते हैं। मेरी हार्दिक बधाई स्वीकारें इस बेहतरीन अंक के लिए। एक कवि राजनेता पर इससे बड़ी और कोई श्रद्धांजलि नहीं हो सकती।

—ओम निश्चल, नई दिल्ली

'साहित्य अमृत' का दिसंबर अंक बेहद ही खास और संग्रहणीय है। साहित्य अमृत और प्रभात प्रकाशन से वाजपेयीजी का बहुत ही पुराना और स्नेही संबंध रहा है। आदरणीय वाजपेयीजी की स्मृति में इस विशेषांक के लिए ढेर सारी हार्दिक शुभकामनाएँ स्वीकारें। राजनीति के शिखर पुरुष, दूरदर्शी, विरोधियों को भी सम्मान देनेवाले, ओज और उत्साह के कवि, सहृदय मानव और सजग जननायक अटल बिहारी वाजपेयीजी भारतीय राजनीति और राष्ट्रीयता की पहचान थे। विदेश नीति, स्वदेश नीति और समाजनीति की उन्हें गहरी समझ थी। वे हमेशा जोड़कर चलनेवाले थे, तोड़कर नहीं। उनकी कविताओं और भाषणों में जहाँ एक जननायक का राष्ट्र निर्माण के लिए खुशहाली का स्वप्न है, वहीं हाशिए पर पड़े दीन-हीन के प्रति सच्ची संवेदना भी है। हालाँकि इतने महान् और बहुआयामी व्यक्तित्व को इतने में समेटना संभव नहीं है। 'कुछ कहना है', 'विदेश नीति में अंतरराष्ट्रीयता का अतिरेक' और 'आओ मिलकर काम करें' लेख पढ़कर मन गद्‌गद हो गया। 'विकास का आधार : जय जवान जय किसान, जय विज्ञान' लेख में वे भारत को विश्व शक्ति के रूप में देखना चाहते थे, ताकि भारत हर दृष्टि से संपन्न और आत्मनिर्भर बने। वाजपेयीजी के विचार पढ़कर उनके सम्मान में सीना गर्व से तन गया। इस अंक से जुड़े लेखक और दूसरे भी वे लोग बहुत ही सौभाग्यशाली है, जिन्होंने इस महान् राष्ट्रवादी और कर्मठ राजनेता के साथ काम किया और उनका सान्निध्य पाया है। 'अटल स्मृति' अंक का सफल आयोजन करके संपादक और संपादकीय टीम ने भारतीय जनमानस की भावनाओं का सम्मान किया है और परम श्रद्धेय अटलजी को सच्ची श्रद्धांजलि दी है।

—अशोक बैरागी, सोनीपत (हरि.)

'साहित्य अमृत' का दिसंबर अंक पढ़ने को मिला। अटलजी के संबंध में देश के जाने-माने लेखकों-पत्रकारों-विचारकों के साथ राजनीतिक हस्तियों के अनुभव, जो उन्होंने अटलजी के साथ बिताए, उनका विस्तारपूर्वक वर्णन है। अटलजी जैसा नेता भारतीय राजनीति में आज तक देखने को, सुनने को नहीं मिला। जाने-माने पत्रकार तथा कांग्रेस के नेता राजीव शुक्ला का आलेख भी पढ़ने को मिला। सभी लेखकों ने उनके अनेकों पहलुओं के बारे में जिक्र किया है, लेकिन किसी ने उनके जीवन में ग्वालियर की उनकी सहपाठी राजकुमारी कौल का और उनकी पुत्री का कहीं भी जिक्र नहीं किया है, जबकि उनका अटलजी के जीवन से एक अटूट रिश्ता था। नमिता उन्हीं राजकुमारी कौल की पुत्री हैं, जिनको अटलजी ने अपनी दत्तक पुत्री बनाया, क्योंकि जो जिसके सुख-दुःख में हमेशा साथी रहता है, वही सच्चा दोस्त, सच्चा रिश्तेदार होता है। यही रिश्ता राजकुमारी कौल और नमिता का उनके साथ था, जो उन्होंने आखिरी समय तक निभाया। अटलजी के बारे में जितना भी लिखा जाए, कम है। यदि लिखने लगें तो एक ग्रंथ सा बन जाएगा। यह अंक वास्तव में एक ऐसा अंक है, जो पढ़ने तथा उनकी यादों को अपने पास सँजोए रखने के लायक है। इस अंक को इतना सुंदर बनाने के लिए बधाई देता हूँ।

—ब्रजमोहन जैन, दिल्ली

'साहित्य अमृत' का नवंबर अंक देखा। 'न्यायपालिका के बदलते आयाम' पर आपके विचारों ने एक अच्छी रोशनी दी, जिससे मैं प्रभावित हुआ। गांधी को खोजें कहाँ? गांधी तो अपने विचारों और दृष्टि में ही मिलेंगे, जिनका अनुकरण और अनुसरण आज लोग करना नहीं चाहते हैं। रामवृक्ष बेनीपुरी की 'अमन के रक्षक', नरेंद्र कोहली की 'ईशरदास की वसीयत', विद्याविंदु सिंह का 'भाई के लिए बहन का दिया हुआ कवच—भैया दूज', महाराजकृष्ण रसगोत्र की 'उठा ले गई उसको', गरिमा संजय की 'संबंध विच्छेद', गोपाल चतुर्वेदी का 'मौसम के रंग' बहुत भाए। सभी रचनाकारों को बहुत-बहुत बधाई। 'साहित्य अमृत' के जलते दीपक की रोशनी में पगडंडियाँ साफ दिखती हैं। शहर-सड़क की कठोरता के साथ गाँवों की धुलभरी पगडंडियों का प्रेम भी मिल जाता है।

—नंदकिशोर तिवारी, वाराणसी

'साहित्य अमृत' की आत्मा तो उसका संपादकीय है। इतना लंबा समीक्षात्मक संपादकीय लिखने की कोई हिम्मत ही नहीं करता। अनेक सामयिक विषयों पर बहुत सटीक टिप्पणी रहती है इसमें। सर्वप्रथम संपादकीय पन्ने पूरे मनोयोग से पढ़ता हूँ, आपकी किसी टिप्पणी से असहमत भी रहता हूँ, पर पढ़ता पूरी हूँ। यह एक ऐसी पत्रिका है, जिसमें सभी विधाओं की रचनाएँ पढ़ने को मिल जाती हैं। देश में होनेवाली ढेरों साहित्यिक गतिविधियों की जानकारी एक जगह प्राप्त हो जाती है। पत्रिका ने पूरे देश में अपना एक अलग स्थान बना लिया है।

—राजेंद्र पटोरिया, नागपुर

'साहित्य अमृत' का 'वैश्विक हिंदी विशेषांक' अतीत-वर्तमान-भविष्य का जीवंत साक्षात् शोध-प्रबंध है। आज भारत मात्र ही नहीं वैश्विक हिंदी प्रेमियों को चातक की नाईं हिंदी के उत्तरोत्तर उन्नयन के चरम शिखर के स्वर्णिम भविष्य के पावस के आलोक की आकुल-व्याकुल आतुर प्रतीक्षा है, ताकि कह सकें—'हिंदी के हिंडोले में जरा तो बैठ जाइए।' और झूम जाइए।

—शालीन कुमार सिंह, बदायूँ (उ.प्र.)

वर्ग पहेली (१६०)

अगस्त २००५ अंक से हमने '**वर्ग पहेली**' प्रारंभ की, जिसे सुप्रसिद्ध शिक्षाविद् एवं ज्ञान-विज्ञान की अनेक पुस्तकों के लेखक **श्री विजय खंडूरी** तैयार कर रहे हैं। हमें विश्वास है, यह पाठकों को रुचिकर लगेगी; इससे उनका हिंदी ज्ञान बढ़ेगा और पूर्व की भाँति वे इसमें भाग लेकर अपना ज्ञान परखेंगे तथा पुरस्कार में रोचक पुस्तकें प्राप्त कर सकेंगे। भाग लेनेवालों को निम्नलिखित नियमों का पालन करना होगा—

१. प्रविष्टियाँ छपे कूपन पर ही स्वीकार्य होंगी।
२. कितनी भी प्रविष्टियाँ भेजी जा सकती हैं।
३. प्रविष्टियाँ ३१ जनवरी, २०१९ तक हमें मिल जानी चाहिए।
४. पूर्णतया शुद्ध उत्तरवाले पत्रों में से ड्रॉ द्वारा दो विजेताओं का चयन करके उन्हें दो सौ रुपए मूल्य की पुस्तकें पुरस्कारस्वरूप भेजी जाएँगी।
५. पुरस्कार विजेताओं के नाम-पते मार्च २०१९ अंक में छापे जाएँगे।
६. निर्णायक मंडल का निर्णय अंतिम तथा सर्वमान्य होगा।
७. अपने उत्तर '**वर्ग पहेली', साहित्य अमृत, ४/१९, आसफ अली रोड, नई दिल्ली-२** के पते पर भेजें।

वर्ग पहेली (१५८) का शुद्ध हल

१आ	२डं	ब	३र	■	४पि	५ता	म	६ह
७शा	क	■	८ब	९नि	या	■	१०र	जा
वा	■	■	■	ष्प	■	■	■	म
११न	१२थ	■	१३प्रे	क्ष	१४क	■	१५म	त
■	१६का	लु	ष्प	■	१७ल	ह	जा	■
१८मी	न	■	१९ता	२०री	फ	■	२१र	२२वि
मां	■	■	■	स	■	■	■	ला
२३स	२४खा	■	२५म	ना	२६ना	■	२७आ	य
२८क	ट	ह	ल	■	२९ना	श	पा	ती

★ पुरस्कार विजेता ★

१. **श्री वाइ.के. श्रीवास्तव**
१३९२ जय नगर, यादव कॉलोनी
जबलपुर-४८२००२ (म.प्र.)
दूरभाष : ९८२७६८३३५६

२. **श्री पुखराज वार्ष्णेय**
फ्लैट नं. ३० सी, डी.डी.ए.,
एम.आई.जी. पॉकेट-२, सेक्टर-७,
फेज-I, निकट रामफल चौक, द्वारका
नई दिल्ली-११००७५
दूरभाष : ९८१०८७१४६९

पुरस्कार विजेताओं को हार्दिक बधाई।

वर्ग-पहेली १५८ के अन्य शुद्ध उत्तरदाता हैं—सर्वश्री संतोष कुमार व्यास, अनुराग त्रिपाठी (राजगढ़), रेणु मिश्र (जयपुर), शिवशरण दुबे (कटनी), सरला लोढ़ा (उदयपुर), माणिक तुलसी राम गौड़ (बेंगलुरु), फकीर चंद ढुल (कैथल), सुधांशु बक्शी (अहमदाबाद), उमेश चंद सिन्हा (समस्तीपुर), फिरदौस जहाँ (दरभंगा), विनीता सहल (मुंबई), भूप सिंह (हरिद्वार), केशव सैनी (हिसार)।

बाएँ से दाएँ—

२. वेग, चाल (३)
५. भोजन बनाने के पात्र (४)
६. रोते-रोते साँस लेने की क्रिया (३)
७. किसी ग्रंथ का अति संक्षिप्त रूप (२)
८. बाजा बजानेवाला (३)
१०. सहेली (२)
११. सौगंध (३)
१२. जो बीत गया (२)
१३. भाग्य का खेल (३)
१४. छोटी नदी (३)
१५. स्वच्छ (२)
१६. प्राणदंड पाए अपराधियों के प्राण लेनेवाला (३)
१८. छोटा दल, मंडली (२)
२०. सूखा अंगूर (३)
२१. लोग (२)
२२. रात (३)
२३. लाल रंग का, सुर्ख (४)
२५. मृत्यु को प्राप्त होना (३)

ऊपर से नीचे—

१. दूध (२)
२. राजमहल में रानियों के रहनेवाला भाग (४)
३. शृंगारी प्रवृत्ति का मनुष्य (३)
४. वास्तविकता (४)
५. विरुद्ध (५)
७. पत्नी की माँ (२)
९. दमन करनेवाला (४)
११. लगभग (४)
१२. बेकार (५)
१५. सामान्य, मामूली (४)
१७. फटकारना (४)
१९. १००० किलोग्राम (२)
२०. किसी दूकान आदि का हिसाब-किताब रखनेवाला कर्मचारी (३)
२४. शुद्ध रक्तवाहिनी, धमनी (२)

वर्ग पहेली (१५९) का हल अगले अंक में।

वर्ग पहेली (१६०)

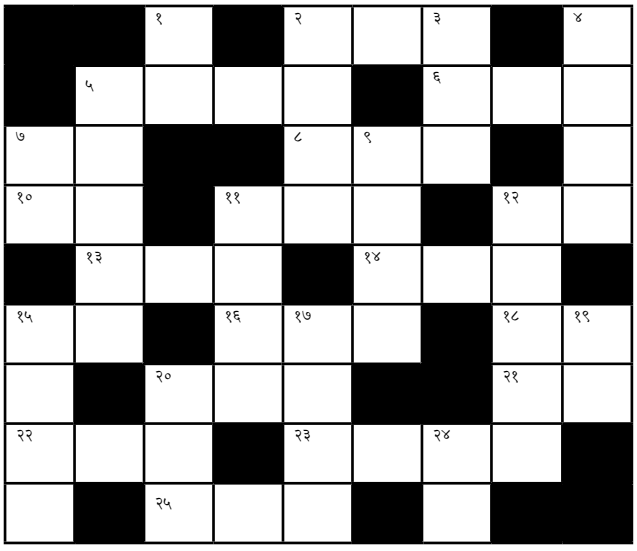

प्रेषक का नाम : .....

पता : .....

.....

.....

दूरभाष : .....

'भीगी रेत' कृति लोकार्पित

१० दिसंबर को नई दिल्ली के इंडिया हैबिटेट सेंटर में आयोजित प्रसिद्ध कवि श्री रवि शर्मा के जन्मदिवस पर उनके प्रभात प्रकाशन द्वारा सद्य:प्रकाशित काव्य-संग्रह 'भीगी रेत' का लोकार्पण करते हुए श्री लालकृष्ण आडवाणी ने कहा कि मुझे इस पुस्तक का लोकार्पण करते हुए गर्व का अनुभव हो रहा है। जिन्होंने भी रविजी की माँ पर कविता सुनी, उनको तो लगा होगा कि इससे बढ़िया कवि क्या होगा। रविजी से मेरा परिचय उनके राजनीतिक चिंतन के चलते हुआ, जिससे मैंने बहुत सीखा है। वरिष्ठ संपादक और इंदिरा गांधी राष्ट्रीय कला केंद्र के अध्यक्ष श्री राम बहादुर राय ने कहा कि 'भीगी-रेत' की कविताएँ इक्कीसवीं सदी की हैं, जिसमें भावनाएँ एक-दूसरे से बातचीत करती हुई दिखती हैं। प्रसिद्ध कहानीकार, पटकथा लेखक व कहानी प्रस्तुतकर्ता श्री नीलेश मिश्र ने कुछ कविताओं का पाठ किया तथा वरिष्ठ संपादक श्री अजय उपाध्याय ने कवि को उनके निरंतर लेखन के लिए शुभकामनाएँ दीं। कमोडोर के.एस. नूर ने कुशल संचालन किया। ☐

'मैं हिंदू क्यों हूँ' कृति लोकार्पित

२ दिसंबर को नई दिल्ली के इंटरनेशनल सेंटर, मल्टीपर्पज हॉल में डॉ. शशि थरूर की कृति 'मैं हिंदू क्यों हूँ' का लोकार्पण किया गया, जिसमें सर्वश्री राहुल देव, देवी प्रसाद त्रिपाठी, तसलीमा नसरीन, अभय कुमार दुबे ने अपने विचार व्यक्त किए। धन्यवाद श्री अरुण माहेश्वरी ने ज्ञापित किया। ☐

'कौन देस को वासी' कृति लोकार्पित

विगत दिनों मुंबई में इंडियन मर्चेंट्स चैंबर के सभागार में श्री विश्वनाथ सचदेव की अध्यक्षता में वरिष्ठ लेखिका श्रीमती सूर्यबाला के पचहत्तरवें जन्मदिवस एवं उनके सद्य:प्रकाशित उपन्यास 'कौन देस को वासी···वेणु की डायरी' के लोकार्पण कार्यक्रम में सर्वश्री मनमोहन सरल, रामजी तिवारी, मालती जोशी, सुधा अरोड़ा, दामोदर खडसे ने अपने विचार व्यक्त किए। संचालन श्रीमती चित्रा देसाई ने तथा कृतज्ञता सुश्री दिव्या ने ज्ञापित की। ☐

'बापू से सीखें' कृति विमोचित

२५ नवंबर को कुरुक्षेत्र के अखिल भारतीय केंद्रीय भवन के सभागार में विद्या भारती संस्कृति शिक्षा संस्थान द्वारा त्रिदिवसीय सांस्कृतिक महोत्सव के आयोजन में हिमाचल प्रदेश के माननीय राज्यपाल आचार्य देवव्रत के मुख्य आतिथ्य में डॉ. वेदमित्र शुक्ल के बाल कविता-संग्रह 'बापू से सीखें' का विमोचन किया गया। ☐

'प्रज्ञा पारमिता' कृति लोकार्पित

१० नवंबर को अंबाजोगाई की दयाल अकादमी के तत्त्वावधान में श्री रंगनाथ तिवारी के नवीनतम उपन्यास 'प्रज्ञा पारमिता' का लोकार्पण किया गया, जिसमें श्री डी.के. गौड़ एवं श्री नानासाहेब गाठाल ने अपने विचार व्यक्त किए। संचालन श्री गोपाल तिवारी ने किया। ☐

विमोचन कार्यक्रम संपन्न

२४ नवंबर को नई दिल्ली के साहित्य अकादेमी सभागार में गुरचरण सिंह के अमृत महोत्सव के शुभ अवसर पर उनकी रचनावली (१२ खंड) का विमोचन किया गया। ☐

तीन कृतियाँ लोकार्पित

विगत दिनों साहित्य अकादेमी में रमणिका फाउंडेशन, ऑल इंडिया ट्राइबल लिटरेरी फोरम व 'नई किताब' द्वारा प्रो. मैनेजर पांडेय की अध्यक्षता में आदिवासियों पर संपादित तीन पुस्तकों 'भारत का आदिवासी स्वर', 'पूर्वोत्तर : आदिवासी सृजन स्वर' एवं 'पूर्वोत्तर का आदिवासी स्वर' का लोकार्पण सर्वश्री पंकज शर्मा, गंगा सहाय मीणा, टेकचंद, वीर भारत तलवार एवं रमणिका गुप्ता द्वारा किया गया। मंचस्थ अतिथियों ने अपने विचार व्यक्त किए। संचालन श्री अजय नावरिया ने किया। ☐

दो पुस्तकें लोकार्पित

१३ दिसंबर को गाजियाबाद में माननीय राज्यपाल श्री राम नाईक द्वारा आचार्य मायाराम पतंग की दो पुस्तकों 'शौर्य पराक्रम की कहानियाँ' एवं 'बेमिसाल मोदी जी' का लोकार्पण किया गया। ☐

'आदि ज्ञान' के अंक का लोकार्पण

विगत दिनों मुंबई में संस्कृति, कला, धर्म, अध्यात्म, दर्शन और साहित्य की त्रैमासिक पत्रिका 'आदि ज्ञान' के 'पितृ देवो भव' अंक का लोकार्पण किया गया। इस अवसर पर पत्रिका के संपादक श्री जीत सिंह चौहान ने बताया कि आज के बदलते परिवेश में परिवार-संस्कृति खतरे में है। आज पिता की भूमिका अधिक चुनौतीपूर्ण हो गई है। इसी को ध्यान में रखकर पितृ देव की अवधारणा पर केंद्रित अंक निकाला गया है। अनेक विद्वज्जनों ने नाना प्रकार से अपने विचार रखे हैं। ☐

श्री दिविक रमेश सम्मानित

विगत दिनों गंगटोक में श्री नगेन साइकिया के मुख्य आतिथ्य में कवि श्री दिविक रमेश को उनकी कृति 'मेरे मन की बाल कहानियाँ' के लिए श्री माधव कौशिक द्वारा 'बाल साहित्य पुरस्कार' से सम्मानित किया गया। ☐

श्री रावेंद्रकुमार 'रवि' सम्मानित

विगत दिनों बाल दिवस के अवसर पर आयोजित समारोह में हरिकृष्ण देवसरे बाल साहित्य न्यास द्वारा श्री रावेंद्रकुमार 'रवि' को उनकी कृति 'वृत्तों की दुनिया' के लिए 'हरिकृष्ण देवसरे बाल साहित्य पुरस्कार' से सम्मानित किया गया। सम्मानस्वरूप उन्हें ७५,००० रुपए की राशि एवं सम्मान-पत्र भेंट किया गया। ☐

श्री राजेश जोशी सम्मानित

विगत दिनों जनकवि नागार्जुन स्मारक निधि द्वारा संचालित जनकवि नागार्जुन स्मृति सम्मान निर्णायक समिति ने बाबा नागार्जुन की पुण्यतिथि की पूर्व संध्या पर आयोजित बैठक में सर्वश्री मैनेजर पांडेय, मंगलेश

डबराल, मदन कश्यप, उपेंद्र कुमार एवं देवशंकर नवीन द्वारा श्री राजेश जोशी को 'जनकवि नागार्जुन स्मृति सम्मान' से सम्मानित करने की घोषणा की। ☐

श्री अमिताव घोष को 'ज्ञानपीठ सम्मान'

१४ दिसंबर को डॉ. प्रतिभा राय की अध्यक्षता में आयोजित बैठक में सर्वश्री गिरिश्वर मिश्र, शमीम हनफी, हरीश त्रिवेदी, सुरंजन दास, पुरुषोत्तम बिलीमाले, चंद्रकांत पाटिल, एस. मणि वालन, सी. राधाकृष्णन, असगर वजाहत, मधुसूदन आनंद द्वारा अंग्रेजी के चर्चित भारतीय उपन्यासकार श्री अमिताव घोष को '५४वाँ ज्ञानपीठ सम्मान' से सम्मानित करने की घोषणा की गई। सम्मानस्वरूप उन्हें ग्यारह लाख रुपए, प्रशस्ति-पत्र एवं वाग्देवी की प्रतिमा भेंट की जाएगी। ☐

'डीडवाना गौरव सम्मान' से सम्मानित

विगत दिनों कोलकाता की श्री डीडवाना नागरिक सभा में श्री बेणुगोपाल बांगड़ की अध्यक्षता में आयोजित दीपावली प्रीती सम्मेलन के अवसर पर भारत के पूर्व न्यायाधीश श्री रमेशचंद्र लाहोटी को 'डीडवाना गौरव सम्मान' से सम्मानित किया गया। श्री ओमप्रकाश बांगड़ ने तिलकार्चन, श्री ईश्वर ध्यावला ने माल्यार्पण, श्री अरुण मल्लावत ने साफा, डॉ. प्रेमशंकर त्रिपाठी ने श्रीफल एवं श्री बेणुगोपाल बांगड़ ने शॉल व स्मृति-चिह्न प्रदान किया। मुख्य अतिथि श्री श्याम सोनी, मुख्य वक्ता डॉ. प्रेमशंकर त्रिपाठी एवं विशिष्ट अतिथि सर्वश्री रमेश बांगड़, ओमप्रकाश पसारी व नारायण पसारी रहे। इस अवसर पर २४ मेधावी विद्यार्थियों को 'स्व. मगनीराम पसारी स्मृति शिक्षा प्रतिभा सम्मान', रजत पदक, प्रशस्ति-पत्र एवं पुस्तक भेंट कर सम्मानित किया गया। संचालन श्री हरीश तिवारी ने तथा धन्यवाद श्री अरुण मल्लावत ने ज्ञापित किया।☐

सम्मान समारोह संपन्न

८ दिसंबर को कानपुर में संस्था 'साहित्य सृजन' द्वारा आयोजित अंतर्महाविद्यालयी व अंतर्विद्यालयी हिंदी भाषा व साहित्य प्रतियोगिता में कु. श्वेता को पाँच हजार रुपए, प्रिया शुक्ला को इक्कीस सौ रुपए, तनु वर्मा, खुशबू यादव, सत्या मौर्या, दीक्षा शुक्ला, प्रीती श्रीवास्तव को ग्यारह सौ रुपए की सम्मान-राशि, प्रतीक-चिह्न व प्रमाण-पत्र देकर सम्मानित किया गया। श्री मनोज कुमार श्रीवास्तव को श्री राजेंद्र राव व डॉ. दया दीक्षित द्वारा 'साहित्य सृजन सम्मान' से अंगवस्त्र, प्रशस्ति-पत्र व रजत प्रतीक-चिह्न प्रदान कर सम्मानित किया गया। इस अवसर पर सर्वश्री दया दीक्षित, मनोज श्रीवास्तव, अनूप शुक्ल, सतीश गुप्त, सुषमा त्रिपाठी, राजेंद्र राव, सुनीता चड्ढा ने अपने विचार व्यक्त किए। संचालन डॉ. आरती त्रिपाठी ने तथा आभार डॉ. दया दीक्षित ने व्यक्त किया। ☐

साहित्य सम्मान से सम्मानित

विगत दिनों भीलवाड़ा में डॉ. भगवानस्वरूप चैतन्य की अध्यक्षता में ग्वालियर साहित्य संस्थान एवं माधव महाविद्यालय के संयुक्त तत्त्वावधान में श्रीमती रेखा लोढ़ा को उनकी काव्य की विभिन्न विधाओं एवं श्री वीरेंद्र कुमार लोढ़ा को हिंदी साहित्य-सेवा के लिए 'साहित्य सम्मान' से सम्मानित किया गया। मुख्य अतिथि श्री सुभाष चंद्र अरोरा एवं विशिष्ट अतिथि सर्वश्री प्रदीप बाजपेयी, शिवकुमार शर्मा व गीता रहे। संचालन डॉ. हेमराज मीणा ने तथा आभार श्री शांति कुमार स्याल ने व्यक्त किया।☐

मूल्यांकन कवि-गोष्ठी संपन्न

२ दिसंबर को हैदराबाद के सीता युद्धवीर पुस्तकालय और शोध संस्थान के तत्त्वावधान में हिंदी प्रचार सभा के सभागार में श्री गजानन पांडेय की अध्यक्षता में गीत चाँदनी की मूल्यांकन कवि-गोष्ठी आयोजित की गई, जिसमें सर्वश्री राजनारायण अवस्थी, चंद्रप्रकाश दायमा, प्रेमलता श्रीवास्तव, कुमुद बाला, सुषमा बैद, विजयलक्ष्मी ए. बसवा, गजानंद संगेवार, उमा देवी सोनी, रूबी मिश्रा, कुंजबिहारी गुप्ता, सूरज प्रसाद सोनी ने रचना-पाठ किया। संचालन श्री गोविंद अक्षय ने तथा आभार सुश्री रत्नकला मिश्र ने व्यक्त किया। ☐

साहित्य अकादेमी पुरस्कार घोषित

५ दिसंबर को नई दिल्ली में साहित्य अकादेमी ने २४ भाषाओं में दिए जानेवाले 'साहित्य अकादेमी पुरस्कार' घोषित किए, जिनमें बांग्ला में संजीव चट्टोपाध्याय की 'श्री कृष्णेर शेष कटा दिन' (कहानी); बोडो में रितुराज बसुमतारी की 'दोंसे लामा' (कहानी); कश्मीरी में मुश्ताक अहमद मुश्ताक की 'आख'(कहानी); मैथिली में वीणा ठाकुर की 'परिणीता'(कहानी); मणिपुरी में बुधिचंद्र हैस्नांबा की 'डमखैगी वाडमदा' (कहानी); नेपाली में लोकनाथ उपाध्याय चापागाईं की 'किन रोयौ उपमा' (कहानी); असमिया में सनंत ताँती की 'काइलेर दिनटो आमार ह'ब'(कविता); कोंकणी में परेश नरेंद्र कामत की 'चित्रलिपी'(कविता); मलयालम में एस. रमेशन नायर की 'गुरुपउर्णमी'(कविता); पंजाबी में मोहनजीत की 'कोने दा सूरज'(कविता); राजस्थानी में राजेश कुमार व्यास की 'कविता देवै दीठ'(कविता); संस्कृत में रमाकांत शुक्ल की 'मम जननी'(कविता); सिंधी में खीमण यू. मुलाणी की 'जिया में टांडा'(कविता); गुजराती में शरीफा वीजलीवाला के 'विभाजननी व्यथा'(निबंध); तेलुगू में कोलकलुरी इनोक के 'विमर्शिनी'(निबंध); डोगरी में इंदरजीत केसर के 'भागीरथ'(उपन्यास); अंग्रेजी में अनीस सलीम के 'द ब्लाइंड लेडीज डीसेंडेंट्स'(उपन्यास); हिंदी में चित्रा मुद्गल के 'पोस्ट बॉक्स नं. २०३—नाला सोपारा'(उपन्यास); संताली में श्याम बेसरा 'जीवी रारेक' के 'मारोम'(उपन्यास); तमिल में एस. रामकृष्णन के 'संचारम'(उपन्यास); उर्दू में रहमान अब्बास के 'रोहजिन'(उपन्यास); कन्नड़ में के.जी. नागराजप्पा की 'अनुश्रेणी-यजामणिके'(आलोचना); मराठी में म.सु. पाटील की 'सर्जनप्रेरणा आणि कवित्वशोध' (आलोचना); एवं ओड़िया में दाशरथि दास की 'प्रसंग पुरुणा भावना नूआ' (आलोचना) को चयनित किया गया। ☐

कवि सम्मेलन संपन्न

२९ नवंबर को चंडीगढ़ में रक्षा लेखा नियंत्रक पश्चिमी कमान के सभागार में आयोजित कवि सम्मेलन में सर्वश्री राकेश सहगल, मुकुल गिल, टेकचंद अतरी, फूलचंद मानव, रवींद्र रवि, प्रवीण सुधाकर, विष्णु सक्सेना, योगेश्वर कौर, नीना दीप व नीना सहर ने काव्यपाठ किया। संचालन श्री के.के. शर्मा व सुश्री मन भर ज्योति ने किया। ☐

६८वीं गोष्ठी संपन्न

२५ नवंबर को सागर के जे.जे. इंस्टीट्यूट में श्री निर्मलचंद निर्मल की अध्यक्षता में आयोजित पाठक मंच की ६८वीं गोष्ठी में मुख्य अतिथि डॉ. श्याम मनोहर सीरोठिया, विशिष्ट अतिथि डॉ. आशुतोष, सर्वश्री सुजाता मिश्र, चंचला दवे, आज्ञा तिवारी, जी.आर. साक्षी, उमाकांत मिश्र ने अपने विचार व्यक्त किए। संचालन श्री हरीसिंह ठाकुर ने एवं आभार श्री संतोष पाठक ने व्यक्त किया। □

गोष्ठी संपन्न

१९ नवंबर को वाराणसी के जगतपुर पी.जी. कॉलेज में डॉ. रमेश चंद की अध्यक्षता में हिंदी विभाग द्वारा आयोजित 'कवि होने का अर्थ : समकालीन संदर्भ में' विषयक गोष्ठी में सर्वश्री वेद प्रकाश पांडेय, नलिनी श्याम कामिल, शंभूनाथ शास्त्री, लक्ष्मी सिंह, राकेश रोशन सिंह, निलय कुमार, संजय कुमार उपाध्याय ने अपने विचार व्यक्त किए। संचालन डॉ. नंदलाल शर्मा ने तथा धन्यवाद डॉ. विनय प्रकाश शर्मा ने ज्ञापित किया। □

गोष्ठी संपन्न

२९ नवंबर को नई दिल्ली के इंद्रप्रस्थ विश्व संवाद केंद्र में 'राम जन्मभूमि है दिव्य स्थान, जिसे बदला नहीं जा सकता' विषय पर सर्वश्री आलोक कुमार, राकेश सिन्हा एवं सुभाष अग्रवाल ने अपने विचार व्यक्त किए। □

दो दिवसीय राष्ट्रीय संगोष्ठी संपन्न

३-४ दिसंबर को प्रयागराज में हिंदुस्तानी एकेडेमी एवं डी. सी.एस.के. पी.जी. कॉलेज के संयुक्त तत्त्वावधान में 'वीर रसावतावर महाकवि श्यामनारायण पांडेय के साहित्य में राष्ट्रीय चेतना' विषय पर दो दिवसीय राष्ट्रीय संगोष्ठी आयोजित की गई, जिसके उद्घाटन सत्र में सर्वश्री शतानंद, अशोक कुमार सिंह, अरविंद कुमार मिश्र ने अपने विचार व्यक्त किए। संचालन डॉ. शर्वेश पांडेय ने किया। प्रो. अजय कुमार की अध्यक्षता में प्रथम सत्र में सर्वश्री संतोष कुमार तिवारी, माधव कृष्ण, वेदप्रकाश उपाध्याय ने अपने विचार व्यक्त किए। संचालन डॉ. शिखा तिवारी ने किया। डॉ. विजयानंद की अध्यक्षता में द्वितीय सत्र में डॉ. शिखा तिवारी एवं डॉ. अखिलेश शर्मा ने अपने विचार व्यक्त किए। संचालन डॉ. चंद्रप्रकाश राय ने किया। प्रो. सुधाबाला की अध्यक्षता में तृतीय सत्र में सर्वश्री सत्यप्रिय पांडेय, आनंद प्रकाश द्विवेदी व जितेंद्र पांडेय ने अपने विचार व्यक्त किए। संचालन डॉ. शर्वेश पांडेय ने किया। इस अवसर पर श्री ओमधीरज की अध्यक्षता में आयोजित कवि-सम्मेलन में सर्वश्री अशोक सिंह, हिमांशु उपाध्याय, कमलेश राय, मृत्युंजय तिवारी, रवीश तिवारी, पंकज पख, अजय सिंह, रामनिवास राय, जमाली, शतानंद ने काव्यपाठ किया। संचालन श्री बादशाह तिवारी ने तथा आभार डॉ. उदय प्रताप सिंह ने व्यक्त किया। श्री गौरीशंकर खंडेलवाल एवं डॉ. अरविंद कुमार मिश्र ने कवियों को अंगवस्त्र व स्मृति चिह्न प्रदान कर अभिनंदित किया। प्रो. सिद्धार्थ शंकर की अध्यक्षता में चतुर्थ सत्र में सर्वश्री जगदंबा प्रसाद दूबे, रामप्रवेश सिंह, सुभाष सिंह, उपेंद्र दूबे ने अपने विचार व्यक्त किए। डॉ. उदय प्रताप सिंह की अध्यक्षता में समापन सत्र में मुख्य अतिथि डॉ. सुधा बाला, विशिष्ट अतिथि डॉ. अरविंद कुमार मिश्र व प्रो. सिद्धार्थ शंकर एवं सर्वश्री त्रिभुवन नारायण पांडेय, जितेंद्र पांडेय, रामानंद पांडेय, प्रभन्जन पांडेय ने अपने विचार व्यक्त किया। श्रीमती रमावती पांडेय को ग्यारह हजार रुपए की राशि, पुष्पगुच्छ, प्रतीक चिह्न एवं शॉल ओढ़ाकर डॉ. उदय प्रताप सिंह एवं श्री अरविंद कुमार मिश्र द्वारा सम्मानित किया गया। □

गोष्ठी संपन्न

८ दिसंबर को कानपुर में 'श्री शंकर दयाल सिंह की कुछ यादें' विषय पर आयोजित गोष्ठी में सर्वश्री अरुण प्रकाश अग्निहोत्री, विद्या विंदु सिंह, करुणा पांडेय, राजेंद्र उपाध्याय ने अपने विचार व्यक्त किए। संचालन एवं धन्यवाद डॉ. प्रदीप दीक्षित ने किया। □

समीक्षा गोष्ठी संपन्न

९ दिसंबर को भोपाल में साहित्य अकादमी व म.प्र. संस्कृति परिषद् द्वारा जे.जे. इंस्टीट्यूट में श्री लक्ष्मीनारायण चौरसिया की अध्यक्षता में आयोजित सागर पाठक की ६९वीं समीक्षा गोष्ठी में श्री सूर्यनाथ सिंह की पुस्तक 'नींद क्यों नहीं आती रात भर' पर सर्वश्री हरीसिंह ठाकुर, सुनीला सराफ, निर्मलचंद निर्मल, गजाधर सागर, गोवर्धन पटेरिया, श्याम मनोहर सिरोठिया, चंचला दवे, नौनिहाल गौतम, शरद सिंह ने अपने विचार व्यक्त किए। संचालन श्री उमाकांत मिश्र ने तथा आभार श्री वृंदावनराय सरल ने किया। □

राष्ट्रीय संगोष्ठी संपन्न

१२ दिसंबर को भोपाल के माखनलाल चतुर्वेदी राष्ट्रीय पत्रकारिता एवं संचार विश्वविद्यालय में 'नए भारत के लिए प्रभावी रणनीति : संभावनाएँ और चुनौतियाँ' विषय पर आयोजित दो दिवसीय राष्ट्रीय संगोष्ठी में श्री डी.आई.एम. शोभन चौधरी के मुख्य आतिथ्य में सर्वश्री राजेश तिवारी, डी.आर. बधवार, जगदीश उपासने, धीरेन दत्ता, विश्वास घूशे, नितिश दुबे, दीपक श्रीवास्तव, अमिताभ कोडवानी, हेड पराग दुबे, वी.पी. सिंह ने अपने विचार व्यक्त किए। □

परिचर्चा आयोजित

७ दिसंबर को दिल्ली पब्लिक लाइब्रेरी में 'भूमि का उचित मूल्यांकन' विषय पर आयोजित परिचर्चा में प्रो. बी.एल. पंडित एवं डॉ. लोकेश शर्मा ने अपने विचार व्यक्त किए। □

भेंट समारोह संपन्न

विगत दिनों नई दिल्ली के केंद्रीय हिंदी संस्थान में डॉ. कमल किशोर गोयनका को प्रो. इंद्रनाथ चौधरी द्वारा हिंदी विश्वकोश के 'गणित खंड' की प्रथम प्रति भेंट की गई। इस अवसर पर डॉ. प्रमोद कुमार शर्मा एवं प्रो. देवेंद्र शुक्ल ने अपने विचार व्यक्त किए। □

अभिनंदन ग्रंथ समर्पण समारोह संपन्न

२५ नवंबर को जयपुर में श्री नवरंगलाल टिबरेवाल की अध्यक्षता

में डॉ. रामगोपाल शर्मा 'दिनेश' को 'तुलसी मानस संस्थान' की ओर से नयनाभिराम अभिनंदन ग्रंथ 'दिनेशायन', अभिनंदन-पत्र तथा संक्षिप्त परिचय-पुस्तिका भेंट किया गया। मुख्य अतिथि श्री त्रिलोकीनाथ चतुर्वेदी एवं विशिष्ट अतिथि डॉ. आर.के. कोठारी व श्री प्रसन्न खमेसरा थे। डॉ. चंद्रपाल शर्मा एवं डॉ. आनंदपाल वाजपेयी ने अपने विचार व्यक्त किए। धन्यवाद डॉ. रामशरण गौड़ एवं प्रो. रामलक्ष्मण गुप्त ने ज्ञापित किया। ☐

व्याख्यानमाला आयोजित

६ दिसंबर को भोपाल में साहित्य अकादमी, म.प्र. संस्कृति परिषद् द्वारा पं. मोतीलाल नेहरू उ.मा. शाला के सभागार में डॉ. सुरेश आचार्य की अध्यक्षता में आयोजित पद्माकर स्मृति समारोह में 'प्रकृति और पद्माकर' विषयक व्याख्यानमाला में सर्वश्री नरेंद्र दुबे दमोह, बलिराम अहिरवार, उमेश कुमार सिंह, जयश्री लुखे, शिवरतन यादव ने अपने विचार व्यक्त किए। इस अवसर पर श्री मणीकांत चौबे को उनकी साहित्य सेवा और पद्माकरजी के प्रति समर्पण भाव के लिए सम्मानित किया गया। साथ ही निबंध प्रतियोगिता में भाग लेनेवाले विश्वविद्यालय, महाविद्यालय और स्कूली छात्र-छात्राओं को प्रमाण-पत्र भेंट किए गए। संचालन डॉ. अंजना चतुर्वेदी तिवारी ने तथा आभार डॉ. ऋषभ भारद्वाज ने व्यक्त किया। ☐

कला-साहित्य उत्सव संपन्न

१० दिसंबर को जयपुर के म्यूजियम ऑफ इंडियन आर्ट में श्री ईश मधु के मुख्य आतिथ्य एवं श्री राजीव अरोड़ा के विशिष्ट आतिथ्य में सर्वश्री रमेश खत्री, लोकेश कुमार सिंह एवं नीलिमा टिक्कू द्वारा सर्वश्री मुकेश कुमार, सोनिया कराडिया, मोहम्मद समीर खान को नकद पुरस्कार के लिए, बजरंग सोनी, चित्रा भारद्वाज, हर्षवर्धन को उत्कृष्ट रचना के लिए, अनीता मिश्रा, एस. भाग्यम शर्मा, कविता मुखर को कहानी पाठ के लिए सम्मानित किया गया। संचालन श्री प्रबोध कुमार गोविल ने किया। ☐

अंतरराष्ट्रीय सम्मेलन संपन्न

३० नवंबर को कायरो के पिरामिड पार्क में डॉ. सुषमा सिंह की अध्यक्षता में आयोजित विश्व मैत्री मंच के नौवें अंतरराष्ट्रीय सम्मेलन में श्री विजय कांत के मुख्य आतिथ्य एवं सुश्री प्रमिला वर्मा, सुनीता राजपाल व माला गुप्ता के विशिष्ट आतिथ्य में सर्वश्री संतोष श्रीवास्तव, विद्या सिंह, ज्योति गजभिए, प्रणव शास्त्री, क्षमा पांडे, पूनम तिवारी ने अपने विचार व्यक्त किए। इस अवसर पर सुश्री रानी मोटवानी एवं रेखा कक्कड़ की पुस्तकों का विमोचन भी किया गया। सुश्री मधु सक्सेना ने 'गाँव की धोबन' का एकल नाट्य प्रस्तुत किया। संचालन सुश्री अंजना श्रीवास्तव एवं उमा तिवारी ने किया। ☐

श्रद्धांजलि सभा आयोजित

२३ नवंबर को कोलकाता के ओसवाल भवन में श्री शार्दूल सिंह की अध्यक्षता में स्व. रुगलाल सुराणा जैन की स्मृति में एक विराट् श्रद्धांजलि आयोजित की गई, जिसमें सर्वश्री प्रेमशंकर त्रिपाठी, अरुण प्रकाश मल्लावत एवं अन्य उपस्थित विद्वानों ने शोक प्रस्ताव का वाचन किया। संचालन श्री बंशीधर शर्मा ने किया। ☐

श्रद्धांजलि सभा आयोजित

विगत दिनों श्री अच्युतानंद मिश्र की अध्यक्षता में श्री श्रीरंजन सूरिदेव के निधन पर आयोजित श्रद्धांजलि सभा में सर्वश्री कमलकिशोर गोयनका, विंदेश्वर पाठक, भुवनेश्वर प्रसाद गुरुमैता, अरुण कुमार भगत, इंद्र सेंगर, प्रियेंदु प्रियदर्शी, गुंजन अग्रवाल ने अपने विचार व्यक्त किए। संचालन डॉ. अशोक कुमार 'ज्योति' ने तथा धन्यवाद श्री भारत सिंह रावत ने ज्ञापित किया। ☐

प्रविष्टियाँ आमंत्रित

विद्याश्री न्यास द्वारा प्रतिवर्ष आयोजित होनेवाली राष्ट्रीय संगोष्ठी एवं भारतीय लेखक-शिविर इस वर्ष भारतीय दार्शनिक अनुसंधान परिषद्, नई दिल्ली; साहित्य अकादेमी, नई दिल्ली; उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान एवं शिक्षा शास्त्र विभाग, महात्मा गांधी काशी विद्यापीठ के सहयोग से 'शिक्षा, दर्शन और समाज : प्रासंगिक विमर्श के प्रमुख आयाम' विषय पर केंद्रित की जाएगी। 'कुशलता और ज्ञान की चुनौती', 'शिक्षा की अंतर्वस्तु', 'शिक्षा के संदर्भ', 'माध्यम का प्रश्न' एवं 'समग्र विकासमूलक शिक्षा' विषयों से संबंधित शोध-आलेख १० जनवरी, २०१९ तक महात्मा गांधी काशी विद्यापीठ, वाराणसी, दूरभाष ९४५१५९९६५१ एवं अभिलाषा कॉलोनी, निकट एक्सेल आवर, वरुणापुल, नदेसर, वाराणसी, इमेल-vidyashreenyas2006@gmail.com पर भेज सकते हैं। ☐

प्रविष्टियाँ आमंत्रित

रचनाकार.आर्ग लघुकथा लेखन पुरस्कार-२०१९ में भाग लेने के लिए रचनाएँ भेजने के नियम (कृपया इस लिंक को देखें व सूक्ष्मता से अध्ययन करें-http://www.rachanakar.org/2005/09/blog-post_28.html)। इस आयोजन के लिए एक लेखक के द्वारा, एकाधिक बार में, एक से अधिक, परंतु अधिकतम ५ लघुकथाएँ (अधिकतम ५०० शब्दों में) प्रकाशनार्थ ३१ जनवरी, २०१९ तक भेजी जा सकती हैं। परिणामों की घोषणा मार्च २०१९ के प्रथम सप्ताह में की जाएगी। ☐

साहित्यिक क्षति

श्री हिमांशु जोशी नहीं रहे

२३ नवंबर को दिल्ली में हिंदी के प्रसिद्ध साहित्यकार श्री हिमांशु जोशी का निधन हो गया। उनका जन्म ४ मई, १९३५ को उत्तराखंड के चंपावत जिले के जोस्यूड़ा गाँव में स्वतंत्रता सेनानी के घर हुआ था। वे लंबे समय तक कादंबिनी, साप्ताहिक हिंदुस्तान, वागर्थ और शांतिदूत के संपादकों में रहे और मूलत: कथाकार के रूप में सक्रिय रहे। उनके अनेक उपन्यास, कहानी-संग्रह, यात्रा-वृत्तांत के अतिरिक्त बाल साहित्य की पुस्तकें चर्चित रहीं।

साहित्य अमृत परिवार की ओर से दिवंगत आत्मा को भावभीनी श्रद्धांजलि।